अनुक्रमणिका

	प्रस्तावना	*7*
1.	साईं : सदेह से सदैव	*11*
2.	जो जीवन बदल दे, वही असली चमत्कार है	*14*
3.	साईं के स्मरण से शुरू करो हर काम...	*18*
4.	मोह-माया के जाल से निकालते हैं साईं	*24*
5.	अंधेरा जब घना हो, उजाला पास ही होता हैं	*29*
6	जीने की कला सिखाते हैं साईं	*35*
7	मंगलाचरण से साईं की ओर...	*38*
8	साईं गंगा हैं, जिनके स्मरण से दूर होते हैं सारे पाप...	*42*
9	साईं बदल देते हैं	*47*
10	साईं मन में विराजे हैं	*53*
11	साईं की शरण में जाने का मतलब समझें	*58*
12	साईं का प्रकट होना	*66*
13	साईं सुधारते हैं	*73*
14	साईं के भक्त अकारण भी खुश रह लेते हैं	*86*
15	साईं का हम से जन्मों का नाता है	*91*
16	भोगी, उपयोगी	*97*
17	बीमारों की सेवा बड़ा परोपकार	*101*
18	उदी सिखाती जीने का रास्ता	*105*
19	जिसकी जैसी नीयत, वैसी उसकी बरकत	*110*

20	मन की तरंग को साध लो	*116*
21	सुनो, गाओ और याद करो	*122*
22	पैर पखारो, अर्चन करो या वंदन करो	*128*
23	चाकरी, मित्रता और स्वयं को देकर साईं को पा लो।	*141*
24	मन के विकार मिटाते साईं	*147*
25	ऋण चुकाकर मुक्त हो जाओ	*158*
26	गुरू दत्त दिगंबर तक शरणम्	*163*
27	भोजन के बारे में बाबा की सीख	*167*
28	गुरू की कृपा को मंत्र से नहीं पा सकते	*174*
29	कर्म पर ही तुम्हारा अधिकार है	*178*
30	मर्यादा में रहना सिखाते साईं	*185*
31	भाग्य भरोसे बैठकर न बदले कभी संसार	*189*
32	और साईं अजर-अमर हो गये	*192*

प्रस्तावना

बाबा भली कर रहे... एक अत्यंत सार्थक प्रयास

।। श्री साईं ।।

भारतीय संतों की सूची में अग्रणी, शिर्डी के श्री साईंबाबा का स्थान आज पूरे विश्व के मानचित्र पर रेखांकित हो गया है। प्रत्येक संत अपने तौर-तरीकों से मानव कल्याण के कार्य से जुड़ा है। उसी प्रकार शिर्डी के श्री साईंबाबा ने श्रद्धा और सबुरी का सन्देश देकर मानव जाति का कल्याण किया है। आज श्री साईंबाबा के समाधी-स्थान को सर्वधर्म समभाव के प्रतीक स्वरूप मान्यता प्राप्त हो चुकी है। कै. गोविंद रघुनाथ दाभोलकर उर्फ़ हेमाडपंत ने श्री साईंबाबा सच्चरित्र रूपी 'श्री साईंबाबा' ग्रंथ को दोहे के रूप में साकार किया है। श्री साईंबाबा संस्थान विश्वस्त व्यवस्था ने इस ग्रंथ को 19 विभिन्न भाषाओं में अनुवादित किया है। श्री साईंबाबा के प्रचार व प्रसार में इस ग्रंथ का बहुत ही महत्वपूर्ण सहभाग रहा है। श्री साईं भक्तों के लिये यह ग्रंथ गीता-ज्ञानेश्वरी है।

भोपाल के निवासी श्री सुमीत पोन्दा, श्री साईं के असीम भक्त है। वे पिछले कई वर्षो से हर माह शिर्डी में श्री साईं जी के दर्शनार्थ उपस्थिति दे रहे है। उन्होंने श्री साईं चरित्र की अमृत कथा का आयोजन शुरू किया है। इसका शुभारंभ 2014 में भोपाल में सर्वप्रथम किया गया। उसके पश्चात श्री साईंबाबा संस्थान विश्वस्त व्यवस्था, शिर्डी द्वारा उनके अमृत कथा को गुरू पूर्णिमा उत्सव का हिस्सा बनाकर सम्मिलित किया। उनकी मधुर आवाज और सहयोगियों के सहकार्य से इस कार्यक्रम को श्री साईं भक्तों द्वारा सराहा गया। उनकी इस अमृतकथा के कार्य में उनकी पत्नी

श्रीमती सेजल पोन्दा का भी विशेष सहयोग रहा है।

श्री सुमीत पोन्दा उच्च विद्या विभूषित होकर भी श्री साईं भक्ति में तल्लीन हो चुके है। आज के व्यस्ततम जीवन में श्री पोन्दा जी अपनी इस कथा के माध्यम से श्री साईंबाबा के प्रचार-प्रसार का काम बड़ी श्रद्धाभाव से कर रहे है।

भोपाल के मंजुल प्रकाशन द्वारा इस श्री साईं अमृत कथा को प्रकाशित किये जाने पर मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है। इस पुस्तक का श्री साईं भक्त हृदय से स्वागत करेंगे, इसमें कोई संदेह नहीं है।

श्री साईं चरित्र के अध्याय क्रमांक 3 में निम्न दोहे का उल्लेख किया गया है, जिसका हिन्दी में रूपांतर निम्नानुसार हैः

जो मेरी लीला का करे गान।
मेरा चरित्र, मेरे भजन।
रहता खड़ा चहुँ ओर निरन्तर।
सदा उनके समीप ही ।।12।।

जो जो भक्त मेरे प्रति।
जीव-प्राण समर्पिती।
उन्हें भी इस कथा श्रवण प्रति।
होगा आनंद प्राप्त ।।13।।

करे जो कोई मेरा कीर्तन।
करूँ प्रदान उसे मैं आनंदधन (परिपूर्ण आनंद)।
नित्य सौख्य समाधान।
सत्य वचन मानिये इसे ।।14।।

जो आवे मेरी अनन्य शरण।
विश्वास युक्त हो करे मेरा भजन।
मेरा चिंतन मेरा स्मरण।
उसका उद्धार करना व्रत मेरा ।।15।।

मेरा नाम मेरी भक्ति।
मेरा दफ़्तर मेरी पोथी।
मेरा ध्यान अक्षत चित्ती।
विषय स्फूर्ति कैसी उसे ।।16।।

मोहन ज. यादव
(जनसंपर्क अधिकारी)
श्री साईंबाबा संस्थान विश्वस्त व्यवस्था, शिर्डी

1

साईं : सदेह से सदैव

स्मरण करके देख लो साईंनाथ का नाम।
स्वतः पूरे हो जाएंगे बिगड़े सारे काम।।

ईश्वर कौन है? ज़िंदगी जीने का सही तरीका क्या है? धर्म क्या है? कर्म क्या है? पाप क्या है? पुण्य क्या है? ऐसे कई सारे प्रश्न हैं, जिनका साईं ने अपने अलहदा तरीके से उत्तर दिया है। साईं के बारे में जितना भी कहा जाए कम है। उनके बारे में कोई बहुत कुछ कह कर भी कुछ कह नहीं सकता। साईं जब तक सशरीर पृथ्वी पर मौजूद रहे, लोगों को, भक्तों को उनकी शंकाओं-कुशंकाओं से उबारते रहे, और आज, जब साईं को समाधि लिए हुए लगभग सौ वर्ष होने को आए हैं, साईं को उनके भक्त हमेशा अपने साथ, अपने पास ही पाते हैं।

कुछ लोग कहते हैं कि साईं ईश्वर का अवतार थे। तो कुछ का मानना है कि वे चमत्कारी महापुरुष थे, संत थे, फ़क़ीर थे, महापुरूष थे, औलिया थे या कुछ और! साईं क्या थे? उसे समझने के लिए हमें अपने अंतर्मन में झांकना होगा, क्योंकि साईं ये सभी कुछ थे। वे हमारे मन में बैठी भावनाएं थे, जो हमारे ही भाव के ज़रिये अपने आप को अभिव्यक्त करते थे।

साईं के परमभक्त श्री गोविंदराव रघुनाथ दाभोलकर, जिन्हें बाबा हेमाडपंत कहकर पुकारते थे, ने अपने दिव्य ग्रंथ श्री साईं सच्चरित्र में बाबा की लीलाओं का विस्तार से वर्णन किया है। जिन्होंने भी यह अद्‌भुत

ग्रंथ, पवित्र ग्रंथ पढ़ा है, वे भली-भांति जानते समझते हैं कि बाबा ने मानव अवतार क्यों लिया था?

हेमाडपंत ने यह महाग्रंथ मराठी भाषा में लिखा था। बगैर बाबा की आज्ञा के उन पर एक शब्द भी लिख पाना मुमकिन नहीं। कलम तभी चलेगी, दिमाग तभी काम करेगा, जब बाबा आपको आज्ञा दें। बाबा की ही आज्ञा थी, उनके भक्तों का अनुग्रह था कि मैं बाबा की कहानी, उनकी लीलाएँ, उनकी बातें सरल भाषा ही में नई पीढ़ी तक पहुँचाऊं। कई बार कोशिश की, हर बार अल्पविराम लगता रहा, लेकिन जब बाबा ने आज्ञा दी, तब यह पुस्तक लिखने का प्रयास किया।

समय के साथ तमाम चीज़ें बदलती हैं। जीवनशैली में व्यापक बदलाव आता है। बोल-चाल के तौर-तरीके बदलते हैं। बाबा के बारे में कौन नहीं जानता? लेकिन सिर्फ़ जानना ही काफ़ी नहीं है। ईश्वरीय अवतार बाबा किस प्रयोजन से मानव अवतार में आए? वे अपने भक्तों एवं आम लोगों को क्या संदेश देते थे, देना चाहते हैं, इसे ध्यान से समझना भी आवश्यक है। नई पौध, युवा पीढ़ी के बीच बाबा के संदेश सरल और सहज भाषा एवं उदाहरणों के साथ पहुँचे, यह पुस्तक उसी दिशा में बाबा की रज़ा और प्रेरणा से एक विनम्र प्रयास है।

बाबा के अवतरण 28 सितम्बर 1835 और समाधि के दरमियान उनका सान्निध्य पाने वाले लोगों ने जो कुछ देखा-सुना और पाया अथवा महसूस किया, यह पुस्तक उन्हीं सत्य घटनाओं से जीवन मूल्य सार्थक बनाने की, सरल तरीके से शब्दों में पिरोने की एक छोटी-सी, पहली कोशिश है।

माना जाता है कि बाबा महाराष्ट्र के परभणी ज़िले के पाथरी गाँव में जन्मे। हालांकि बाबा की लीला अपरम्पार है, वे कहां से अवतरित हुए, यह ठीक से कोई नहीं जानता, उनके ने अपनी ज़िंदगी का लंबा वक्त, महानिर्वाण तक शिर्डी में गुज़ारा उनके के पावन चरणों का प्रतिफल ही है जो शिर्डी आज दुनिया में एक शक्तिशाली तीर्थ स्थल के तौर पर

जाना-पहचाना जाता है। यहां जो मुराद लेकर आता है, खाली हाथ नहीं जाता। इस पुस्तक की रचना भी हमारे लिए एक मुराद पूरी होने जैसा ही है।

हेमाडपंत ने बाबा की जीवनी को कहानियों के रूप में अपनी पुस्तक श्री साईं सच्चरित्र में उतारा है। ये वो सच्ची घटनाएं हैं, जिन्होंने मानव जगत को एक नई दिशा दी। इस पुस्तक में इन्हीं कहानियों का अलग पुट आपको दिखाई पड़ेगा।

आमतौर पर महापुरूषों द्वारा असंभव कार्यों को संभव बनाने की क्रिया को चमत्कार माना जाता है लेकिन ऐसा प्रत्येक चमत्कार किसी न किसी ने संस्कार डालने के लिए इन संत, महात्माओं द्वारा रचा जाता है और हम साधारण बुद्धि वाले उनके भक्त, इन्हें किसी जादुई कारनामें जैसा मानते हैं और इनके रचे जाने के पीछे का कारण हमारी सामान्य बुद्धि से परे ही रहता है।

यह किताब और श्री साईं अमृत कथा इसी दिशा में, साईं बाबा के चमत्कारों के पीछे निहित संदेश को लोगों तक पहुँचाने का एक सद्प्रयास है जो बाबा की ही कृपा से संभव हो रहा है। इसका संभव होना भी किसी चमत्कार से कम नहीं है। हो सकता है कि यह हम में संस्कार डालने की बाबा की मंशा हो।

बाबा भली कर रहे

2

जो जीवन बदल दे, वही असली चमत्कार है

मन का क्या है, भागता रहता चारों ओर।
करो समर्पित साईं को, मिले तभी उसे ठौर।।

जीवन में जो अप्रत्याशित और असम्भावी होता है, हम उसे चमत्कार कहते हैं। जिसके बारे में कभी हमने सोचा नहीं, और यदि कल्पना की भी तो, उन्हें साकार करने की हमारे अंदर शक्ति नहीं थी। उनके प्रयोग के तौर-तरीके भी हमें नहीं पता थे।

मतलब, जो हम अपने जीवन में साक्षात नहीं कर पाए, अगर कोई दूसरा उसे करके दिखाता है, तो वो हमारे लिए चमत्कार हो जाता है। हम उस व्यक्ति को असाधारण व्यक्तित्व मानने लगते हैं। उसे पूजने लगते हैं। उसकी कही बातों और सलाह-मशवरों पर अमल करने लगते हैं और हमें करना भी चाहिए, अगर उस व्यक्ति के चमत्कार समाज को एक नई दिशा देते हों, देश के हित में हों, जीवन में सकारात्मक बदलाव लाते और संसार को संस्कारित करने की पहल भी करते हों।

बाबा ऐसे ही चमत्कारिक संत थे। वे प्रयोगधर्मी थे। वे एक ऐसे महापुरुष थे, जो लोगों को सच के रास्ते पर चलने का मार्ग दिखाते थे। वे एक ऐसे शिक्षक थे, जो अपने भक्तों को अच्छाई का पाठ पढ़ाते थे। उन्हें एक ऐसे वैज्ञानिक के तौर पर भी याद कर सकते हैं, जो अपने नये-नये प्रयोग से लोगों की आँखों पर पड़े अज्ञानता के पर्दे को हटा देते थे।

साईं बाबा ने भी वही चमत्कार किए। उनका आशीर्वाद, सान्निध्य हमें वही सुखद अनुभूति देता है, जैसी हमें अपने पुरखों के स्मरण के दौरान मिलती है। बाबा का सम्पूर्ण व्यक्तित्व चमत्कारिक था। उनके भीतर एक चुम्बकीय प्रभाव था, जो हमें खींच लेता था। चुम्बक बेहद प्रभावशाली तत्व है, जो पृथ्वी को अपनी धुरी पर घूमने में सहायक होता है और दिशा-निर्धारण में हमारी सहायता करता है। पृथ्वी के अपनी धुरी पर घूमने से ही दिन और रात का आभास होता है। पृथ्वी का चुम्बकीय प्रभाव मानव जन पर स्वास्थ्य के अनुकूल प्रभाव डालता है।

बाबा का चुम्बकीय प्रभाव हमारे मन में भी विद्युत पैदा करता है। सकारात्मक ऊर्जा का ऐसा करंट दौड़ाता है, जो हमारे तंत्रिका तंत्र को अच्छे कर्मों के लिए उद्वेलित करता है। मन को शांत करता है, तन को स्फूर्ति देता है। यानी अंदर और बाहर दोनों से हमें निर्मल कर देता है।

जब तक इंसान चाँद पर नहीं पहुँचा था, तब तक चाँद से टुकड़ा तोड़कर लाना एक कल्पना मात्र थी। लेकिन जब इन्सान ने चाँद पर कदम रखा, वहां की माटी और पत्थर धरती पर ले आए, तो हमने उसे चमत्कार कहा। यह इंसान का किया चमत्कार था। इंसान लगातार चमत्कार कर रहा है। सारे चमत्कारों की जनक सकारात्मक ऊर्जा है, जो हर एक इंसान के भीतर निहित है लेकिन उस ऊर्जा का प्रयोग करना एक कला है और अपने अंदर की इस कला को परखना एक चुनौती। बाबा का सान्निध्य हमें इसी कला में पारंगत करता है। हमें इस चुनौती के लिए तैयार करता है।

चमत्कार को सभी नमस्कार करते हैं। लेकिन बाबा आज भी जो चमत्कार करते आ रहे हैं, उन्हें सिर्फ़ सलाम ठोककर अपने-अपने रास्ते बढ़ लेना काफ़ी नहीं है। उन चमत्कारों के पीछे छिपे मकसद को जानना-पहचानना और उन्हें आत्मसात करना अत्यंत आवश्यक है, तभी हम स्वयं को बदल सकते हैं, समाज में बदलाव लाने की बात सोच सकते हैं, दुनिया को बदलने की पहल कर सकते हैं।

तब की बात...

बात 1910-1911 की है। शिर्डी के आसपास के क्षेत्र में हैजा फैला हुआ था। यह बीमारी कहीं शिर्डी तक न पहुंच जाए, इसे लेकर लोग परेशान और डरे हुए थे। एक दिन लोगों ने देखा बाबा मस्ज़िद में बैठे चक्की पर गेंहू पीस रहे हैं। यह देखकर लोगों को आश्चर्य होना लाजिमी था क्योंकि दो-तीन रोटी खाने वाले बाबा को ढेर-सारे आटे की क्या आवश्यकता पड़ी? ऐसा अचरज भरा दृश्य लोगों के मन में किस्म-किस्म के सवाल पैदा करने लगा। कुछ महिलाओं ने बाबा को उठाकर गेंहूँ पीसने का काम अपने जिम्मे ले लिया, लेकिन उनकी नीयत कुछ और थी। मौका पाकर वे आटा अपने साथ लेकर जाने लगीं। बाबा ने उन्हें फटकारा। आदेश दिया कि यह आटा गाँव की मेढ़ (सरहद) पर बिखेर दिया जाए। लोगों को आश्चर्य तो हुआ लेकिन बाबा की आज्ञा को कोई भला कैसे टाल सकता था? ऐसा ही किया गया और आज भी सरकारी रिकॉर्ड में निहित है कि उस समय शिर्डी हैजे के प्रकोप से अछूता रहा जबकि अड़ोस-पड़ोस के सारे गाँवों में हैजे से कई रहवासी प्रभावित हुए थे।

वर्षों से एक कहावत चली आ रही है, गेंहूँ के साथ घुन पिसता है। बाबा चक्की में गेंहूँ नहीं, हैजा रूपी घुन पीस रहे थे। यह बाबा की लीला थी। व्यक्ति में अपार ऊर्जा निहित होती है। वो इसी की शक्ति से असंभव को संभव में बदलता है। लेकिन बाबा तो स्वयं ऊर्जा का स्त्रोत थे। इसलिए उनके लिए कोई भी काम असंभव नहीं था और आज भी नहीं है।

साईं से सीधी सीख...

मनुष्य का जीवन भी एक चक्की स्वरूप ही है जिसमें नीचे का पाट संस्कारों का है, जो स्थिर रहते है। ऊपर का पाट, कर्मों का है जो चलायमान रहते है। कर्म एक सतत् प्रक्रिया है। लकड़ी की मुठिया ज्ञान है जिसको पकड़ कर चलने से दिशा मिलती है। गेहूँ हमारा साधन है और आटा प्राप्ति। संस्कार को आधार बनाकर जो कर्म मेहनत से और पूरे

मनोयोग से, ज्ञान का साथ लेकर लोगों की भलाई के लिए किए जाते हैं, उनसे हमारे प्रयास सार्थक बन जाते हैं। ऐसे ही प्रयासों से हम अपने जीवन को सार्थकता दे सकते है और अमरत्व प्राप्त कर सकते हैं।

बाबा भली कर रहे

3

साईं के स्मरण से शुरू करो हर काम...

तन को मिलती ताजगी, निर्मल होता मन।
ऐसे साईंनाथ को, शत-शत् करो नमन।।

साईं यानी ज्ञान गुरु, जिनका स्मरण मात्र हमारे चक्षु खोल देता है। दिमाग की बत्ती जला देता है और हमें हमारे अच्छे-बुरे का आभास करा देता है। तो आइए, हम सर्वप्रथम स्वयं को बदलने का श्रीगणेश करें। बाबा का स्मरण करें। जब भी हम कोई नई शुरुआत करते हैं, श्रीगणेश को याद करते हैं। गृह-प्रवेश करने से पहले श्रीगणेश का स्मरण करते हैं, नौकरी के लिए इंटरव्यू देने जाते हैं, तो श्रीगणेशाय नमः बोलते हैं। परीक्षा देने से पहले गणपति का स्मरण करते हैं। ठीक वैसे ही बाबा को याद करिए। साईं सबका भला करेंगे।

वक्रतुंड महाकाय, सूर्यकोटि समप्रभः।
निर्विघ्नम् कुरूमे देव, सर्वकार्येषु सर्वदा।।

काल करे सो आज कर, आज करे सो अब, इसलिए ख़ुद को बदलने की प्रक्रिया इसी पल से शुरू करते हैं। जिस तरह हम सर्वप्रथम गौरी पुत्र गणेश का वंदन करते हैं। ठीक वैसे ही बाबा का स्मरण भी करें। जिस प्रकार गणपति विघ्न विनाशक हैं, उसी प्रकार साईं भी दुःखहर्ता हैं, सुखदाता हैं। अब ऐसा महसूस कीजिए कि हम साईं के सान्निध्य में हैं

और वे हमें साक्षात नज़र आ रहे हैं। आइए, प्रार्थना करते हैं कि हे बाबा! तुम ही मेरे गणपति हो, तुम आओ और मेरे सारे संकट हर लो।

श्रीगणेश के बाद हम श्वेतवर्णी हंसवाहिनी माँ सरस्वती का आह्वान करते हैं। हम उनकी बंदगी करते हैं, ताकि वे हमारी जीभ को इतना संतुलित कर दें कि जाने-अनजाने भी वो हमारे वश में रहे, संयम में रहे। बाबा का स्मरण भी, जिव्हा को तमाम दोषों से दूर करता है। उसे संयम में लाता है। अच्छा बोलने के तौर-तरीके सिखाता है। व्यक्ति के तमाम महत्वपूर्ण अंगों में जिव्हा का अपना एक अलग महत्व है। वो ज़रा-सी डगमगाई कि सारा जीवन नर्क हो जाता है। बाबा का स्मरण उसे शब्दों को नाप-तौलकर बोलने की कला सिखाता है। स्मरण कीजिए और कहिए, 'हे साईं! तुम ही तो हमारी सरस्वती हो। आओ हमारी जिव्हा पर विराजो और उसे पवित्रता प्रदान करो।'

या देवी सर्व भूतेषु, बुद्धि रूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः।।

माँ सरस्वती के बाद हम स्मरण करते हैं संसार के पालनकर्ता भगवान विष्णु का। भगवान ने स्वयं कहा था, मैं समय-समय पर संतों के रूप में इस धरा पर आऊंगा, लेकिन मैं भक्तों के आचार-विचार में सदा मौजूद रहूँगा। बाबा हमारे रक्त में बहते वही आचार-विचार हैं। वो हमारी शिराओं में बहने वाले रक्त के कण में घुल-मिलकर उसे हृदय तक पहुँचाते है, ताकि मैला रक्त शुद्ध हो और हमारे जीवन में शक्ति का संचार हो, पवित्र भाव पैदा करे। तमाम शारीरिक और सामाजिक बीमारियों से हमारा बचाव करे। इसलिए, हे साईं! तुम ही तो हमारे विष्णु हो।

इस पावन धरती पर कई ऋषि-मुनियों का जन्म हुआ। भगवान श्रीगणेश, माँ सरस्वती और सृजनकर्ता विष्णु के स्मरण के बाद ही हम कोई शुभ कार्य आरंभ करते हैं। ये महापुरुष, साधु-संत, ऋषि-मुनि हैं, जिन्होंने मानव जाति के कल्याण के लिए अपना सारा जीवन होम कर

दिया। भगवान के बाद इस धरा पर संस्कारों की गंगा बहाने वाले समस्त मुनि जैसे, एकनाथ, तुकाराम, नामदेव, इत्यादि, इन सभी ऋषियों को हम नमन करते हैं। इन सभी के रूप बाबा में विद्यमान हैं। यही एक कारण हैं, जब हम साईं बाबा का पुण्य-स्मरण करते हैं, तो एक साथ कई अच्छे भाव, नेक इरादे हमारे मन-मस्तिष्क को उद्वेलित कर देते हैं। जब हम उनका बखान करते हैं, तो उनके आशीर्वचन हमारे घर-संसार को खुशियों से भर देते हैं।

सर्वे भवन्तु सुखीनः सर्वे संतु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चितदुःख भाग भवेत।।

हमारे जीवन में गुरुओं का अहम् स्थान होता है। ईश्वर रचयिता हैं। उनकी रचनाओं या पाठों को एक एकसूत्र कहें या एक पुस्तक में संजोते हैं साधु-संत, ऋषि-मुनि और महापुरुष। कोई भी पाठ या पुस्तक तब तक असरकारक नहीं होती, जब तक कि उसमें लिखे विषयों का कोई संदर्भ-प्रसंग सहित व्याख्या नहीं करता या उन्हें प्रयोग करके हमें नहीं समझाता। जो रचना करता है, वही ईश्वर है, चाहे वो कोई भी हो, कैसा भी व्यक्ति हो। हमारे लिए घर बनाने वाला मिस्त्री, हमारे पैरों को कांटों-कंकड़ों से सुरक्षित रखने के लिए जूते-चप्पल बनाने वाला मोची, अन्न उगाने वाला किसान और हमें जन्म देने वाली माँ, सभी ईश्वर का ही अंश हैं। वैज्ञानिक, शोधकर्ता आदि भी भगवान का ही अंश, हम सभी उस परमशक्ति के अंश हैं, जो मनुष्य के जीवन को खुशहाल और समृद्ध बनाने के लिए लगातार नई चीज़ें ईजाद करते हैं।

परमपिता परमात्मा की इन्हीं सब रचनाओं को एक सूत्र में संजोते हैं, साधु-संत, ऋषि-मुनि और महापुरुष। महापुरुषों की फेहरिस्त अपरम्पार है। इनमें पिता भी शामिल हैं, जो हमें ढंग से जीना सिखाते हैं। हमारे मित्र भी शामिल हैं, जो हमारा मार्गदर्शन करते हैं। इन सबमें गुरुओं का स्थान सर्वोपरि होता है। वे ईश्वर तुल्य होते हैं क्योंकि वे साधु-संत, ऋषि-मुनि

और महापुरुषों की कही बातें या पाठ को प्रयोग करके हमें समझाते हैं।

लेकिन क्या हम अपनी ज़िंदगी में पढ़-लिखकर ही सब कुछ सीख पाते हैं? बिलकुल नहीं। जब तक किताबों में कही बातें कोई हमें प्रयोग करके सरल तरीके से न समझाए हमारी समझ में कुछ नहीं आती। जो हमारे जीवन में हमें सही और गलत, अच्छे और बुरे का भेद करना और इस भेद को आत्मसात करते हुये एक सुखमयी जीवन जीना सिखाते हैं, वे हमारे गुरु होते हैं। गुरु वो व्यक्तित्व है, जो हमें आनंदमयी ज़िंदगी जीने के तौर-तरीके सिखाते हैं। गुरू गीता के अनुसार, गुरू शब्द को विभक्त किया जाये तो 'गु' का अर्थ अंधकार होता है और 'रू' का अर्थ इसको हटाने की क्रिया के रूप में परिभाषित है। गुरु का अर्थ तिमिरनाशी यानी अंधकार को मिटाने वाले होता है।

साईं बाबा हमारे गुरु भी हैं। उनका सान्निध्य हमें सही मार्ग पर चलने की प्रेरणा देता है। वे महापुरुष भी हैं, जिन्होंने ईश्वर की कही बातों और उनसे जुड़े विषयों को हमारे लिए एकसूत्र में पिरोया। बाबा हमारे भगवान भी हैं, जिन्होंने ज़िंदगी को सुखमयी- निरोगमयी और तमाम सारी सामाजिक बुराइयों से बचाने के नुस्खे तैयार किए। साईं ही हमारे अंदर नई ऊर्जा के रचयिता भी हैं, अच्छाई के जनक भी हैं, इसलिए ब्रह्मा-तुल्य हैं। वे हमारे अंदर की बुराइयों का संहार करते हैं, इसलिए विष्णु-तुल्य हैं। वे हमारे मन के मैल को दूर करने अपनी वाणी और सान्निध्य से निर्मल गंगा का बहाव करते हैं, इसलिए महेश्वर-तुल्य हैं। वे इन सबसे ऊपर हमारे गुरु भी हैं। गुरु का स्थान ईश्वर से भी पहले इसलिए रखा जाता है क्योंकि वो हमें सही-गलत का आभास कराते हैं। अच्छे कर्मों की सीख देते हैं। अगर हम बुरे विचारों में फंसे रहे, पाप का घड़ा भरते रहे, तो हम भला ईश्वर को कैसे पहचानेंगे? कण-कण में विराजे भगवान हमें कैसे नज़र आएंगे? इसलिए हमेशा बाबा का स्मरण करते रहें, ताकि विकार हमारे अंदर प्रवेश न कर पाएं। बाबा गुरु, ब्रह्मा, विष्णु आदि सभी की भूमिकाओं में हमारे बीच मौजूद हैं।

गुरूर्ब्रह्मा गुरूर्विष्णुः गुरूदेवो महेश्वरः।
गुरूः साक्षात्परब्रह्मो, तस्मै श्री गुरूवेनमः।।

श्रीमद्‌भगवद्‌गीता में (चौथा अध्याय, श्लोक 7-8) में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं, जब-जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब-तब मैं अवतार धारण करता हूँ। बाबा का अवतरण भी इसी प्रक्रिया का एक हिस्सा रहा है। उन्होंने **सबका मालिक एक** यानी सभी धर्मों का अंत एक ही ईश्वर पर जाकर मिलता है, इस बात को लगातार महत्व दिया। लोगों को ऊंच-नीच, जात-पात और धर्म-सम्प्रदाय के भेद से उबारा। सबको एक धुरी पर लाए, एक मंच पर बैठाया।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बंधुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्यां च द्रविणम त्वमेव,
त्वमेव सर्वम् मम् देव देव।।

साईं माता भी हैं और पिता भी। वे हमारे मित्र भी हैं। जिस तरह माँ-बाप हमें जन्म देते हैं, साईं हमें बुराइयों से बाहर निकालकर नया जन्म देते हैं। वे एक अच्छे सखा की तरह हमें सही सलाह देते हैं। वे हमारी आंखों पर पड़े दुष्कर्मों के पर्दे हटाते हैं, यानी हमारे ज्ञान चक्षु खोलते हैं। वे हमारे सर्वेसर्वा हैं, क्योंकि उनकी छत्रछाया में हम निरोगी और सुखी रहते हैं। साईं के साथ से हम सुख, शांति और आनंद की प्राप्ति कर सकते हैं।

तब की बात...

बात 1910 की है। दीपावली का अवसर था। धनतेरस का दिन था। सर्दी धीरे-धीरे बढ़ रही थी। बाबा धूनी के समीप बैठे ताप रहे थे। अचानक बाबा ने धूनी में लकड़ियां डालते-डालते अपना हाथ उसमें डाल दिया। इससे उनका हाथ जल गया। लोगों ने पूछा, बाबा आपने ऐसा क्यों किया? बाबा ने जवाब दिया कि वहां से कुछ दूरी पर एक लुहारिन भट्टी धौंक

रही थी। उसका छोटा-सा बच्चा कमर से बंधा हुआ था। तभी उसके पति ने उसे पुकारा। लुहारिन तुरंत दौड़ी, लेकिन इस भागा-भागी में उसका बच्चा भट्ठी में गिरने ही वाला था कि बाबा ने उसे पकड़ लिया। इस बात की पुष्टि कुछ दिनों बाद उस लुहारिन के शिर्डी प्रवास से हो गई, जिसमें उसने बताया कि किस तरह चमत्कार से उसका बच्चा भट्ठी में गिरने के बाद भी पूर्णतः सुरक्षित रहा।

साईं से सीधी सीख...

बाबा अन्तर्यामी थे, हैं और रहेंगे। देश-दुनिया में क्या घटित हो रहा है, उन्हें सब ज्ञात होता है। अगर कोई मुसीबत में हो, उसकी तकलीफ़ बड़ी हो, तो मदद के लिए आगे आएं, इसके लिए भले ही हमें थोड़ा कष्ट क्यों न उठाना पड़े। एक अच्छे पड़ोसी, मित्र, गुरु का कर्त्तव्य निभाएं। ऐसा नहीं कि उसकी सेवा से हमें क्या मिलेगा? बाबा ने अपना हाथ जलाया, लेकिन उस बच्चे को बचाकर उन्हें जो असीम आनंद मिला, उससे बड़ी पूंजी और क्या हो सकती है?

हम सारी ज़िंदगी सुख की तलाश ही तो करते हैं! नौकरी, पेशा, शादी-ब्याह, बच्चे आदि सारे प्रयोजन सुख पाने की लालसा ही तो है! तो फिर सुख के दूसरे ज़रिये क्यों नहीं ढूंढते, जैसे बाबा ने एक बच्चे की जान बचाकर हासिल किया। दूसरों के चेहरे पर मुस्कान लाना सबसे बड़ा सुख है। बाबा समय-समय पर ऐसे चमत्कार करके लोगों को यही संदेश देते रहे, और आज भी दे रहे हैं। बाबा का स्मरण कीजिए और कुछ ऐसे ही अच्छे कार्यों की शुरुआत कीजिए। लोगों की मदद कीजिए और असीम सुख पाइए।

बाबा भली कर रहे

4

मोह-माया के जाल से निकालते हैं साईं

जो कुछ मेरे पास है, सब कुछ तेरा साईं।
छत्रछाया तुम्हारी मिले और कुछ न माँगूं साईं।।

बाबा सदा फक्कड़ बनकर रहे। फिर भी उनके पास कभी किसी चीज़ की कोई कमी नहीं थी। न खाने-पीने की न पैसे की और न ही कपड़े-लत्ते की। हम सारी उम्र पैसा-पैसा ही करते रहते हैं। पैसा इंसान की आवश्यकता हो सकती है, लेकिन भाग्य विधाता नहीं क्योंकि अगर पैसा हाथ की रेखाएं ही बदल सकता तो सबसे पहले आदमी मृत्यु को जीतता, खुशियाँ बाजार में बिकतीं और पुण्य की बिक्री सबसे ज़्यादा होतीं क्योंकि नर्क कोई जाना नहीं चाहता और न जीते-जी भोगना चाहता है और ना ही मरने के बाद वहां के दर्शन करना चाहता है। कितना दिलचस्प और हैरानी भरा प्रसंग है कि किसी की मृत्यु के बाद क्या होता है, वो कहाँ जाता है और क्या करता है, किसी ने कुछ भी नहीं देखा फिर भी इसका भय है कि पीछा नहीं छोड़ता।

मृत्यु के बाद स्वयं को कष्टरहित रखने के लिए इस जीवन में इतने जतन करना क्या उचित है? बाबा का हमेशा यही संदेश रहा है कि जो कुछ करना है, इसी जीवन में करो। अगर आपके पास पर्याप्त धन है, तो उसका सदुपयोग करो, लोगों के अन्न-जल-कपड़े का प्रबंध करो। अगर कोई शारीरिक या मानसिक परेशानी में है, तो उसकी आगे बढ़कर

सहायता करो। अगर सच्चे मन से यह मानवीय कर्त्तव्य निभाते हो, अच्छे मन से परोपकार करते हो, तो नर्क क्या, मृत्यु का भय भी अंदर से चला जाएगा। जीवन ही हमारे लिए स्वर्ग से बेहतर बन जाएगा।

इंसान से गलतियां होना स्वाभाविक-सी बात है, लेकिन जो इनसे सबक लेता है, वो साईं का सच्चा भक्त है। बाबा हमें हमारी गलतियों का अहसास कराकर सही राह पर लाते हैं। बाबा दान-दक्षिणा में लोगों से अन्न-तेल या पैसा तक ले लेते थे, लेकिन इन सब चीजों को लेने का उनका उद्देश्य कुछ अलग होता था। वे सभी सामग्रियों का इस्तेमाल लोगों की भलाई के लिए करते थे। हमें भी अपने माता-पिता, गुरु, दोस्त, कर्मचारियों आदि को समय-समय पर उनके परोपकार या सहयोग के लिए कुछ न कुछ देते रहना चाहिए। ऐसा क्यों यह भी जान लीजिए!

जब से मनुष्य का जन्म हुआ, यह बात तभी से प्रासंगिक है। हम ईश्वर, महापुरुषों और माता-पिता का कर्ज कभी नहीं चुका सकते। हाँ, हम उसके बदले में कुछ दे अवश्य सकते हैं, लेकिन यह न तो मूल होगा और न सूद। बल्कि कुछ नई चीज़ होगी। कहने का तात्पर्य हम अपने माता-पिता, गुरु आदि से बहुत कुछ सीखते हैं। उनकी दी गई सीख, कही गई बातों पर अमल भी करते हैं, जो हमारी ज़िंदगी में बदलाव लाती हैं। इन्हीं परिवर्तनों से उपजी सकारात्मक चीज़ें हम दूसरों को बांट सकते हैं। इसे परोपकार भी कहते हैं, समाज सेवा भी और अपनों, देश-दुनिया-समाज को कुछ देने का सार्थक प्रयास भी।

साईं हमारे मार्गदर्शक हैं। उनका सान्निध्य, स्मरण हमें निरंतर कुछ न कुछ बेहतर चीज़ें प्रदान करता है। नई ऊर्जा देता है, ठीक से जीना सिखाता है। सही कर्मों की ओर अग्रसर करता है। साईं हमें बहुत कुछ देते हैं। वे कण-कण, हर मन में अच्छी भावनाओं और विचारों के साथ विद्यमान हैं। इसलिए जब भी हम साईं को कुछ लौटाएंगे, वो एक साथ तमाम लोगों तक पहुँच जाएगा।

हम इसे इस प्रकार समझ सकते हैं। ऊर्जा कभी नष्ट नहीं होती।

बस उसका स्वरूप बदल जाता है। हम भोजन-पानी के रूप में ऊर्जा प्राप्त करते हैं। उसी ऊर्जा से हम श्रम करते हैं। खेतों में फसल उगाते हैं। यानी भोजन से हमें मिली ऊर्जा हमें श्रम देती है और उसी श्रम से हम फिर से ऊर्जारूपी फसलें उगा देते हैं। साईं का सान्निध्य, उनकी सीख़ भी ऊर्जा का रूप ही है। उनके स्मरण से हमारे तन-मन को एक नई चेतना मिलती है, स्फूर्ति मिलती है, और हम इन सबसे अपना, अपने परिवार का, समाज का और देश का भला करते हैं।

इसलिए कोई भी कर्म करें, चाहे वो साईं की भक्ति ही क्यों न हो, यह भाव अपने अंदर रखें कि तेरा तुझको अर्पण। यह भाव इसलिए ज़रूरी है क्योंकि हम ऊर्जा के संचार को नहीं रोक सकते लेकिन उसे सही या गलत दिशा में अवश्य मोड़ सकते हैं। यह हमारे विवेक पर निर्भर करता है कि हमें अपने अंदर की ऊर्जा का कैसे इस्तेमाल करना है। मुंह से निकली एक फूंक आग बुझाती भी है और भड़काने का काम भी करती है। उसका सही इस्तेमाल एक कला है। आग बुझाने में झटके से फूंक मारनी पड़ती है, जबकि भड़काने या सुलगाने के लिए धीरे-धीरे। कब, कितने दबाव से हवा मुँह से छोड़नी है, यह एक कला है। यह कला हमें साईं सिखाते हैं। वे अपनी बातों और ज्ञान से हमें ऊर्जा देते हैं। साथ ही यह भी बताते हैं कि उस ऊर्जा का कहाँ और कैसे सकारात्मक इस्तेमाल करना है। इसलिए हमें यह भाव अपने मन में रखना चाहिए, तेरा तुझको अर्पण। यह भाव निश्चल है। सकारात्मक है। समग्र दुनिया के हित में है।

साईं जो तुझसे प्राप्त किया है, वो हम तुझको ही दे रहे हैं। साईं जो तूने हमें दिया है आशा है कि जब हम तेरे चरणों में अर्पित करेंगे, तो उसी भाव से अर्पित करेंगे, जिससे तूने उसे हमें नवाजा हैं।

मेरा मुझ में कुछ नहीं, जो कुछ है सो तेरा।
तेरा तुझको सौंपते, क्या लागे है मेरा।।

साईं! तुम हमारे इष्ट हो। तुम्हारे बिना हमारी कल्पना नहीं। यद्यपि तुम

हर कण में समाए हुए हो फिर भी तुम आओ और यहां बैठो, हमारे मन में, हमारे मस्तिष्क में, हम साथ बैठकर बातें करेंगे।

साईं नाम सुमिरन से जग जागा...
जग जागा... जग जागा...
साईं अब तुम भी, आँखें खोलो,
जागो साईं देव हमारे

तब की बात...

बाबा के एक परमभक्त थे भागोजी शिंदे। जैसा कि आपको विदित है, लुहारिन के बच्चे को बचाने के लिए बाबा ने धूनी में हाथ डाल दिया था। भागोजी, बाबा के जले हुए हाथ की मलहम-पट्टी करते थे। माधवराव देशपांडे ने इसकी सूचना नानासाहेब चाँदोरकर को दी। वे मुंबई (उस वक्त की बम्बई) के ख़्यात चिकित्सक परमानंदजी के साथ दवाईयाँ लेकर शिर्डी पहुँचे, लेकिन बाबा ने उनसे इलाज कराने से मना कर दिया। बाबा सिर्फ़ भागोजी से ही मलहम-पट्टी कराते थे। भागोजी को कुष्ठ रोग था। उनकी उंगलियां सड़ चुकी थीं, बदबू मारती थीं। स्वाभाविक है कि जो इन्सान अपने धन-बल के ज़रिये परोपकार खरीदने की चेष्टा करता हो, वो असल में भागोजी के पास क्यों आएगा, बैठेगा? लेकिन बाबा भागोजी से ही सेवा कराते थे। जब बाबा लेंडीबाग जाते, तो भागोजी छाता लेकर उनके साथ-साथ चलते थे।

साईं से सीधी सीख...

दरअसल, यह कोई सामान्य बात नहीं थी, बल्कि इसमें एक गूढ़ रहस्य छिपा था। जिसने भी यह रहस्य जान लिया, वो मोह-माया के चंगुल से मुक्त हो गया।

बाबा ने कुष्ठ रोगी भागोजी को अपना सामीप्य देकर एक संदेश

दिया कि अगर आप मोह-माया के साथ, बदले में कुछ पाने की इच्छा लिए, परोपकार करने चले हैं, लोगों की मदद करने चले हैं, तो सारा कर्म व्यर्थ है। ऐसे कर्म आपको स्वर्ग ले जाएंगे, कह पाना मुश्किल है क्योंकि इसमें आपका निःस्वार्थ भाव नहीं दिखाई देता, आप सच्चे मन से मनुष्य की सेवा नहीं कर रहे, बल्कि अपने धन-बल से पुण्य खरीदने की चेष्टा कर रहे हैं। इसलिए जब तक मोह-माया के जाल से निकलकर मनुष्य की सेवा नहीं करेंगे, तब तक पाप-पुण्य का भेद दूर नहीं कर पाएंगे।

बाबा भली कर रहें..

5

अंधेरा जब घना हो, उजाला पास ही होता हैं

भीतर जितने बैठे हैं, छोटे-बड़े विकार।
साईं तुम्हारे तेज से, मिटें सभी अंधकार।।

साईं का सान्निध्य ही ज़िंदगी के सारे विकार दूर कर देता है। यदा-कदा जब मनुष्य अपने दोष समझने को तैयार नहीं होता था, तब बाबा सजीव उदाहरणों के ज़रिये उसकी भ्रष्ट मति को ठिकाने पर लाते थे। आज भी लाते हैं। बुरी संगत से अच्छाई की ओर गमन भी तो अच्छी सुबह का सूचक हुआ कि नहीं!

बाबा का मानना रहा है, कि सुख-दुःख हमेशा साथ-साथ चलते हैं। हम दुःखों से, तकलीफों से मुँह नहीं मोड़ सकते हैं। यदि हम उनके आगे नतमस्तक होते हैं, तब परेशानियाँ और भी बढ़ती हैं। इसलिए उनका मुकाबला करना ही सबसे बेहतर विकल्प होता है। आँख मूंद लेने से समस्यायें ओझल नहीं होती, यह भ्रम हमें अपने अंदर से निकालना होगा। समस्याओं की आँख में आँख डालकर उन्हें ललकारना है, उनसे पार पाना है।

सोते रहने से कभी सबेरे का भाव पैदा नहीं हो सकता। मनुष्य इसलिए सोता है, ताकि अगली सुबह वो तरोताजा होकर उठे और एक नई सोच के साथ अपने अगले कर्म को सार्थक कर सके। तन-मन की शांति के लिए निद्रा आवश्यक है, लेकिन हमें अपने संकल्प को नहीं सुलाना है।

कहते हैं रात यदि अधिक काली हो जाए, तो मानना चाहिए कि सबेरा पास ही है। स्याह रात का अंतिम पहर, जब सबेरा होने को होता है, सूरज की पहली किरण निकलने को आतुर होती है, उसे ब्रह्म मुहूर्त कहा जाता है।

यह वो समय होता है, जब देव उठते हैं। वैसे देव कभी नहीं सोते क्योंकि वे तो एक संकल्प हैं। वे ऊर्जा हैं, जो कभी समाप्त नहीं होती। जैसे कभी सूर्य नहीं ढलता, वो सिर्फ़ पृथ्वी के घूमने पर हमारी आँखों से ओझल हो जाता है। वो तो अपनी जगह स्थिर है। चक्कर तो पृथ्वी लगा रही है, ताकि हम अंधेरे का अनुभव कर सकें। रोशनी लुप्त होने पर हमें कैसा महसूस होता है, उसका आकलन कर सकें। ठीक उसी प्रकार देव कभी सोते नहीं है। देव के मायने हमारी ऊर्जा से है। सकारात्मक सोच से है। हमारे संकल्पों से है। साईं इन्हीं सब चीजों का पर्याय हैं।

सरल भाषा में समझें तो ब्रह्म और भ्रम दोनों मिलते-जुलते शब्द हैं। ब्रह्म मूहूर्त में जब सूर्य की पहली किरण फूटती है, तो वो हमारे सारे भ्रम दूर कर देती है। भ्रम यानी अंधकार। वो अंधकार, जो हमारे मन-मस्तिष्क में घर किए बैठा रहता है। नींद भी एक भ्रम है। हमें लगता है कि हम सो रहे हैं, लेकिन असल में सोचिए क्या वाकई ऐसा होता है? हमारा हृदय क्या धड़कना बंद कर देता है? क्या हमारा दिमाग चलना बंद कर देता है। हम सोते वक्त भी करवट बदलना नहीं भूलते। सोते वक्त भी हमें प्यास लगती है। पेट में अन्न का दाना न होने पर भूख लगती है। लघुशंका की ज़रूरत महसूस होने पर हम स्वतः उठ जाते हैं। ऐसा क्यों होता है? वो इसलिए क्योंकि सोना तो सिर्फ़ एक भ्रम है। जैसे एक बाइक चाबी न लगाने पर शांत खड़ी होती है, लेकिन वो मृत नहीं होती। चाबी लगाने और एक किक मारते ही वो कार्य करने लगती है। हमारी भी ठीक वैसी ही स्थिति होती है। हम सोने से पहले दिमाग से चाबी निकालकर बाहर रख देते हैं। चाबी निकलते ही हमारा मन-मस्तिष्क शांत हो जाता है। तंत्रिका-तंत्र में विचरण कर रहे विचार सुप्त अवस्था में चले जाते हैं। सब कुछ सुप्त होते ही हमें सुकून की नींद आ जाती है। अगर हम चाबी

निकाले बगैर सोने की कोशिश करेंगे, तो दिमाग चलता रहेगा। दिमाग चलेगा, तो हमें नींद कैसे आएगी?

ब्रह्म मुहूर्त भी प्रकृति प्रदत्त एक अद्‌भुत किक है और सूर्य की किरण एक आलौकिक चाबी। सुबह होते ही दोनों हमें सक्रिय कर देते हैं। अब यह हम पर निर्भर करता है कि हम दिन की शुरुआत नई मंजिल से करें, नई सोच के साथ शुरू करें, या पिछले दिन का बहीखाता खोलकर बैठ जाएं।

जब हम घर से गाड़ी निकालते हैं, तो उसे कपड़े से साफ़ करते हैं। ठीक वैसे ही हमें उठते ही दिलो-दिमाग की सारी गंदगी साफ़ कर देनी चाहिए। जैसे हम दांत साफ़ करते हैं, पेट साफ़ करते हैं और स्नान करते हैं। साईं बाबा हमारे जीवन की वही चाबी हैं, वही किक हैं, गंदगी साफ़ करने का वही तौर-तरीका हैं। प्रातःकाल उनके स्मरण मात्र से सारे प्रयोजन अच्छे तरीके से होते चले जाते हैं।

तब की बात...

बाबा के साथी थे, परमभक्त थे तात्या कोते पाटिल और भक्त म्हालसापति। म्हालसापति बाबा के पहले भक्त थे। तीनों एक साथ सोते थे। उनके सिर अलग-अलग दिशाओं में होते थे, लेकिन नीचे पैर एक-दूसरे से संपर्क में रहते थे। तात्या 14 वर्षों तक अपने माता-पिता को घर पर छोड़कर मस्ज़िद में निवास करते रहे लेकिन बाद में जब उनके पिता की मृत्यु हुई, तो बाबा ने उन्हें स्वयं वापस घर भेजा, ताकि वे अपनी पारिवारिक ज़िम्मेदारियों का निर्वहन कर सकें।

वे ऐसा क्यों करते थे? कुछ रहस्य गूढ़ होते हैं। जैसे ब्रह्मांड। कुछ रहस्य ईश्वर हमें ख़ुद बताना नहीं चाहता, क्योंकि सारे रहस्य खुलने के बाद जीवन का रोमांच ख़त्म हो जाएगा। आगे करने को कुछ नहीं बचेगा। नीरसता अंदर घर कर जाएगी। जब कुछ नया नहीं बचेगा, तो सब कुछ पुरानी बातों और चीज़ों के लिए क्यों जिया जाए?

हम ईश्वर की स्तुति करते हैं। मंत्रोच्चार करते हैं। भजन गाते हैं। अलग-अलग तौर-तरीकों, अपने-अपने रीति-रिवाजों, परंपराओं, संस्कृति, भाषा-बोली आदि के मुताबिक ऊपर वाले से प्रार्थना करते हैं। तरीके सबके अलग-अलग होते हैं, लेकिन मंशा केवल एक ईश्वर, या ख़ुदा, गॉड हमारे जीवन में हमेशा खुशियां लाते रहें और परेशानियों से उबार दें, और अच्छे कर्म की प्रेरणा प्रदान करें।

ऐसी प्रार्थना में हर बार कुछ न कुछ नया होता है। हमें नहीं पता होता है कि आगे क्या होने वाला है। यह रहस्य हमें जीवित रखता है। इसे इस तरह भी समझा जा सकता है- यदि हमें यह पता हो कि हमारे जीवन में आगे क्या घटने वाला है। कब, किस वक्त और कहां कौन-सी घटना होगी, तो फिर जीवन कैसा होगा? हमें पता हो कि फलां दिन, फलां जगह और फलां वक्त हमारे प्राण पखेरू उड़ जाएंगे, तो क्या हमारे जीवन में कोई खुशी बचेगी? किसी रोमांच के लिए कोई स्थान होगा? बिल्कुल नहीं।

रहस्य ही हमें जिंदा रखते हैं। हम प्रार्थना ही इसलिए करते हैं, क्योंकि हमें नहीं मालूम होता कि आगे क्या होने वाला है। हां, लेकिन हमें यह अवश्य पता होता है कि आगे कुछ होने वाला ज़रूर है। जैसे, हम बच्चे की परीक्षा के दौरान ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि हे ईश्वर मेरे बच्चे की परीक्षा अच्छी रहे। यानी यह तो हमें पता है कि परीक्षा होनी है, लेकिन यह नहीं मालूम रहता कि परीक्षा में कौन से सवाल आने वाले हैं?

बाबा और उनके भक्त तात्या तथा म्हालसापति के तीन अलग-अलग दिशाओं में सिर रखकर, जबकि पैर एक-दूसरे से संपर्क में रखकर सोना इसी रहस्य का एक हिस्सा है। बाबा का संदेश निश्चय ही यही होगा। वे और उनके भक्त अलग-अलग दिशाओं में सिर रखकर अवश्य सो रहे हैं, लेकिन जो एक दिशा खाली बचती है वो इसलिए ताकि जीवन में एक रहस्य बरकरार रहे। यानी तीन दिशाओं में क्या है, तीनों ने खोज लिया, लेकिन एक रिक्त पड़ी दिशा का रहस्य खोजना बाकी है।

साईं से सीधी सीख...

पैर से पैर संपर्क में रखते हुए सोने का तात्पर्य यही होगा कि दैनिक जीवन में हम, हमारा घर-परिवार, मित्र और सगे-संबंधी भले ही अलग-अलग दिशाओं में कार्यशील हों, अग्रशील हों, चलायमान हों, लेकिन हमें संपर्क नहीं तोड़ना। रिश्तों का स्पर्श हमेशा बनाए रखना है। यही संपर्क और एकजुटता हमें नये रहस्यों से पर्दा उठाने की ऊर्जा और शक्ति देती है।

बाबा को रोज़ सुबह तात्या हिलाकर उठाते थे। जैसा कि हम जानते हैं बाबा एक ऊर्जा हैं। एक विचार हैं। एक मार्गदर्शक हैं। इसलिए तात्या, बाबा के रूप में अपने लिए एक ऊर्जा अर्जित करते होंगे। अपने विचारों को जागृत करते होंगे। अपने लिए मार्ग चुनते होंगे। ठीक वैसे ही हमें भी सुबह उठते ही अपने मन-मस्तिष्क को हिला-हिलाकर जगाना होगा।

बाबा के उठने के साथ ही म्हालसापति और तात्या अपने-अपने घर चले जाते थे। उस वक्त मस्ज़िद में किसी को प्रवेश की अनुमति नहीं होती थी। बाबा उठने के बाद सबसे पहले धूनी की तरफ मुख करके बैठते थे। कुछ बुदबुदाते थे, हवाओं में कुछ इशारे करते थे। कोई समझ नहीं पाता था कि उनके इशारे किसके लिए हैं, वे किससे बात कर रहे हैं?

यह एक रहस्य था, जो उन्हें आनंद प्रदान करता था। हम भी जब सुबह उठकर सूर्य देवता को जल चढ़ाते हैं। ईश्वर की आराधना में मंत्रोच्चार और भजन करते हैं, उस वक्त किसी भी नन्हे बच्चे के लिए हम अजूबा-सा प्रतीक होते हैं। वो सोचता है कि यह क्या हो रहा? ठीक वैसी ही स्थिति इन्सान की होती है। एक बच्चे-सी। उसे नहीं पता होता कि ईश्वर की लीला किस प्रयोजन के लिए है?

लेकिन हम इतना अवश्य जानते हैं कि ईश्वर जो भी करता है या कर रहा है, वो मानव कल्याण के लिए है। यह संसार उसी की रचना है, इसलिए उसका हर प्रयोजन, हर लीला कुछ नयापन लाने की कोशिश है, ताकि मानव जीवन में आनंद बना रहे।

जैसे, रोते हुए बच्चे को मनाने के लिए हमें किस्म-किस्म के जतन करने पड़ते हैं। मनुष्यरूपी रचना में निरंतर कुछ नया बना रहे, इसलिए ईश्वर भी अपने अवतारों के ज़रिये कुछ न कुछ नया करता रहता है। बाबा भी हमेशा मानव जाति के आनंद बाबत् कुछ न कुछ नया करते रहते हैं। उनकी लीलाएं हमारे लिए एक रहस्य होती हैं, जो आनंद की अनुभूति देती हैं।

साईं ने समय-समय पर अपने भक्तों को ब्रह्मज्ञान यानी परम तत्व का रास्ता दिखाया है, लेकिन वो ही इसे आत्मसात् कर पाया जिसने अंधकार और प्रकाश के बीच का सटीक फर्क महसूस किया। अंधकार सिर्फ़ सूरज ढलने के बाद ही नहीं होता, बल्कि कई विकारों के कारण भी हमारी ज़िंदगी में अंधेरा व्याप्त रहता है। दुःख, चिंताएं और स्वार्थ का भाव भी एक प्रकार का अंधकार ही है।

बाबा भली कर रहे

6

जीने की कला सिखाते हैं साईं

मन के द्वारे खोल दो, रखो न कोई भेद।
लौट गए बाबा अगर, तो रह जाएगा खेद।।

रोशनी, पानी और हवा इनको प्रवेश करने के लिए महीन सुराख ही बहुत होता है।... और अगर पूरा वातावरण खुला-खुला हो, तो कहने ही क्या? ये तीनों ऊर्जा का स्त्रोत हैं। जीवन हैं। जब हम मंदिर में जाते हैं, गुरुद्वारे में जाते हैं, मस्ज़िद में जाते हैं या चर्च में प्रवेश करते हैं, तो हमारे मन के बंद पड़े छिद्र भी खुल जाते हैं। वो इसलिए, ताकि हमारा तन-मन ऊर्जा से भर जाए। रोशनी अंदर के सभी अंधेरों यानी बुराइयों को नष्ट कर दे, हवा अशुद्धता को बहा ले जाए और पानी उसे निर्मल कर दे। शिर्डी भी एक ऐसा ही पवित्र स्थल है, जहाँ रोशनी, पानी और हवा तीनों अपने प्रवाह में हैं। जैसे ही यहाँ की सीमाओं में कोई प्रवेश करता है, उसके भीतर के समस्त विकार एक-एक कर के क़ाफूर होने लगते हैं।

इन तीनों चीजों को कभी बांधकर नहीं रखा जा सकता। उन्हें मुठ्ठी में कैद नहीं किया जा सकता। हां, अपने भीतर जितना समेटना चाहें, समेटकर रख सकते हैं। बस उसके लिए मन बड़ा करना होता है। मन बड़ा करना ही एक कठिन तपस्या है। साईं बाबा हमें यही तपस्या करने का सरल नुस्ख़ा सिखाते हैं। बाबा भी रोशनी, पानी और हवा के

रूप में हमारे इर्द-गिर्द सदा मौजूद हैं। वे हमारे अंदर प्रवेश करना चाहते हैं, लेकिन अकसर इन्सान स्वार्थवश, ईर्ष्यावश अपने मन के अंदर ताला डालकर बैठ जाता है। उसका अहंकार किसी को अंदर आने की इजाज़त नहीं देता। क्योंकि उसे लगता है कि अगर कोई उसके अंदर दाखिल हो गया, तो फिर उसका अहंकार और वजूद क्या रह जाएगा?

सारा संसार इन्हीं तीन चीज़ों को ईश्वर के रूप में पूजता है। इसलिए यह शाश्वत् सत्य है कि बाबा दिखते तो सशरीर रहे, लेकिन हैं वो सर्वव्यापी-पानी, हवा और रोशनी के रूप में। मन के द्वार हमेशा खुले रखना, क्या पता किस रूप में बाबा हमारे अंदर आकर विराज जाएं।

तब की बात...

बाबा के एक समकालीन थे प्रो.जी.जी. नारके। वे बाबा के भक्त बापूसाहेब बूटी के दामाद थे। बहुत पढ़े-लिखे व्यक्ति। एक बार उन्होंने कहा था कि बाबा का शरीर तो रात में द्वारकामाई (शिर्डी) में रहता था, लेकिन बाबा ख़ुद रातभर देश-विदेश में विचरण करते हर भक्त के पास पहुंच जाते हैं। बाबा कई बार सुबह भक्तों को बताते थे कि उन्होंने किस प्रकार अपने एक भक्त की ज़िंदगी बचाई। बाबा कदाचित् यह सब इसलिए बताते थे, कि लोगों में भी परोपकार की भावना जागृत हो।

बंबई में रहते थे श्री रामलाल। वो पंजाबी ब्राह्मण थे। एक दिन बाबा ने उनके स्वप्न में आकर शिर्डी आने को कहा। श्री रामलाल को यह नहीं पता था कि स्वप्न में आने वाले बाबा कौन है? लेकिन एक दिन जब वे सड़क पर टहल रहे थे, तभी एक दुकान पर उनकी नज़र पड़ी। वही बाबा की तस्वीर टंगी थी। श्री रामलाल को ज्ञात हो गया कि उनके स्वप्न में कौन आया था। श्री रामलाल शिर्डी पहुँचे और जीवन पर्यन्त वहीं रहे।

बाबा ने श्री रामलाल को स्वप्न क्यों दिया होगा? श्री रामलाल अलौकिक सुख की तलाश में थे, लेकिन उन्हें कोई गुरु नहीं मिल रहा था, जो उनका मार्ग प्रशस्त करे। बाबा ने उनकी चिंता भांप ली और स्वप्न में

आकर उन्हें अपने पास बुला लिया।

साईं से सीधी सीख...

हेमाडपंत ने अपने ग्रंथ श्री साईं सच्चरित्र में जो वर्णन किया है वह यह बताने के लिए पर्याप्त है कि बाबा कहने को तो कभी भी एक तरफ रहाता और दूसरी तरफ़ नीमगांव के परे कभी नहीं गये, लेकिन कैसे वे देश-दुनिया में भ्रमण करते रहते थे। सात समंदर पार अपने भक्तों को वे दुःख तकलीफ़ और संशय की स्थितियों से कैसे उबारते थे और उन्हें कल्याणकारी मार्ग पर ले आते थे। वे लोगों को परोपकार की ओर अग्रसर करते थे।

यह बाबा का चमत्कार ही तो था। बाबा सर्वव्यापी हैं। उनके भक्तों को अगर कोई दुःख-तकलीफ़ होती है, तो तुरंत किसी न किसी रूप में उनके पास पहुंच जाते हैं और उनके आत्मोन्नति का मार्ग प्रशस्त करते हैं। इसीलिए साईं के भक्तों को किसी भी समय, कितनी ही विकट परिस्थितियों का सामना करना पड़े, उन्हें इस बात का भय कभी नहीं होना चाहिए कि साईं उन्हें पार कराने कभी समय पर नहीं आयेंगे। साईं तो हर पल, हर घड़ी हमारी चेतना, करूणा और विवेक में हमारे साथ ही रहते हैं। साईं का नाम अभयत्व का पर्याय है। ज़रूरत है तो सत्कर्म की राह पर चल कर अपने करूणा और विवेक को अपनी चेतना का अविभाज्य अंग बनाने की।

बाबा भली कर रहे

7

मंगलाचरण से साईं की ओर...

शुरू करो कुछ भी, प्रथम लो साईं का नाम।
सभी मनोरथ पूरे होते, बनते बिगड़े काम।।

हर अच्छे काम की शुरुआत मंगलाचरण से होती है। मंगलाचरण यानी मंगल आचरण। स्पष्ट करें, तो पवित्र आचरण। कहते हैं कि किसी भी शुभ कार्य से पहले यदि देवों को बुला लो, अपने पितृों को याद कर लो तो सारे काम सफ़ल हो जाते हैं। बाबा का स्मरण भी हमारी सफलताओं का सूचक बन जाता है। क्योंकि साईं स्वयं भगवान हैं, देव हैं, हमारे पितृ हैं, सखा हैं और हमारे जीवनरूपी रथ के कृष्ण की भांति सारथी हैं।

गोस्वामी तुलसीदास ने हनुमान चालीसा में लिखा है...

श्री गुरु चरन सरोज रज, निज मनु मुकुर सुधारि।
बरनऊ रघुबर बिमल जसु जो दायक फल चारि।

अर्थात्–हमारे पाप, हमारे जो बुरे कर्म हमें भगवान के पास जाने से रोकते हैं, वो सारे मंगलाचरण, अपने गुरू की चरण की रज यानी धूल से दूर हो जाते हैं। गुरू के चरण की धूल यानी गुरू की सीख। मंगलाचरण किसी भी कार्य को प्रारंभ करने की शुरुआती प्रक्रिया है। वह हमें अपने कार्य के प्रति दृढ़ संकल्पित कर देती है।

जब हमारा आचरण मंगलमयी होगा, तो निश्चय ही जीवन में भी मंगल ही मंगल नज़र आएगा। यह ज़रूरी नहीं कि मंगलाचरण के लिए

किसी विशेष स्थल पर धूनी जमाई जाए, मंदिर का कोई कोना तलाशा जाए, किसी जंगल में कोई सुनसान जगह ढूंढी जाए या अपने इर्द-गिर्द जमा लोगों को दुत्कार कर भगाया जाए, ताकि एकांतवास मिल सके। मंगलाचरण तो कहीं भी, किसी भी जगह, किसी भी स्थिति में किया जा सकता है। जैसे हम कोई भी कार्य की शुरुआत से पहले श्री गणेशाय नमः करते हैं। उद्देश्य श्रीगणेश हमारे सारे प्रयोजन ठीक करें। ठीक वैसे ही अगर हम बाबा का स्मरण मात्र भी कर लेते हैं, तो वे रोशनी, हवा और पानी के ज़रिये हमारे मन-तन को निष्पाप कर देंगे।

छोटा-सा बच्चा, जब कुछ भी करता है, तो अपनी माँ या पिता से पूछता जाता है। माँ मैं यह कर सकता हूँ? पापा क्या मैं इस चीज़ को हाथ लगा सकता हूँ, खा सकता हूँ? वहां जा सकता हूँ? एक बच्चे का मन एकदम निर्मल होता है। उसे नहीं पता होता कि वो जो करने जा रहा है, जो सोच रहा है, वो ठीक है या नहीं। उससे कोई गलती न हो जाए, इसलिए वो अपनी माता या पिता से सही रास्ता पूछता है, मार्गदर्शन मांगता है। एक बच्चे के लिए यह मंगलाचरण है। वो कोई भी कार्य करने से पहले माता-पिता की अनुमति लेता है, ताकि जाने-अनजाने उससे कोई भूल न हो जाए। हम बड़ों को भी ऐसा ही आचरण करना चाहिए, लेकिन ऐसा अकसर होता नही हैं।

हम तो अहंकार में ही जीते है कि हम तो परमज्ञानी हैं, हमें तो सब आता है, हम पूर्ण हैं। हम बगैर किसी के मार्गदर्शन या सलाह के काम करना शुरू कर देते हैं। अगर हम एक बच्चे की भांति व्यवहार करें, कुछ करने से पहले अपने गुरु, माता-पिता से सलाह-मशवरा लें, मार्गदर्शन मांगे, तो गलतियों की गुंजाइश न के बराबर रह जाती है। बाबा का सान्निध्य, स्मरण भी तो हमें गलत राह पर जाने से रोकता है और सचेत करता है। लेकिन मंगलाचरण के लिए मन का निर्मल होना भी आवश्यक है, जैसे कि एक बच्चे का होता है।

जीवन में प्रत्येक पग पर, प्रत्येक पड़ाव पर यदि अपने माता का

आदेश, पिता की सीख और गुरू के उपदेश याद रखेंगे तो कम गलतियाँ होंगी और जीवन सुखमय बनेगा। ये सभी हमारे शुभचिन्तक ही तो हैं। इनका हम से कोई भी स्वार्थ नहीं जुड़ा है। ये तो सिर्फ़ हमारी भलाई के बारे में ही सदैव चिन्तित रहते हैं। इनकी बातों को मानकर हमारा ही मान बढ़ता है, इनकी सुनकर हमारी इज्ज़त ही बढ़ती है और दुःख-तकलीफ़ का अहसास कम हो जाता है। शर्त यह है कि इनकी मानने में संशय कभी भी न करो।

तब की बात...

बाबा का एक भक्त था बाला गणपत दर्जी। एक बार वो बहुत बीमार पड़ा। नीम-हकीम, डाक्टर सबको दिखाया, लेकिन बुखार में रत्ती भर भी अंतर नहीं आया। वो दौड़ा-दौड़ा द्वारकामाई पहुँचा और बाबा के चरणों में गिर पड़ा। बाबा ने आदेश दिया, जाओ समीप के लक्ष्मी मंदिर में बैठे एक काले कुत्ते को थोड़ा सा दही और चावल खिलाओ। स्वाभाविक-सी बात है कि बाबा का यह आदेश गणपत दर्जी को विचित्र जान पड़ा। हालांकि उसने बाबा के आदेश का पालन किया। उसने देखा कि कुत्ते के दही-चावल खाते ही उसका बुखार चला गया।

साईं से सीधी सीख...

यह बाबा का एक चमत्कार था। दरअसल, बाबा सर्वव्यापी हैं। उन्हें पता है कि किस प्राणी को किस चीज़ की ज़रूरत है। अकसर हम अपनी पीड़ा के आगे दूसरों के दर्द को कम आंकते हैं। जबकि होना उलटा चाहिए। अगर हम यह सोचेंगे कि फलां व्यक्ति से ज़्यादा बीमार तो मैं हूँ, उससे ज़्यादा इलाज की आवश्यकता तो मुझे है, तो निःसंदेह आपकी मामूली पीड़ा और बढ़ जाएगी। कारण, आपने सच्चे मन से यही तो माना कि आपका दर्द सामने वाले के दर्द से अधिक है। अगर आपने सोचा होता कि मेरी तकलीफ़ सामने वाले के कष्टों से तो बहुत कम है, तो आपकी यही दृढ़

सोच आपकी पीड़ा को कम कर देती। बाबा ने उस कुत्ते की पीड़ा महसूस की। गणपत दर्जी को उसे दही-चावल खिलाने का आदेश दिया। गणपत जब कुत्ते को दही-चावल खिला रहा था, तब कुछ देर के लिए वो अपनी तकलीफ़ भूल गया। जैसे ही मन से पीड़ा की अनुभूति विलुप्त हुई, वो भला-चंगा हो गया।

एक अनुभूति ही तो, सुख-दुःख बैचेनी-परमानंद की जड़ है। बाबा अपने भक्तों में अनुभूति का ही संचार करते हैं। अच्छी अनुभूति करेंगे, तो सुखी रहेंगे, और अगर मलिन अनुभूति होगी, तो दुःख-तकलीफ़ होना लाजिमी है।

बाबा भली कर रहे

8

साईं गंगा हैं, जिनके स्मरण से दूर होते हैं सारे पाप...

बुरे कर्म से दूर रखे, साईं तेरा जाप।
ज्यों गंगा निर्मल करे, मन के सारे पाप।।

हमारे पाप, बुरे इरादे, बुरे कर्म जो हमें भगवान यानी सद्मार्ग पर जाने से रोकते हैं, मंगलाचरण से वे सारे विकार भस्म होना शुरू हो जाते हैं। कोई भी अच्छा काम करने से पहले हम अपने मन को स्वच्छ बनाने की कोशिश करते हैं। साईं हमारे इसी प्रयास को सफ़ल बनाने का ज़रिया हैं।

साईं गंगा का प्रतीक हैं, जिनमें अपना ध्यान यानी गोते लगाने से मन-तन निर्मल हो जाता है। हमें इस बात का सदैव ध्यान रखना चाहिए कि जब हम गंगा में गोते लगाने उतरते हैं या ईश्वर की आराधना में लीन होने की तैयारी करते हैं, तो सबसे पहले अपने मन से सारी दुविधाएं, विकार, ईर्ष्या-घृणा आदि को स्वतः दूर करने की कोशिश करें। साईं गंगा में उतरने से पहले हमें प्रयास करके से स्वयं को पवित्र करने का जतन करना चाहिए।

इसे कुछ उदाहरण से समझ सकते हैं। गंगा मैली क्यों हुई? वो इसलिए क्योंकि लोगों ने अपने आर्थिक मुनाफ़े के लिए उसमें अपने उद्योगों की गंदगी बहाना शुरू कर दी। जाने-अनजाने लोगों ने उसमें कचरा फेंकना शुरू कर दिया। अविद्या और अंधविश्वास के चलते लोगों ने मोक्ष की

आकांक्षा में उसमें शव बहाने शुरू कर दिये। अब गंगा को पहले जैसा निर्मल और पवित्र करने की मुहिम शुरू हुई है। गंगा में स्नान के मायने यही माने जाते हैं कि हमारे सारे पाप धुल जाएंगे लेकिन सोचिए अगर हम मैली गंगा में डुबकी लगाएंगे, तो क्या होगा? निश्चय ही हमें चर्म रोग या और भी कई बीमारियाँ हो सकती हैं।

हम नहाने के लिए भी साफ़ पानी की दरकार रखते हैं। यदि हम कीचड़ में सने नहाने पहुँचते हैं, तो सबसे पहले थोड़े-थोड़े पानी से कीचड़ साफ़ करते हैं उसके बाद नहाते हैं। ऐसा नहीं करते कि कीचड़ में सने होकर सीधे बाथ टब में उतर जाते हैं या पूरा पानी खराब कर देते हैं। हमारी कोशिश रहती है कि पहले अपने ही प्रयास से जितना हो सके ख़ुद को साफ़ कर लिया जाए।

जब हम गंगा मैया में डुबकी लगाने जलधारा में उतरते हैं, तो सबसे पहले सूर्य देवता, अपने आराध्य देवता, आदि की स्तुति करते हैं कि वो हमारे प्रयासों को सफ़ल बनाए, हमारे मन-तन को निर्मल कर दे।

ऐसे ही जब हम कीचड़ में से होकर अपने घर पहुँचते हैं, तो अंदर प्रवेश करने से पहले अपने जूते-चप्पल बाहर दरवाजे पर बिछे पैरपोछ से पौंछते हैं-साफ़ करते हैं। उद्देश्य यही होता है कि हमारा घर मैला न हो जाए।

साईं गंगा का प्रतीक हैं, पवित्रता का सूचक हैं। वे स्वच्छ जल का पर्याय हैं। साईं स्तुति में गोते लगाने से पहले हमें ख़ुद भी प्रयास करने हैं साफ़-सुथरा रहने के। मंगलाचरण ही हमारा प्रयास है। इससे हमारी आगे की राह आसान हो जाती है। जैसे घर में पानी से पौंछा लगाने से पहले हम झाड़ू से साफ़-सफ़ाई करते हैं ताकि पौंछा लगाने में आसानी रहे। मैल, धूल, कंकड़-पत्थर आदि साफ़ हो जाएं। वे पौंछा लगाने में रोड़ा न बनें।

ये कंकड़-पत्थर कुछ और नहीं, हमारे भीतर के विकार हैं। अगर हम बुरे इरादे और भावनाओं से ईश्वर की प्रार्थना करेंगे तो उनके

चाहते हुए भी हमारा भला नहीं होगा। इसे ऐसे समझें। एक काँच, स्टील, अलमारी आदि किसी को भी साफ़ करने से पहले एक साफ़ करने वाले कपड़े में कंकड़-पत्थर डाल दीजिए, फिर उसे कपड़े से रगड़िए। परिणाम अच्छे नहीं मिलेंगे। धातु साफ़ तो होगी, लेकिन कंकड़-पत्थर के घर्षण से उसमें रगड़ के निशान आ जाएंगे, उसकी ख़ूबसूरती पर बुरा असर पड़ेगा। वो चटक भी सकता है।

ठीक वैसी ही स्थिति हमारी है। अगर हम अहंकार, घृणा-तृष्णा, स्वार्थ, ईर्ष्या, दुर्भावना रूपी कंकड़-पत्थर अपने मन में लेकर ईश्वर की प्रार्थना करेंगे, साईं नाम में गोते लगाएंगे, तो भगवान, साईं अपने पौंछे से हमारा मन साफ़ करने में कोई कोताही नहीं बरतेंगे, लेकिन उनके पौंछे की रगड़ से ये कंकड़-पत्थर हमारे मन में निशान छोड़ देंगे। इसलिए अपने मन को हमेशा दोषमुक्त रखने की कोशिश करते रहना चाहिए।

बाबा अपने भक्तों को सही राह पर लाने के लिए अकसर ऐसे उदाहरण भी देते थे, जो उस वक्त गले नहीं उतरते थे या अचरज पैदा करते थे, लेकिन बाद में पता चलता था कि उनमें कितना गूढ़ रहस्य छुपा हुआ होता था। जैसे एक डाक्टर जब बच्चे को कड़वी दवाई देता है, तो वो उससे झूठ बोल देता है कि, यह दवाई तो बड़ी मीठी है। डॉक्टर की बातों में आकर बच्चा कड़वी दवाई एक झटके में गटक जाता है, लेकिन जैसे ही दवा उसके कंठ को छूती है, वो बुरा-सा मुँह बना देता है। बाबा भी अपने भक्तों के भीतर जमी गंदगी, बुराइयों, पाप को दूर करने के लिए कड़वे वचन बोलते रहे। उन्होंने कई बार अपशब्दों का भी प्रयोग किया होगा लेकिन इसके पीछे उनकी मंशा हमेशा भक्तों की भलाई ही थी। मानव अवतार की भी अपनी एक परिभाषा होती है।

तब की बात...

बाबा के एक भक्त ने अपने भाई के बारे में अपशब्द बोल दिए। उसने इतने खराब शब्दों का प्रयोग किया कि सुनने वालों को भी घृणा होने लगी।

शाम के वक्त बाबा लेंडी बाग घूमने निकले। बाबा तो ठहरे अन्तर्यामी, उन्होंने वहाँ मौजूद न रहते हुए सब कुछ जान लिया। मस्ज़िद पहुंचकर बाबा भिक्षाटन पर निकले और साथ में उस व्यक्ति को भी अपने साथ ले गये जिसने अपशब्द बोले थे। बाबा ने समीप ही विष्ठा खाते हुए एक सुअर की ओर इशारा किया और कहा -"देखो वह कितने प्रेम के साथ विष्ठा खा रहा है।" तुम्हारा आचरण भी उस सुअर जैसा ही है। यदि तुमने यह आचरण नहीं छोड़ा तो ये द्वारकामाई तुम्हारी मदद ही क्या कर सकेगी। उस भक्त को पहले यह बात समझ नहीं आई कि बाबा ने बगैर किसी प्रयोजन के सुअर की बात क्यों छेड़ी लेकिन बाद में वो समझ गया कि बाबा का इशारा उसी की ओर है।

साईं से सीधी सीख...

दरअसल, हम दूसरों की निंदा करके ऐसा महसूस करने की कोशिश करते हैं मानों हमारे मन को सुकून पहुँचा हो, लेकिन ऐसा होता नहीं। जैसे, सिगरेट-शराब जैसी आदतें शुरू में तो आनंद देती हैं, लेकिन बाद में यह हमारे जीवन को नरक बना देती हैं। ठीक वैसी ही स्थिति हमारे भीतर छुपी बुराइयों की है। ड्रग की आदत छुड़ाने के लिए व्यक्ति को जब नशामुक्ति केंद्र में रखा जाता है, तो शुरुआत में उसे तकलीफ़ होती है। क्योंकि उसे जब अपनी आदत के अनुसार ड्रग नहीं मिलता, तो वो तड़पता है। उसे लगता है कि उसके साथ ऐसा दुव्यर्वहार क्यों किया जा रहा है, उसे कष्ट क्यों पहुँचाया जा रहा है? लेकिन बाद में जब वो नशे से मुक्त हो जाता है, तब उसे आभास होता है कि पीड़ा में तो वो तब था, अब तो आनंद में लौटा है। ठीक वैसे ही बाबा कई बार भक्तों को सही राह पर लाने के लिए कड़वे वचन बोल देते थे। कई दफ़े तो वह अपशब्दों का भी प्रयोग कर लेते थे। लेकिन बाबा इन अपशब्दों के उपयोग का प्रयोजन किसी का अपमान करना या ठेस पहुँचाना नहीं था। वे तो इनके ज़रिए उस कड़वाहट का अनुभव उस व्यक्ति को करवाना चाहते थे जो इनके असर

से अनभिज्ञ बेलौस इनको बोलते जाते थे। हमारे शास्त्रों में भी लिखा गया है कि सत्य बोलो, प्रिय बोलो लेकिन यदि सत्य अप्रिय रूप से ही बोलना पड़े तो मौन बेहतर होता है।

बाबा भली कर रहे

9

साईं बदल देते हैं

बिन गुरु ज्ञान मिले नहीं, चाहे कर लो लाख जतन।
साईं नाम बदल दे जीवन, क्या तन और क्या मन।।

बदलाव ज़िंदगी की धुरी है। जैसे समय कभी स्थिर नहीं होता, ठीक वैसे ही ज़िंदगी का हर समय कभी भी एक-समान नहीं हो सकता। जो इस बदलाव के साथ ख़ुद को ढाले, सकारात्मक सोच और कर्मों के साथ ख़ुद को आगे ले जाए, वही साईं का सच्चा भक्त है। साईं बाबा अपने भक्तों को इस बदलाव के लिए हमेशा तैयार करते हैं। हम शिर्डी जाते हैं क्योंकि हमें बाबा में पूर्ण विश्वास है कि वो हमारे अंदर गहराई से दबे-छुपे, विकारों और पापों को दूर कर देंगे। बाबा के प्रभाव में आते ही, हमारी बुरी आदतों और बुरी सोच में सकारात्मक बदलाव आ जाता है।

प्रकृति भी समय के साथ-साथ बदलती है क्योंकि उसे पता है कि अगर मौसम एक-सा रहा, तो हमारे जीवन में कोई रस नहीं रह जाएगा। हमारे अंदर ऊब पैदा होने लगेगी और हमें अपना जीवन नीरस लगने लगेगा।

उत्तरी ध्रुव पर छह-छह महीने दिन और रात रहते हैं। क्या कोई सारी ज़िंदगी खुशी-खुशी वहाँ रह सकता है? कतई नहीं। वैज्ञानिक वहाँ कुछ नये शोध के लिए जाने का जोखिम उठाते हैं। उन्हें वहाँ शारीरिक और मानसिक दोनों तरह की बीमारियाँ घेर लेती हैं। कल्पना कीजिए। यदि हमको एक गुफा में 6 महीने के लिए बंद कर दिया जाए, जहाँ रोशनी न

पहुँचती हो, तो हमारा जीवन कैसा होगा?

प्रकृति ने इसीलिए ऋतुएं बनाई हैं ताकि हमारे अंदर नीरसता न आए। हम जीवन को आनंद से जी सकें। बाबा हमारे लिए यही प्रयास करते हैं। वे हमारे अंदर बदलाव लाते हैं। लेकिन क्या वाकई कहीं कोई बदलाव होता है? सूर्य तो अपनी जगह स्थिर है, चाँद तो अपनी जगह से कभी कहीं हिला भी नहीं? दरअसल, जो कुछ परिवर्तन होता है, वो पृथ्वी के घूमने से है। पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है और बदलाव होते हैं। ठीक वैसे ही जब हमारे मन की धुरी घूमती है, तो हमें अंदर से बदलाव महसूस होता है। बाबा उस धुरी को घुमाते हैं। जैसे एक कुम्हार चक्के को घुमाकर अमूर्त माटी को मूर्त रूप दे देता है। बाबा वही करते हैं। हमारे अंदर के विचारों को एक ख़ूबसूरत रूप देते हैं। साईं हमारे भीतर सकारात्मक बदलाव लाते हैं।

कहते हैं कि संक्राँति के पर्व पर सूर्य अपनी दिशा बदलता है। बदलाव का संकेत। सूर्य के इर्द-गिर्द अपनी धुरी पर गोल-गोल घूमते हुए पृथ्वी अपना कोण बदल लेती है तो हमें लगता है सूर्य ने अपनी दिशा बदल ली है। लेकिन ऐसा होता नहीं है। सूर्य तो वहीं स्थिर है, घूम तो पृथ्वी रही है। कहने का तात्पर्य यह है कि वर्षों इंतजार करने के बावजूद जब हमें वांछित फल नहीं मिलता, तो हमें लगता है कि ईश्वर बदल गए हैं। वे हमारे लिए कुछ नहीं सोच रहे। कई मंदिरों, साधु-संतों, महात्माओं के मामले में ऐसा होता है। हम वर्षों उनकी सेवा-चाकरी करते हैं, लेकिन जब उनसे हमें मनचाहा परिणाम नहीं मिलता, तो हम किसी दूसरे मंदिर की राह पकड़ लेते हैं। हम किसी अन्य महात्मा, साधु-संत की शरण में चले जाते हैं। यानी हम अपनी दृष्टि और कोण दोनों बदल लेते हैं, लेकिन क्या कभी हमने यह सोचा कि ऐसा आख़िर हुआ क्यों?

हम जहां भी गए, जिस भी मंदिर गए, साधु-संतों, ऋषि-मुनियों के पास गए, हमने पहले से ही यह तय कर लिया था कि हमें इस भक्ति-सेवा के बदले फलां चीज़ चाहिए। बस, इसी कारण हमारे मन में

खोट नज़र आने लगती है। जैसे पृथ्वी अपनी धुरी पर ही घूमते हुए दिशा बदलती है, उसी प्रकार हम अपने भाव बदल लेंगे, तो दुनिया जो हमें अभी आड़ी-टेढ़ी, उल्टी-सीधी दिखती है, वो सीधी और सरल नज़र आने लगेगी। कहते हैं, नज़र बदलो तो नज़ारे बदल जाते हैं।

साईं हमारे अंदर हमेशा मौजूद हैं, लेकिन हम अपने लालच में इतने मगन हैं, कि हमने अभी उनसे हाथ नहीं मिलाया है। साईं की अमृत कथा उनसे शेक हैन्ड करने का एक प्रयोजन या आयोजन ही तो है, एक ज़रिया ही तो है। अगर हम उनके चरण पखारेंगे और उनके चरणों की धूल अपने माथे पर लगाएंगे। वो चरण गंगा, जिसमें दासगणु महाराज (शक संवत 1800 में गणपतराव दत्तात्रेय सहस्त्रबुद्धे को बाबा का सान्निध्य मिला और इन्होंने बाबा पर कई मधुर कविताओं और साहित्य की रचना की) को बाबा ने प्रयाग स्नान कराया था, वो चरण गंगा, जो हर साईं अमृत कथा में बहती है, हम उसमें डुबकी लगाएंगे, तो सब पवित्र हो जाएगा।

साईं बाबा अजब फ़नकार हैं। वे बेहद दयालु, बड़े कृपालु हैं। कृपा करते ही रहते हैं, और जो साईं की अमृत कथा में आते हैं, वे बाबा की कृपा से बाबस्ता हो चुके हैं, तभी तो आते हैं। हम साईं के पास जाते हैं। उनसे कुछ माँगते हैं, वे मुस्कुराते हुए हमें दे देते हैं। बस, हमारा लालच बढ़ जाता है। हम फिर माँगने जाते हैं, बाबा फिर से हमारी झोली भर देते हैं। हम माँगते जाते हैं और बस माँगते ही जाते हैं। बाबा भी हमें देते चले जाते हैं। एक वक्त ऐसा आता है जब हम माँगते-माँगते थक जाते हैं, लेकिन बाबा देते-देते कभी नहीं थकते।

बाबा से हमने जो माँगा, वो पाया। कुछ हमने अपने लिए लिया, तो कुछ अपनों के लिए। अपने आस-पड़ोसी, समाज, देश, दुनिया में शांति, सद्‌भावना, प्रगति, आर्थिक-सामाजिक सम्पन्नता के लिए भी हम बाबा के आगे झोली फैलाते हैं। बाबा कभी मना नहीं करते क्योंकि इन्कार शब्द बाबा की शब्दावली में नहीं है। वे मुस्कराते हुए हमारे ऊपर परोपकार बरसाते जाते हैं।

जो हमें माँगने पर मिलता जाता है, उसे हम चमत्कार कहने लगते हैं। बाबा वही चमत्कार करते हैं। यह उनकी एक लीला है। वो हमको इतना कुछ देते जाते हैं कि एक स्थिति ऐसी आती है जब, हमारे भीतर डर बैठ जाता है। बाबा ने हमें जो दिया, कहीं वो किसी ने छीन लिया तो? हर चीज़ की नश्वरता का अहसास होने लगता है।

कुछ लोग साईं पर अपना एकल अधिकार समझने लगते हैं। उन्हें यहाँ तक डर लगने लगता है, कि कहीं साईं कृपा उनसे कोई छीन न ले। लेकिन ऐसा नहीं है। साईं तो रोशनी है, पानी हैं, हवा हैं, जिन पर सबका अधिकार है। वे सर्वव्यापी हैं, सबका हित सोचते हैं। जैसे हवा, पानी और रोशनी को मुट्ठी में कैद करके नहीं रखा जा सकता, ठीक वैसे ही बाबा को बंदी नहीं बनाया जा सकता। हाँ, अगर हम उन्हें मन में उतार लें, तो वे सदा के लिए वहाँ विराजे रहेंगे। हमेशा हमारा मार्गदर्शन करते रहेंगे। उनकी कृपा हमेशा हमारे ऊपर बनी रहेगी। साईं की दी गईं चीज़ें नश्वर नहीं है। पानी, हवा और रोशनी अपना रूप बदलती है, लेकिन नष्ट नहीं होती। पानी भाप बनकर आकाश में उड़ जाता है, लेकिन पुनः बादलों के ज़रिये बारिश बनकर हमें तरबतर कर देता है। हवा और रोशनी का व्यवहार और चरित्र भी ऐसा ही है।

अपने मन से यह डर निकाल दो, भ्रम से बाहर आ जाओ। साईं कृपा कभी नहीं छिन सकती। जो छिन सकता है, वो तो नश्वर विलासिता की चीज़ें हैं। जो साईं की कृपा से उनके चरणों में विराजा है, वो यह दावा कर सकता है कि हम भले ही बाबा से विमुख हो जाएं, लेकिन यदि बाबा ने एक बार हम पर कृपा की है, तो वो ज़िंदगी भर बनी रहेगी।

तब की बात...

एक बहुत बड़े वकील रहे हैं जस्टिस खापर्डे। उन्होंने अपनी डायरी में कुछ यूं लिखा है–बाबा ने उनसे एक बार कहा था कि मनुष्य की दी हुई वस्तुएँ तो सारी समाप्त हो जाएंगी लेकिन परमपिता परमात्मा के दिए उपहार

कदापि नष्ट नहीं हो सकते।

साईं से सीधी सीख...

बाबा की कृपा क्यों कभी ख़त्म नहीं होगी, क्यों उसे कोई हमसे नहीं छीन सकता? वो सारे उत्तर बाबा के उपरोक्त वाक्य में मिल जाते हैं। मनुष्य को मनुष्य के ज़रिये प्राप्त सारी चीज़ें नश्वर हैं, लेकिन जो भगवान की देन है, वो कभी ख़त्म नहीं होगी। उनके सान्निध्य से हमें जो भी मिलेगा, वो हमेशा हमारे साथ रहेगा। उनके आशीर्वाद के रूप में।

क्या कभी हमने सूर्य को ख़त्म होते देखा है या कभी देख पाएंगे? सूर्य नित्य एक छोर पर अस्त होता है, तो दूसरे छोर से उदय होता है। सूरज और चाँद डूबते नहीं हैं, वो केवल हमें दिखना बंद हो जाते हैं। हम जिस छोर पर बैठे हैं, वहां से दूसरा छोर नही दिखता। ठीक वैसे ही बाबा का दिया कभी नश्वर नहीं होता। उसके छीने जाने या नष्ट हो जाने का भ्रम ही हमें चिंतित करने लगता है। ये चिंताएं, भ्रम हमारा लालच हैं। हमारा वश चले, तो हम अपनी गलियों, चौबारों से गुज़रने वाली हवा, रोशनी और पानी को भी दूसरों की पहुंच से दूर कर दें। एकछत्र राज्य की सोच ही हमारे मन में डर पैदा करती है। अपना साम्राज्य बिखर जाने, छीने जाने का भय पैदा हो जाता है।

तब की एक और बात...

बाबा मस्ज़िद में सदा दिया जलाए रखते थे। दिया यानी रोशनी का प्रतीक। एक छोटा-सा दिया बड़े से बड़े अंधकार को चीर सकता है। बाबा शाम को दुकानदारों से भिक्षा में तेल मांगकर लाते थे और दिया जलाते थे। मनुष्य के मन में ईर्ष्या और लालच बहुत जल्द घर कर जाता है, ऐसा हुआ भी। दुकानदारों ने सोचा कि यह फ़क़ीर तो रोज़-रोज़ मुफ़्त में तेल मांगने आ जाता है, ऐसा कब तक चलेगा? आख़िरकार एक दिन उन्होंने बाबा को तेल देने से मना कर दिया।

बाबा कुछ नहीं बोले। मस्ज़िद आए और सूखी बत्तियां दियों में डाल दीं। फिर टमरेल उठाया, जिसमें नाम मात्र का तेल बचा था। बाबा ने उसमें पानी मिलाया और दियों में उड़ेल दिया। दिये पूर्व की भाँति टिमटिमाने लगे। पानी से दिये जलते देख दुकानदारों की आँखें फटी रह गईं। वे बाबा का चमत्कार देखकर शर्मिंदा हो गए।

साईं से सीधी सीख...

बाबा ने पानी को तेल बनाकर दुकानदारों की आंखों में शर्मिंदगी का पानी ला दिया था। यह बदलाव का संकेत था। वैसे सोचिए बाबा को टूटी-फूटी मस्ज़िद में दिये चमकाने की क्या आवश्यकता थी? और एक फ़क़ीर को अंतर भी क्या पड़ता है, अंधेरा रहे या उजाला? लेकिन बाबा हमेशा दिया जलाते रहे, ताकि मस्ज़िद में कोई आए, तो उसे ठोकर न लगे। वो अंधेरे से डरे बगैर, तसल्ली से वहां बैठ सके। दुकानदारों ने सोचा कि यह फ़क़ीर आज तेल मांग रहा है, कल कुछ और माँगेगा! बस इसी सोच ने उनके अंदर से परोपकार, सहायता, इन्सानियत की भावना ख़त्म कर दी। उन्होंने यह नहीं सोचा कि उनकी थोड़ी-सी मदद से दिया जल रहा है, प्रकाश हो रहा है। बाबा ने इस चमत्कार के ज़रिये दुकानदारों के भीतर पैदा हुए अंधकार को उजाले की तरफ़ ले आए। बाबा का सान्निध्य हमारे अंदर उजाला पैदा करता है, जो तमाम किस्म के अंधकार को दूर करता है। साईं भी हमारे अन्दर उजाला करते हैं और उन्हें उजाला करने के लिए किसी माध्यम की ज़रूरत नहीं पड़ती। जैसे पानी मिले तेल से बाबा ने मस्ज़िद में उजाला कर दिया, ठीक उसी तरह साईं हमारे अन्दर के सकारात्मक गुणों से नकारात्मकता का नाश कर देते हैं।

बाबा भली कर रहे

10

साईं मन में विराजे हैं

अंदर बहुत अंधकार हो, तो मिले कहां भगवान।
साईं तो कण-कण में व्याप्त हैं, देखो अपना मन।।

ईश्वर ने कभी अपने भक्तों को ऊँच-नीच, छोटे-बड़े के भेद में नहीं रखा। ईश्वर तो मित्रवत बर्ताव करते हैं। वे एक सच्चे दोस्त की तरह हमें अच्छी संगत देते हैं, सही मार्ग प्रशस्त करते हैं। साईं बाबा के सान्निध्य में जितने भी महानुभाव रहे, बाबा उनसे हमेशा मित्रवत व्यवहार करते थे।

जब मैं तुम हूँ, तुम मेरे अंश हो, फिर काहे का भेद।
न मैं ऊंचा न तुम नीचे, तो फिर व्यर्थ हैं सारे खेद।

ईश्वर और उसके भक्त के बीच कभी भेद हो नहीं सकता क्योंकि मनुष्य ईश्वर का ही तो अंश है यानी जब ईश्वर कण-कण में विराजे हैं, तो मनुष्य भी ईश्वरतुल्य है। बस आवश्यकता कर्म-दुष्कर्म के बीच का बारीक अंतर समझने की है। ईश्वर ने जात-पात, धर्म-कर्म के आधार पर कभी भी अपने भक्तों के बीच भेद नहीं किया। जैसे भगवान राम ने शबरी के जूठे बेर खाकर यह संदेश दिया कि जात-पात, धर्म-कर्म से किसी इन्सान को ऊंच-नीच में नहीं बाँटा जा सकता है। ठीक वैसे ही साईं बाबा भी सभी धर्म और सम्प्रदाय के लोगों को बराबर का सम्मान देते रहे, प्यार करते रहे।

जस्टिस खापर्डे को बाबा ने अलग-अलग समय में अपने पास प्रवास

करने का मौका दिया था। इसमें एक अल्पकालीन था और एक करीब 11 महीने का। जस्टिस खापर्डे शिर्डी में बाबा के सान्निध्य में रहे। बाबा जब शिर्डी में लेंडी बाग की तरफ आते-जाते थे, तो जस्टिस खापर्डे से कहते थे-काय सरकार! कसा काय? (क्यों मालिक! कैसे हो?)। साईं की करुणा देखिए, अपनेपन का भाव देखिए। स्वयं जगत के मालिक होते हुए भी दूसरों से पूछते हैं-क्यों मालिक! कैसे हो?

हमारे भीतर यह गुण मालूम नहीं कब आएंगे! लेकिन जिस दिन भी आ गए, मानकर चलिए हम बाबा के सच्चे भक्तों-अनुयायियों की अगली पंक्ति में सम्मिलित होंगे। उनके चहेतों में शामिल हो जाएंगे। एक नेकदिल इन्सान कहे जाने लगेंगे। ज़िंदगी में इससे बड़ा और कोई सुख नहीं, जब दूसरे हमारा आदर करें। प्यार से बोले। सवाल यह है कि जब ईश्वर मनुष्यों के बीच कोई भेद-भाव नहीं करता तो फिर हम किस अहंकार में जी रहे हैं?

खाली हाथ सब आए जग में, क्या लेकर के जाएंगे।
तुम अमीर हो या गरीब, सब माटी में मिल जाएंगे।

अगर हमें कुछ मिल जाता है, तो फूल कर कुप्पा हो जाते हैं। दासगणु महाराज से एक बार बाबा ने कहा था-दासानुदास, मैं तुम्हारा ऋणी हूँ। वो ख़ुद को दासानुदास का भी ऋणी मानते थे। वे कहते थे-मैं अल्लाह का ऋणी हूँ, मैं दास हूँ। तुम मेरे गुण गाते हो, इसलिए दासगणु दासानुदास, मैं तुम्हारा ऋणी हूँ।

प्रकृति की देन और ईश्वर यानी बाबा की भक्ति के अलावा सारी भौतिक सुख-सुविधाएं नश्वर हैं। बाबा जब हमें नश्वरता का अहसास करा देते हैं, तो हमें उनसे अनुराग हो जाता है। हम उनके भक्त बन जाते हैं। उनसे प्रीति करने लगते हैं। हमारे भीतर से कुछ खोने का डर निकल जाता है। भगवान में प्रीति याने भक्ति। अपने इष्ट से जब आप प्रेम करते हैं, तो आप धीरे-धीरे उससे एकाकार हो जाते हैं। तब आप साईं बन

जाते हैं। बाबा आपको आप से हर लेते हैं। 'मैं' का भाव ख़त्म कर देते हैं और 'हम' का भाव जगा देते हैं। साईं हो जाने का आशय यही है कि मैं यानी अहम का नाश और हम यानी एकजुटता, अपनत्व का उदय। मन में साईं को समाईये और उन्हें जगाइए।

बाबा की तलाश में लोग वर्षों गुजार देते हैं। धन-दौलत और समय लुटा देते हैं, लेकिन फिर भी जब उन्हें बाबा के दर्शन नहीं होते, तो वे निराश हो जाते हैं। सच क्या है, यह जान लीजिए। जैसे मृग अपनी नाभि में ही कस्तूरी होने के बावजूद खुशबू के चलते उसे यहाँ-वहाँ ढूंढते हुए भटकता है, ठीक वैसी ही मनोस्थिति हमारी भी है। साईं हमारे दिल में बैठे हैं, लेकिन हम उन्हें यहाँ-वहाँ तलाशते फिरते हैं। दरसअल, हमने कभी उन्हें जगाने की कोशिश ही नहीं की। वे सुप्त अवस्था में हमारे ही अंदर विराजे हैं। हम जब उन्हें जागृत करेंगे, तब ही तो उनकी आहट होगी। उनकी हलचल हमें नये मार्ग पर ले जाएगी। भ्रम से निकालेगी। उन्हे तात्या की तरह झिंझोड़ कर उठाने की कोशिश तो करो।

दरअसल, हम बाबा को ढूंढने बहुत जतन करते हैं, लेकिन कभी अपने अंदर झांककर नहीं देखते। वे तो हमारे दिल में विराजे हैं। लेकिन हम उन्हें सोता हुआ रखते हैं। जगाने की कोशिश नहीं करते। जिस दिन हमारे अंदर विराजे साईं जाग उठेंगे, देखना हमारे मन से असुरक्षा, डर, वैमनस्य, मेरा और तुम्हारा का भाव सब कुछ निकल जाएगा। हम बाबा के रंग में रंग जाएंगे। एक ऐसा रंग, जिसमें कोई भेदभाव नहीं होता। जैसे पानी। उसमें जो भी रंग मिलाओ, वो उसके जैसा हो जाता है। जब हमारे अंदर के साईं जाग उठेंगे, तो हम भी सबको बाबा की तरह एक नज़र से देखने लगेंगे।

ढूंढा सकल जहाँ में, तेरा पता नहीं,
और जो पता मिला है तेरा, तो मेरा पता नहीं।

तब की बात...

बाबा हमेशा भिक्षा पर जीवन यापन करते रहे। वे भिक्षुक के रूप में किसी के भी दरवाजे पर खड़े होकर पुकारते थे–ओ माई, एक रोटी का टुकड़ा देदे। एक रोटी का टुकड़ा प्राप्त करने वे अपने दोनों हाथ फैलाते थे। उन्हें सूखी–रूखी रोटी, जो भी मिल जाती, वे उसे बड़े चाव के साथ खाते। थोड़ा ख़ुद खाते और बाकी का बचा हुआ मस्ज़िद में एक कुंडी में डाल देते, ताकि वहां के कुत्ते, बिल्लियाँ, कौवे आदि का पेट भर सके। एक स्त्री मस्ज़िद में झाड़ू लगाती थी, वो भी कुछ टुकड़े उठाकर अपने साथ ले जाती थी।

साईं से सीधी सीख...

जब कोई व्यक्ति ऐसा करते दिखेगा, तो दुनियावाले उसे पागल ही समझेंगे। क्योंकि हमारी आँखों पर अपने–पराये, ऊंच–नीच, जात–पात का पर्दा जो पड़ा है। जीव–जन्तु हमारे समान कैसे हो सकते हैं? हम उनके साथ भोजन कैसे कर सकते हैं? अहंकार हमारे अंदर इतना प्रबल है कि हम किसी के आगे हाथ क्यों फैलाएं? ...और हर किसी के घर का खाना कैसे खा सकते हैं क्योंकि हम तो महान जाति के हैं? घर में पैसे न हुए तो क्या, चोरी–चकारी करके पेट भर लेंगे, लेकिन किसी के आगे हाथ क्यों फैलाएं?

ऐसा ही होता है न????

लेकिन ईश्वर कभी इस भ्रम में नहीं पड़ता। यह मनुष्य की नियती है, आदत है कि जब तक पत्थर को मंदिर में न रखा जाए, वो उसे नहीं पूजता। एक कहावत है, अकल पर पत्थर पड़े रहना। इसका आशय होता है कि मस्तिष्क में सोचने–समझने की क्षमता न होना। लेकिन जब यह पत्थर मंदिर में विराजमान होता है, तो हम उसके आगे सिर झुकाते हैं, छूते हैं। तब यह कहावत बदल जाती है क्योंकि तब वो पत्थर भगवान बन चुका होता है और हम उससे अपना सिर और मस्तिष्क इसलिए स्पर्श कराते हैं, ताकि उसके घर्षण से हमारी बुद्धि की मशीन चल पड़े।

बाबा को लोग शुरुआत में पागल समझने लगे लेकिन जब उन्हें बाबा की लीला समझ आई, तो वे नतमस्तक हो गए। बाबा ने सबके हाथ से खाना खाया, क्योंकि वे संदेश देना चाहते थे कि हाथ बदलने से आटा-रोटी का स्वरूप नहीं बदल जाता। उसका गुण तो एक-सा रहता है। हां, अगर रोटी बनाने वाला निपुण हो, निष्पाप होकर, अच्छे मन से आटा गूंथे, तो स्वाद बेहतर हो जाता है। ठीक वैसे ही जैसे एक भक्ति में निपुण मनुष्य सबकी भलाई सोचता है।

साईं तेरे रंग में, हम ऐसे रंगे हैं।
हमें लगता है कि रहें, हम संग सदा तेरे।

बाबा भली कर रहे

11

साईं की शरण में जाने का मतलब समझें

अहंकार न कीजिए, लेकर गुरुजन का नाम।
साईं-शरण स्वयं तीर्थ है, जैसे चारों धाम।।

गुरु यानी ज्ञान, एक सच्चा मित्र परिजन, मार्गदर्शक, आदि। गुरु कभी छोटा-बड़ा नहीं होता। गुरु तो सभी के एक समान होते हैं। कई लोग इस अहंकार में पड़ जाते हैं कि मेरे गुरु का ज्ञान, फलां के गुरु से कहीं ज़्यादा है। मेरे गुरु का नाम, फलां के गुरु से कहीं अधिक है।

अकसर हम लोग बड़े दंभ और अहंकार से कहते हैं कि मैं आजकल फलाने संत की शरण में हूँ। बड़ी मेहरबानी, जो आपने ऐसा कहा कि आप संत की शरण में हैं! मनुष्य इसी सोच के कारण अपने गुरु के ज्ञान और सामने वाले के गुरु का आशीर्वाद ढंग से नहीं ले पाता। उल्टे हमें यह कहना चाहिए कि संत ने हमें शरण में ले रखा है। हम कहते हैं कि हमने आजकल फलां को अपना गुरु बना रखा है। बड़ी मेहरबानी आपकी, जो आपने सामने वाले को अपना गुरु बनाने लायक समझा! हम यह लिखकर आपका उपहास नहीं कर रहे, बल्कि आपको आपके विचारों और भावनाओं की असलियत से रूबरू कराने का प्रयास कर रहे हैं।

गुरु किसी को क्यों बनाना? जब तक हम शिष्य बनने लायक नहीं हैं, हम गुरु पाने के पात्र भी नहीं हैं। शिष्य याने शासितम् योग्यः। यानी वो, जिस पर शासन किया जा सके, वह शिष्य होता है। शासन से मतलब,

गुरु जिन अवगुणों पर विजयी पाने का आदेश दे, हम उनको अपने काबू में कर सकें, उन पर शासन कर सकें। शिष्य वो नहीं जो गुरु से कहे, मैं आपकी चप्पल ला देता हूँ या फर्श साफ़ कर देता हूँ। ऐसे काम को करने से कोई बेहतर शिष्य नहीं बन सकता। अगर ऐसा होता तो सैकड़ों-हजारों-लाखों लोग रोज़ मंदिरों-मस्ज़िदों, गुरुद्वारों, गिरिजाघरों में जाकर साफ़-सफ़ाई करते हैं, लेकिन फिर भी उन्हें जीवन का सही मार्ग नहीं मिल पाता। वे यह काम एक औपचारिकता के तौर पर करते हैं, सच्चे मन से नहीं। ...और जो लोग सच्चे मन से यह काम करते हैं, उनका जीवन सफ़ल हो जाता है।

लोग साईं बाबा को संत मानते हैं। आमतौर पर लोग ख़ुद को संत कहलाने में बड़ा घमंड महसूस करते हैं, लेकिन बाबा के साथ ऐसा कभी नहीं रहा। वे तो लोगों को अपना साथी मानते थे, मित्र बोलते थे। अपनों की तरह प्रेम-वार्तालाप करते थे। फटे कपड़े पहनते थे और भिक्षा माँगकर अपना गुजारा करते थे। अगर संत शब्द की व्याख्या करें या उसे परिभाषित करें, तो स+अंत = संत यानी जो अपनी इच्छाओं के अंत को अपने साथ-साथ लेकर घूमता है, वो होता है संत। संत वो है, जिसे यह अहसास होता है कि सारा जग नश्वर है। मुझे किसी से कुछ नहीं चाहिए। लेकिन मैं किसी के काम आ सकूं, जब यह भावना किसी के अंदर पैदा हो जाती है जागृत हो उठती है, तो वह संतत्व की ओर अग्रसर हो जाता है।

गोस्वामी तुलसीदास ने लिखा भी है-संत संगति संसृति कर अंता। मतलब संत की संगति से हमारे आस-पास के जगत से समस्त मोह-माया का अंत होता है।

साईं का जयकारा...

अनंत कोटि ब्रह्मांड नायक राजाधिराज योगीराज परमब्रह्म श्री सच्चिदानंद सदगुरु श्री साईंनाथ।

इस जयकारे में पहला शब्द अनंत है। हम सभी ने थोड़ी-बहुत गणित तो पढ़ी ही होगी। जब किसी अंक को शून्य से विभाजित करते हैं, तो

अनंत यानी इनफिनिटी की प्राप्ति होती है। साईं बाबा के चरित्र को शून्य अहंकार, विलासिता, दंभ, दुर्गुणों से विभाजित करें तो अनंतता वैसे ही मिल जाती है। साईं में दुर्गण तो देखने को ही नही मिलते थे। वे अगर किसी से नाराज़ भी होते या किसी को फटकारते भी तो केवल उसे अहसास कराने के लिए कि उसने गलती की है। वे तुरंत सामान्य भी हो जाते। संत ज्ञानेश्वर ने लिखा भी है कि संत की मार में भी व्यक्ति का भला छिपा होता है।

दूसरा शब्द है **कोटि**। हिंदी में कोटि के दो अर्थ होते हैं करोड़ों और भाँति-भाँति। साईं कोटि-कोटि में समाए हुए हैं। साथ ही साईं करोड़ो जीवों-जड़ और चेतन-सभी में समाये हैं। **साईं ने अपने जीवनकाल में कहा भी है- ईशावास्यविदम् सर्वम। यत किन्चित जगत्याम् जगत**। सभी प्राणियों में मेरा ही वास देखो। यही कारण है कि जब कभी हम किसी भूखे को भोजन कराते हैं, तो वो सीधा साईं को जाता है। उन्हें तृप्त करता है। उन्हें सुकून देता है। ...और जब साईं सुकून पाते हैं, तो सारे जग का अपने आप भला हो जाता है। किसी ज़रूरतमंद की मदद करना साईं को हमेशा भाता है।

तब की बात...

एक थीं लक्ष्मीबाई। एक दिन बाबा, जो अपनी बढ़ती उम्र के कारण भिक्षाटन हेतु नहीं जा पाते थे, ने उनसे कहा-माई, मुझे बहुत भूख लगी है। कुछ खाने को ले आओ। माई दौड़ी-दौड़ी गईं और रोटी ले आईं। बाबा के समीप ही बाहर एक कुत्ता बैठा हुआ था। बाबा ने रोटी ली और उसके आगे फेंक दी। लक्ष्मीबाई हैरत से बोलीं-बाबा ये क्या करते हो? मैं इतनी मेहनत से रोटी लाई और तुमने कुत्ते के सामने फेंक दी। बाबा ने मुस्कुराते हुए जवाब दिया-लक्ष्मी! जब कोई किसी भूखे को भोजन कराता है, तो वह मुझे ही भोजन करा रहा है। तूने इस कुत्ते के लिए जो रोटी बनाई है वह मुझे ही आकर मिली है।

साईं से सीधी सीख...

मित्रों, आपको भी जब भी ऐसा मौका मिले, इसे छोड़िए नहीं। भूखे को खाना दीजिए, प्यासे को पानी। अन्नदान के लिए पात्रता नहीं देखी जाती। यह दान तो पीढ़ियों को पुण्य प्राप्त कराता है। जब भूखे को तृप्ति मिलेगी, साईं को खुशी मिलेगी। कबीरदास ने लिखा है किः

साईं इतना दीजिए जा में कुटुम्ब समाए,
मैं भी भूखा ना रहूँ, साधु न भूखा जाए।

इस जयकारे में तीसरा शब्द आता है **ब्रह्मांड**। ब्रह्मांड क्या है? जिसका कोई ओर-छोर नहीं दिखता उसे ब्रह्मांड कहते हैं। साईं का जन्म किस कुल में और किस जगह हुआ, इस बारे में कोई भी पुष्टि के साथ कुछ नहीं कह सकता। सिर्फ़ क़यास लगाये जा सकते हैं। साईं तब भी थे जब हम और आप कोई भी नहीं थे और साईं तब भी होंगे जब हम और आप नहीं होंगे। इस प्रकार साईं ब्रह्मांड-स्वरूप हुए। ब्रह्मांड के रहस्य को उजागर करने के लिए दुनियाभर में बड़े-बड़े प्रयोग चल रहे हैं। आगे भी चलते रहेंगे, क्योंकि हम ब्रह्मांड का एक रहस्य खोजेंगे, तो दूसरा सामने आ जाएगा। लोग ब्रह्मांड के जनक परब्रह्म को खोजने की बात करते हैं। उन्हें ढूंढने में सारी ज़िंदगी खपा देते हैं लेकिन ईश्वर कोई रहस्य नहीं है, वे तो अनंतता हैं, जो हमारे अंदर ही मौजूद है। ईश्वर सुलभ हैं। वे तो कण-कण में विद्यमान हैं। हम ही उन्हें देख नहीं पाते।

सुलभता ईश्वर का आभूषण है। आप एक बार पूरे मन से, निर्मल मन से, निःस्वार्थभाव से साईं का नाम पुकारो, देखना वे आपके सामने होंगे। यह ज़रूरी नहीं कि साईं अपने उस रूप में आपको दर्शन दें, जो तस्वीरों में नज़र आते हैं। वे किसी भी रूप में, आकार में आपके सामने अवश्य आएंगे। साईं को पाना बिलकुल भी मुश्किल नही है।

साईं के जयकारे में अगला शब्द आता है **नायक**। नायक कौन होता है? सब जानते हैं। फिल्मों में देखा होगा। जो बुराई से लड़ता है। अच्छाई

के मार्ग पर चलता है। लोगों की भलाई के लिए काम करता है। सबको खुश रखने की कोशिश करता है, वो नायक है। वो हीरो होता है। साईं भी हमारे नायक हैं। उन्होंने भी अपने भक्तों को मुश्किलों और असंभव परिस्थितियों से बाहर निकाला है। अब भी निकाल रहे हैं और आगे भी निकालेंगे।

सिनेमा में जब नायक बुराइयों पर विजय पा लेता है, तो फिल्म पूरी हो जाती है। यानी क्लाइमेक्स के बाद दी एंड लिखा आ जाता है। हमारे असली नायक साईं के मामले में ऐसा नहीं है। यहाँ तो जैसे ही हमारे भीतर का द्वंद्व ख़त्म होता है, साईं जैसे ही द्वंद्व ख़त्म करते हैं, ज़िंदगी की असली फिल्म शुरू हो जाती है। जब हमारे ऊपर साईं की कृपा होती है, तो भवसागर तो यूं ही पार हो जाते हैं।

अगला शब्द आता है **राजाधिराज**। राजाधिराज यानी राजाओं के भी राजा। बड़ा से बड़ा व्यक्ति शिर्डी में बाबा के दर्शन के लिए कतार लगाए खड़ा रहता है। इन कतारों में शामिल होकर सब एक समान हो जाते हैं। कुछ लोग कतार में लगने से घबराते हैं। कइयों का तो यह लगता है कि कतार तो आम आदमी के लिए होती हैं, वे तो खास हैं। उनके लिए तो रास्ता साफ़ होना चाहिए। बाबा के दर्शन विशेष तरीके से होना चाहिए। लेकिन क्या कभी आपने कतार के मायने समझे हैं? भगवान के दर्शन के लिए लगने वाली कतार एक संदेश देती हैं। ईश्वर के भक्तों में कोई छोटा नहीं, कोई बड़ा नहीं। ऊंच-नीच का कोई भेद नहीं। छुआछूत के कोई मायने नहीं। बाबा के दरबार में भी यह होता है। बाबा के चरणों में सिर झुकाने से सारी अकड़ ख़त्म हो जाती है। वो अकड़, जो धन-दौलत, बाहुबल, अहंकार, अपने-पराये, दुर्विचार जैसी बुराइयों से जन्मती है। बाबा के चरणों में सिर झुकाते ही, सारे पाप धुल जाते हैं। कतार में खड़े व्यक्ति को देखकर यह कह पाना मुश्किल होता है कि कौन राजा और कौन रंक। बाबा राजाधिराज हैं। जिसके चरणों में राजा भी अपना सिर झुकाए, वह राजाधिराज होता है। साईं के आगे राजा भी हाथ जोड़कर

दया की भीख माँगते हैं।

इसमें राजाधिराज के बाद शब्द आता है **योगीराज**। योग यानी शारीरिक और मानसिक व्याधियों (रोगों) को जड़ से मिटाने का पारंपरिक तरीका। हम योग से अपने हाथ-पैर की अकड़न मिटा लेते हैं। एक नाक से सांस निकाल कर कहते हैं कि हम योग कर रहे हैं। नए जमाने में तो योग अब योगा हो गया है। योगा भी अब टी.वी देखकर होने लगा है। यह योग अधूरा है क्योंकि महज शारीरिक श्रम को योग कहना सर्वथा अयोग्य होगा।

योग वह कला है, जिससे हमारा मन भटकने से रुकता है। शास्त्रों के अनुसार जो चित्त की वृत्ति को रोक दे वो योग है। जो चित्त को विचलित होने से रोके वो योग है। योग यानी चित्त वृत्ति निरोध। बाबा का चित्त कभी भटकता नहीं था। भक्त उनके पास आते थे और बाबा उन्हें वो सब दे देते थे, जिसकी वो कामना लेकर आते थे। देने में कुबेर की तरह दानवीर और ब्रह्मचर्य के पालन में हनुमान की तरह दृढ़। कुछ भी हो, साईं कभी भी किसी भी प्रलोभन से विचलित नहीं हुए इसलिए तो वो हुए योगीराज।

एक यौगिक क्रिया है धौती। यह योग आंतों को स्वच्छ करने के लिए किया जाता है। शिर्डी के रहवासियों ने कई बार देखा कि बाबा मुंह से कपड़ा डाल अपनी आंतों को स्वच्छ करने के लिए उन्हें शरीर से बाहर निकालते। उसके बाद उन्हें सूखने के लिए लटका देते। जब आंतें सूख जातीं, तो वापस अंदर डाल देते।

हेमाडपंत ने अपनी पुस्तक साईं सच्चरित्र में भी इसका उल्लेख किया है। बाबा एक और क्रिया करते थे, जिसे खंडयोग कहते हैं। बाबा अपने शरीर के सारे अवयव अलग-अलग कर लेते थे। हाथ कहीं, पांव कहीं। एक बार रात में जब बाबा यह क्रिया कर रहे थे, तो एक भक्त वहाँ पहुँच गया। वह डर गया कि बाबा तो क्षत-विक्षित पड़े हैं। उसने सोचा पुलिस में जाऊं, लेकिन यह सोचकर और भयभीत हो गया कि जाकर बताऊंगा क्या? कहीं पुलिस मुझे ही न पकड़ ले। वह चुपचाप घर जाकर सो गया।

दूसरे दिन वह डरते-डरते मस्ज़िद गया कि देखूँ वहाँ क्या हो रहा है। वहां जाकर उसने देखा कि बाबा घूनी में लकडियाँ डाल रहे हैं। भक्त डर के मारे उल्टे पांव भागने ही वाला था कि बाबा ने मुस्कराते हुए उसे पुकारा, अरे आजा, तू भी धूनी में लकड़ियाँ डाल दे थोड़ी सी।

बाबा के जयकारे में फिर एक शब्द आता है **परमब्रह्म**। साईं सच्ची में परमब्रह्म थे। उत्पत्तिकर्ता ब्रह्म, स्थिति के स्वामी विष्णु और लय के प्रदाता साक्षात् महादेव के समान साईं भी इन स्थितियों पर अपना पूर्ण नियंत्रण रखते थे। सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण सभी साईं में बराबर दिखाई पड़ते है। साईं बाबा में लोगों को साक्षात् ईश्वर के दर्शन होते थे। अलग-अलग रूप में बाबा ने दर्शन देकर अपने परमब्रह्म होने का परिचय दिया।

सच्चिदानंद! सच्चिदानंद याने जो हमारे चित को सत्यता का बोध करा दे और फिर उससे हमें आनंद की प्राप्ति हो। वो बाबा के चरणों में जाने से हमें हो ही जाती है। हमें अपने मूल स्वरूप में स्थित कर, साईं हमारे चित्त को भटकने से रोकते हैं और सम परिस्थितियों में हमें आनंद की अभूतपूर्व प्राप्ति होती है। साईं को इसी कारण से सच्चिदानंद स्वरूप माना जाता है।

सद्गुरु! सद्गुरु यानी वो व्यक्ति, जो हमारे मन के अंदर के अंधकार को हर लेता है। अंदर उजियारा भर देता है। गुरु मत ढूंढो अपने आप को योग्य शिष्य साबित करो। मुक्ति की उत्कंठा रखो बस आपको सद्गुरु मिल जाएंगे। ...और सद्गुरु क्या भगवान यानी बाबा स्वयं किसी न किसी रूप में आपके सामने होंगे। आपका मार्गदर्शन करने। आपको अच्छाई और बुराई में फर्क बताने। जीवन को आनंदित करने।

साईं से सीधी सीख...

ईश्वर जब अवतार लेता है, तो सीधा आशय होता है कि मनुष्य भटक गया है और उसे सही रास्ता दिखाना है। पृथ्वी पर पाप बढ़ गए हैं और लोगों

को पुण्य की महत्ता बताना है। भगवान ने साईं के रूप में अवतार लिया। वे अचानक अवतरित हुए थे। भगवान हमारे मन में अचानक ही आते हैं, अकस्मात्। कारण अगर पता हो कि भगवान आपके दरवाज़े पर आ रहे हैं, तो आप पहले से ही सारी तैयारियां करके रख लेंगे। अपनी क्षमताओं से कहीं अधिक चीज़ें जुटा लेंगे। उधार लेकर खान-पान, स्वागत-सत्कार की सामग्री का इंतजाम कर लेंगे। आस-पड़ोस में ढिंढोरा पीट देंगे कि भगवान आपके घर पधार रहे हैं। यानी आप ख़ुद को भगवान की नज़रों में श्रेष्ठ बनाने की दिशा में कोई कसर नहीं छोड़ेंगे। यही तो अहंकार है। भगवान और किसी के घर में नहीं सिर्फ़ आपके यहां आ रहे हैं, यही तो गुरूर है। जहाँ गुरूर वहाँ गुरु का वास कभी नहीं हो सकता।

भगवान अचानक इसलिए अवतरित होते हैं, ताकि आप उनके सामने कोई आडंबर न कर सकें, जैसे हैं वैसी स्थिति में सामने आएं। तभी तो आपमें बदलाव होगा। अगर आप अपनी वास्तविकता गुरु से छिपा लेंगे, तो इसका आशय तो यही हुआ कि आप बदलना ही नहीं चाहते।

हालांकि ईश्वर से कुछ भी नहीं छुपा है। वे आपके अंदर तक झाँक सकते हैं। आपके अंदर पसरे अंधकार में क्या-क्या छुपा है, वे साफ़-साफ़ देख सकते हैं, लेकिन बदलना आपको है, कोशिश आपको करनी है। भगवान तो आपको ऊर्जा दे सकते हैं, बदलाव के लिए। क्योंकि ज़ोर-ज़बर्दस्ती से किया गया बदलाव किसी काम का नहीं।

बाबा भली कर रहे

12

साईं का प्रकट होना

मेरे मन में मेरे साईंनाथ, तू रहने आ जाये।
मैं आँखें बंद करूँ, तेरा दर्शन हो जाये।।

साईं शिर्डी में अचानक प्रकट हुए। शायद उस वक्त उनकी उम्र कोई 16 साल रही होगी। साईं सबसे पहले लोगों को शिर्डी में नीम के पेड़ के नीचे दिखे थे। किसी को उनका नाम नहीं पता था। फ़क़ीरों-सी उनकी वेशभूषा थी। अत्यंत आकर्षक व्यक्तित्व, लंबे बाल, मुख पर अदम्य तेज, निर्भीक और सौम्य। वे हवा में कुछ इशारे करते और लोगों से बतियाते, मनमौजी स्वभाव के थे।

बाबा हमेशा फक्कड़ मिजाज के रहे। उन्हें दुनिया की भौतिक सुख-सुविधाओं से कोई लेना-देना नहीं रहा। मैले-कुचैले, फटे-पुराने कपड़े। जैसे बाबा को इन सब चीजों में कोई रुचि थी ही नहीं। अगर सिर्फ़ कपड़े बदलने से मन बदल जाता, नीयत बदल जाती, तो फिर लोग कपड़ो को ही पूजते। बाबा अंदर से इतने पाक-पवित्र रहे कि उनकी चमक मैले-कुचैले कपड़ों में होने के बावजूद भी उनके भक्तों के जीवन को चमकाती रहती है।

साईं का शुरूआती समय

उस समय तक बाबा का नामकरण साईं नहीं हुआ था। शिर्डी में एक विदुषी थीं बायज़ामाई। एक बड़े परिवार से ताल्लुक रखती थीं। बायज़ामाई

बाबा को अपना बेटा मानती थी। बाबा भी उनसे कहते थे-तू मेरे पूर्व जन्मों की रिश्तेदार है। पिछले जन्म में तो तू मेरी बहन थी।

बायज़ामाई बाबा के खाने का ख़्याल रखती थीं। हालांकि बाबा को खाना खिलाना बेहद टेढ़ी खीर थी। वे कभी किसी नाले के पास बैठे मिलते, तो कभी किसी पेड़ के नीचे बैठे दिखते। रात में जंगल में विचरण करते हुए भी उन्हें कभी किसी जानवर से भय नहीं होता था। बायज़ामाई रोज़ बाबा के लिए खाने का डिब्बा बांधकर जंगल-जंगल, नदी-नाले पार कर उन्हें खोजती रहतीं। जैसे ही बाबा कहीं मिलते, तो बायज़ा उनका हाथ पकड़कर पास बिठाती और मुंह में जबरन निवाला डाल देतीं। कभी-कभी प्यार से पूछतीं-क्यों, कैसा लग रहा है? ठीक खाना बना लेती हूँ न मैं? बाबा हमेशा मुस्कुराकर हां में जवाब देते। जबकि उन्हें स्वाद का कोई पता नहीं था। वो इन सब चीजों से ऊपर थे। उनके मुंह में स्वाद या बेस्वाद जैसी कोई बात नहीं थी।

फिर एक दिन अचानक बाबा शिर्डी से अर्न्तध्यान हो गए। माई परेशान। जंगल-जंगल, नाले-नाले, पेड़-पौधों के पीछे अपने बेटे को ढूंढतीं। लोग मानते हैं कि शायद बाबा जब शिर्डी में नहीं थे, तो उनका कार्यक्षेत्र कोई और जगह रही थी। इस तरह कुछ साल बीत गये। शायद एक या दो साल या फिर तीन।

धूपगांव के सरकारी मुलाजिम थे चाँद पाटिल। उनकी घोड़ी कहीं खो गई थी। वह अपनी घोड़ी की जीन लटकाए गांव- गांव, जंगल-जंगल उसे ढूंढते भटक रहे थे। ऐसे ही एक दिन चाँद पाटिल जंगल से गुज़र रहे थे कि पीछे से आवाज आई-क्यों चाँद अपनी घोड़ी ढूंढ रहे हो? वही ज़मीन पर एक पेड़ के नीचे अलमस्त फ़क़ीर के मुंह से यह सुनकर चाँद पाटिल सकते में आ गये! सोचने लगे, इन महाशय को मेरा नाम कैसे पता और यह भी कैसे पता कि मेरी घोड़ी खो गई है?

फिर आवाज आई- चाँद! वो उस छोटी वाली पहाड़ी के पीछे चले जाओ। वहीं पड़ोस में एक झरना बह रहा है, वहीं तुम्हारी घोड़ी आराम

से पानी पी रही है। चाँद पाटिल दौड़-दौड़े गए। वहाँ उन्हें अपनी घोड़ी मिल गई। चाँद पाटिल ने उसे जी भरकर प्यार किया। घोड़ी को जीन पहनाई और उसे लेकर उस फ़क़ीर, औलिया के पास आ गए। उनकी वेशभूषा देखकर चाँद ने सवाल किया-आप मुसलमान है? औलिया ने कोई जवाब नहीं दिया। बस मुस्कुरा दिए। चाँद को लगा, शायद ये हिंदू है। उसने पूछा-आप हिंदू है? उसे फिर जवाब नहीं मिला। औलिया फिर से मुस्कुराए। मुस्कुराहट ऐसी जो परमशांति का बोध कराये। औलिया ने पूछा-चाँद, चिलम पिओगे? चाँद ने कहा- हाँ बाबा! ज़रूर। लेकिन साथ ही उनके मन में प्रश्न उठा कि चिलम में रखने के लिए अंगार और उसे ढकने के लिए साफ़ी को गीला करने के लिए इस फ़क़ीर के पास पानी कहां से आयेगा।

उस औलिया ने अपने पास रखे चिमटे को उठाया और जोर से ज़मीन पर दे मारा। वहां से एक जलता अंगारा निकल आया। औलिया ने चिमटे से वो अंगारा चिलम पर रख दिया। अब पानी कहां से आएगा? इसके लिए औलिया ने अपना सटका उठाया और ज़मीन पर दे मारा। वहां से पानी की धार फूट पड़ी। चिलम तैयार। चाँद पाटिल समझ गया कि ये कोई साधारण मनुष्य नहीं है। चाँद पाटिल ने कहा-मैं आपका नाम नहीं जानता। औलिया ने कहा-मुझे किसी ने कोई नाम दिया नहीं है। चाँद ने कहा-बाबा, आप मेरे साथ धूपगांव चलिए।

चाँद पाटिल उस फ़क़ीर को लेकर धूपगांव पहुँचे। मज़े की बात देखिए! कुछ वक्त बाद चाँद पाटिल की पत्नी के भाई के बेटे की शादी तय हो गई। शिर्डी में। चाँद पाटिल ने बाबा से बाराती बनकर चलने को कहा। बाबा तुरंत तैयार हो गए। शिर्डी अपने साईं को फिर एक बार बुला रही थी। बारात शिर्डी आई और एक बरगद के पेड़ के नीचे उनके रहने का स्थान तय हुआ।

बाबा बरगद के पेड़ के नीचे बैलगाड़ी से उतरे। एक और संयोग देखिए। पास ही खंडोबा का मंदिर था। खंडोबा याने शिव। एक जमाने में

मल और मणि नाम के दो राक्षसों ने लोगों का जीना मुश्किल कर रखा था। तब देवता पहले इंद्र और फिर विष्णु जी के पास गए और उनसे मदद माँगी। लेकिन उन्हें मदद मिली शिव से। शिव ने जो अवतार लेकर उन दोनों राक्षसों का वध किया था, उस अवतार को खंडोबा के नाम से जाना जाता है। पुणे के पास जेजुरी नाम के गांव में खंडोबा देव का मुख्य मंदिर है।

खंडोबा के उस मंदिर का एक पुजारी था म्हालसापति चिमनलाल नागरे। बेहद सरल और सहज प्रकृति का व्यक्ति। बाबा बैलगाड़ी से उतरे। म्हालसापति अल्पशिक्षित थे; शिर्डी बेहद छोटा सा गांव था, जहां म्हालसापति ज़्यादा शिक्षा या यूं कहिए की ना के बराबर शिक्षा ही प्राप्त कर पाए थे।

बाबा का बैलगाड़ी से उतरना हुआ और म्हालसापति उसी वक्त खंडोबा मंदिर से अर्चना करके बाहर आ रहे थे। पता नहीं उन्होंने क्या सोचकर कह दिया या बाबा ने उनसे कहलवा दिया–**या साईं**। आओ साईं! बाबा की लीला देखिए! उन्हें अपने लिए एक नाम चुनना था और म्हालसापति ने उन्हें वह नाम दिया और जो नाम दिया वह शब्द अरबी भाषा में सूफी संतों के लिए इस्तेमाल किया जाता है, सायी। बस पड़ गया नाम उस फ़क़ीर का ...साईं। धन्य है म्हालसापति जिनके दिये नाम को स्मरण कर आज पूरी दुनिया में करोड़ों भक्त मन की शांति पा लेते है।

जात न पूछो साधू की...

साईं बारात से अलग शिर्डी में निकल पड़े और इच्छा ज़ाहिर की, मैं रात यहीं इसी खंडोबा मंदिर में रहूँगा। बाबा की यह इच्छा सुनकर म्हालसापति के माथे पर तनाव के बल उभर आए। दरअसल, म्हालसापति थे रूढ़िवादी। उन्हें लगा कि यदि इस मुसलमान से दिखने वाले बाबा को यदि मैंने खंडोबा मंदिर में रहने दिया, तो शिर्डी के लोग क्या कहेंगे?

बाबा ने उसके मन के भाव पढ़ लिए। बाबा मुस्कुराए और

बोले-कोई बात नहीं। मैं अपने लिए कोई दूसरा ठिकाना ढूंढ लूंगा। इसके बाद बाबा गांव के अंदर आए। वहां उन्हें एक पुरानी टूटी-फूटी इमारत दिखाई दी। बाबा ने उसी में डेरा जमा लिया। दरअसल वह एक पुरानी मस्ज़िद हुआ करती थी। उसमें अब इबादत बंद हो चुकी थी। आज हम उसी मस्ज़िद को द्वारकामाई के नाम से जानते हैं। साईं के इस कर्मक्षेत्र में योग्यता अनुसार भक्तों को काम, अर्थ, ज्ञान और मोक्ष की प्राप्ति होती है।

साईं अब मस्ज़िद में आ गए थे। बाबा ने उस मस्ज़िद को अपना घर बना लिया। बायज़ामाई भी खुश हो गईं। उन्होंने आगे बढ़ कर अपने बेटे को गले लगा लिया और रोने लगीं। थोड़ी झिड़की भी। बोलीं-ऐसे बिना बताए कहां चले जाते हो? बाबा ने कहा-माई, जाना पड़ा। कुछ काम था।

तब की बात...

साईं जब तक शिर्डी में रहे तब तक उन्होंने भिक्षा मांगकर ही गुजारा किया। बाबा के भिक्षा मांगने का तरीका भी बेहद अलग था। वे जिससे भी भिक्षा माँगते उससे कहते-मेरा और तुम्हारा पिछले जन्म का कुछ लेन-देन है। जीवन पर्यन्त साईं ने शिर्डी में मात्र पांच घरों से ही भिक्षा माँगी। ब़ायज़ामाई, बयाजी अप्पा कोते पाटिल, नंदू मारवाड़ी, सखाराम शेल्के और वामन गोंदकर।

हेमाडपंत ने जब बाबा की भिक्षा पर अपना अध्याय लिखा तो बताया कि जो व्यक्ति कांचन, कामिनी और कीर्ति से दूर हो, भिक्षा मांगना उसका प्रारब्ध हो जाता है। बाबा को रुपए-पैसे का मोह था नहीं, अपनी प्रसिद्धि का भी उन्हें कोई शौक नहीं था। वो बहुत ही सधे हुए थे और सबसे दूर ही रहते थे। उन्होंने पूरे जीवन में किसी की ओर बुरी नज़र से नहीं देखा। दृढ़ ब्रह्मचर्य का पालन किया।

हेमाडपंत आगे लिखते हैं-खाना बनाने की क्रिया में पांच प्रकार के पाप हमसे होते हैं। पीसना, दलना, बर्तन मांजना, बर्तन धोना और चूल्हा जलाना। इसमें अनेक जीवाणु मर जाते हैं। जो मनुष्य यह खाना खाते हैं,

उन्हें पाप लग जाता है। बाबा ने उन लोगों को पाप से बचाने के लिए उनके यहां भिक्षा मांगने का क्रम शुरू किया।

बायज़ामाई के घर जाकर बाबा जोर से चिल्लाते-आबाद ही आबाद!! बायज़ामाई, रोटी ला। हक से माँगते थे। सखाराम के घर जाकर कहते-ए सखया! भाजी आण। नंदू मारवाड़ी की पत्नी हकलाकर बोलती थी। बाबा उन्हें बोपिड़ी बाई कहते थे। वे उन्हें पुकारते-ए बोपिड़ी बाई, आज दीवाली है, कुछ मीठा बनाकर खिला दे। ऐसे थे बाबा।

आख़िरी दिनों में जब वे चल-फिर नहीं पाते थे, तो कभी श्यामा, कभी प्रो. नारके तो कभी उपासनी महाराज को अपनी ओर से भिक्षा लेने भेजते थे। लेकिन भिक्षा का क्रम उन्होंने कभी नहीं तोड़ा। उन दिनों भी नहीं जब 1908 से शिर्डी में लोगों का तांता लगना शुरू हो गया था। उनकी ख्याति दूर-दूर तक फैल चुकी थी। गरीब-अमीर सब तरह के भक्त उनके चरणों में आने लगे थे, तब भी बाबा ने मांगकर ही अपना गुजारा किया।

प्रो. जी. जी. नारके करोड़पति बापूसाहेब बूटी के जमाई थे और इंग्लैण्ड से पढ़कर आये थे। बाबा उन्हें भी भिक्षा लाने भेजते थे। एक बार बाबा ने प्रो. जी. जी. नारके को सूट में भिक्षा लाने भेज दिया। वो शर्म से पानी-पानी हो गए। बोले-बाबा ये क्या कराते हो? बाबा झिड़क कर बोले-तुझे भिक्षा माँगने में शर्म आती है? लोगों से लेगा, तभी लोगों को दे पाएगा। बाबा के शब्द कितने सारगर्भित थे। प्रो. जी जी नारके को यूनिवर्सिटी ऑफ पुणे में टीचर के रूप में काम करने का मौका मिला। उन्होंने लिया कुछ और था, दिया किसी और रूप में।

लोग कहते हैं इतना बड़ा संत, जिसके लिए कहा जाता है कि वह लोगों की झोली भर देता है, उसे भिक्षा की क्या आवश्यकता? वह तो ज़रा हाथ ऊपर उठाता तो छप्पन भोग सामने आ जाते, लेकिन बाबा के खेल बड़े निराले हैं। मानव अवतार, जिसमें वो आए थे उसकी कुछ बंदिशें भी थीं। उस मानव अवतार में उनकी हथेली में शायद लिखा था कि उन्हें भिक्षा से ही गुज़ारा करना है। या शायद वो लोगों को बताना चाहते थे

कि किसी के सामने हाथ फैलाने में कोई बुराई नहीं है।

साईं से सीधी सीख...

आप स्वयं देखिए। बिज़नेसमैन भी क्या करते हैं, वो भी तो भिक्षा ही माँगते हैं न। अपने मार्केटिंग वालों से कहते हैं कि जाकर आर्डर ले आओ फलां से। टारगेट पूरा कर ले यार, वरना मेरी नौकरी भी जाएगी और तेरी भी।

दरअसल, कर्म कोई भी बुरा नहीं होता अगर वो निष्पाप हो, लोगों की भलाई के काम आने वाला हो। जो लोग यह समझते हैं कि वे अपने पैसों से बड़ा-सा मंदिर बनवाकर भगवान को अपने पास ला सकते हैं, तो यह भूल है। पैसों से मंदिर बनवाया जा सकता है, लेकिन ईश्वर को उसमें नहीं बैठाया जा सकता। ईश्वर तो कण-कण में व्याप्त हैं। वे ग़रीब-अमीर में भेद नहीं करते और दरिद्रता में नारायण का वास होता है यह बताने के लिए साईं ने भगवान होते हुए भी भिक्षा मांगकर ही अपना गुज़ारा किया। हम गरीबों के प्रति हेय भाव न रखें और उनमें छिपे ईश्वर तत्व को पूजे और उनकी मदद करें इस आशय के साथ साईं ने शायद यह जीवन शैली रची।

वो मुक्त कंठ से गाते थे-फ़क़ीरी अव्वल बादशाही। अमीरी से लाख सवाई। गरीबों का अल्लाह भाई...

बाबा भली कर रहे

साईं सुधारते हैं

जीवन में दु:ख देते हैं लोभ, ईर्ष्या, अहंकार।
साईं शरण में जाने से मिटते ये सभी विकार।।

गोविंदराव रघुनाथ दाभोलकर को बाबा ने हेमाडपंत की उपाधि दी थी। हेमाडपंत ने बाबा की आज्ञा और आशीर्वाद से मराठी भाषा में श्री साईं सच्चरित्र की रचना की। हेमाडपंत को बाबा की विशेष कृपा दृष्टि प्राप्त थी। बाबा दुनिया के लिए एक मार्गदर्शक, मित्र, शुभचिंतक बनें, इसके लिए यह ज़रूरी था कि उनकी कहानियां, जीवनयात्रा, धर्म-कर्म लोगों तक पहुँचे। इसके लिए सबसे बेहतर माध्यम था पुस्तकें। बाबा ने इसके लिए चुना दाभोलकर को। उनके मन में अलख जागई कि वो साईं की लीलाओं को एक किताब का स्वरूप दें। यह एक अद्‌भुत किताब है। जब पढ़ो, जितनी बार पढ़ो, हर बार एक नया अर्थ समझ में आता है।

जैसे हमारी माँ हमें नये अवतार में जन्म देती है और नया स्पंदन प्रदान करती है। उसी तरह यह पुस्तक एक संहिता है और हमें अपने विकारों से मुक्त कर एक नया रूप प्रदान करती है। इस आशय से यह स्त्रीलिंग हुई। जैसे हमारे पिता हमारी उंगली पकड़कर हमें चलना सिखाते है, हमें जीवन जीने का सबक देते हैं उसी तरह यह पुस्तक हमें जीवन की निराशाओं से उबार कर हर बार एक नयी राह सुझाती है। इसे पढ़कर मन में निर्भयता का दीप जगमगा उठता है, जैसे अपने पिता के साये में महसूस होता है। इस आशय से यह ग्रंथ हुआ और पुल्लिंग भी। जैसे हमारे सगे-संबंधी हमें समय-समय पर सलाह-सूचना देते है। उसी तरह

यह किताब भी हमें हमारे अनसुलझे प्रश्नों का उत्तर और सलाह देती है। इस आशय से यह पुराण के जैसी हुई और नपुंसकलिंग भी।

जैसे वेदव्यासजी ने श्रीमद्‍भागवद और वाल्मिकी ने रामायण की रचना की थी, उन्हीं के सदृश पवित्र ग्रंथ श्री साईं सच्चरित्र रचा दाभोलकर ने। सुखद संयोग देखिए कि दाभोलकर के नाम में गोविंद भी है और रघुनाथ भी। कृष्ण और राम दोनों ने मिलकर गोविंद रघुनाथजी के ज़रिये बाबा का सच्चरित्र रचा।

यह शाश्वत सत्य है कि ज्ञान अक्षरों और भाषाओं से नहीं आता। बुद्धिमता तो व्यक्ति की सोच, जतन, कर्म और लगातार कुछ सीखने की ललक होती है। क्या एक कम पढ़ा-लिखा व्यक्ति कोई ग्रंथ रच सकता है? हो सकता है कि अधिकांश लोगों का उत्तर ना में मिले, लेकिन यह सच नहीं है। साईं किसी से कुछ भी करा लेने में माहिर हैं और जब हम ऐसा कुछ कर गुज़रते हैं तो हम स्वयं आश्चर्यचकित हो उठते हैं।

दरअसल, पढ़ाई-लिखाई का आशय यह नहीं है कि हम सर्वज्ञाता हो गए। उच्च शिक्षा हासिल करने के बाद व्यक्ति में यह अहंकार आ जाता है कि वो ज्ञानी है और उससे कम पढ़ा-लिखा व्यक्ति उसके समकक्ष अज्ञानी है। जबकि प्रयोगधर्मी, कुछ सीखने की ललक रखने वाला व्यक्ति यानी जीवन को सही तरह से समझने वाला व्यक्ति, किताबी ज्ञान वाले व्यक्ति से कहीं अधिक ज्ञानवान होता है। दाभोलकर के मामले में भी कुछ ऐसा ही था।

दाभोलकर पांचवीं क्लास तक पढ़े थे। हालांकि वे मेहनती ख़ूब थे, लेकिन पारिवारिक परिस्थितियों के कारण आगे पढ़ नहीं पाए। शुरुआत में दाभोलकर ने तलाटी की नौकरी की। पर देखिए मेहनत का फल, वे धीरे-धीरे बढ़ते-बढ़ते एक शिक्षक के पद से होते हुए स्पेशल वेकेशन जज की पोजिशन तक जा पहुँचे। अकसर कड़ी मेहनत से प्राप्त उपलब्धि भी अहंकार पैदा कर देती है। यह दंभ आदमी के भीतर बुराइयाँ पैदा करने लगता है। उसे लगता है कि इस दुनिया में उससे बड़ा कोई दूसरा नहीं

है। मैं ही मैं हूँ, बाकी सब तुच्छ हैं। अगर वो समय रहते इस मैं पर विजय नहीं पा लेता, तो यही 'मैं' आदमी को पतन की ओर ले जाता है। दाभोलकर को अपने इस श्रम का बड़ा दंभ था कि वो इतना अल्पशिक्षित, छोटे घर से थे, फिर भी इस मुकाम तक पहुँच पाये थे।

नानासाहेब चांदोरकर और काकासाहेब दीक्षित ये दोनों बाबा के परम भक्त और दाभोलकर जी के परम मित्र थे। वे दाभोलकर से कई बार कह चुके थे कि दाभोलकर भाई, शिर्डी चलो। वहाँ साईं बाबा हैं। वे बहुत पहुँचे हुए। हम तो उनके चमत्कारों का लाभ उठा चुके हैं, तुम भी चलो। लेकिन दाभोलकरजी किन्हीं कारणों से जा नहीं पाए। मुंबई के पास स्थित लोनावला में दाभोलकरजी के एक मित्र रहते थे। उनका बच्चा बेहद बीमार था। नीम-हकीम, डाक्टर, वैद्य किसी की दवाई से कोई फायदा नहीं हो रहा था। उस मित्र ने थक-हार कर अंत में अपने गुरु को बुलाया और कहा, अब आप ही एक आस बचे हो मेरे बच्चे के जीवन के लिए।

दाभोलकरजी के मित्र ने अपने गुरु को बच्चे के सिरहाने बैठाया, लेकिन विधाता ने जो लिखा था वो हो कर ही रहा। डॉक्टरों की तमाम कोशिशों के बावजूद बच्चा बच नहीं पाया। इस घटना के बाद दाभोलकरजी के मन में यह धारणा घर कर गई कि जब गुरु के होने का कोई फायदा ही न हो, तो फिर गुरु क्यों बनाया जाए?

एक बार नानासाहेब दाभोलकरजी से मिलने गए और शिर्डी न जाने के लिए उन्हें ख़ूब डाँट पिलाई। कहने लगे-तुम समझते क्या हो अपने आप को? शिर्डी क्यों नहीं जा रहे हो? लाख समझाइश और खरी-खोटी सुनने के बाद दाभोलकरजी अपने दोस्त नानासाहेब का मन और मान रखने के लिए शिर्डी जाने को राजी हो गए। रेल का सफ़र था, लेकिन गलती से वे मनमाड़ जाने वाली गाड़ी के बजाय किसी अन्य में बैठ गए। अचानक कहीं से एक फ़क़ीर प्रकट हुए। वे दाभोलकरजी के पास आए और कहा-यार, तुम तो गलत गाड़ी में बैठ गए हो! अब देखिए, बाबा दिशाभ्रमित लोगों को कैसे सही राह दिखाते हैं। उनके लिए कहीं न कहीं से मार्गदर्शक भेज

देते हैं या स्वयं मार्गदर्शक बनकर आ जाते हैं। अगर दाभोलकरजी गलत गाड़ी से गलत स्टेशन पर पहुंच गए होते, तो शायद पक्का जीवन में दूसरी बार कभी शिर्डी जाने को तैयार नहीं होते। वे तो शिर्डी जाना ही नहीं चाहते थे। वैसे अगर दाभोलकरजी उस वक्त शिर्डी जाने से चूक जाते, तो निश्चय ही आज यहाँ उनका ज़िक्र नहीं हो रहा होता।

सही वक्त पर किया गया सही काम ही व्यक्ति को पहचान दिलाता है, सफलता दिलाता है। इसका एक सरल उदाहरण है। अगर आप किसी भी परीक्षा में सही समय पर नहीं पहुँचे, तो क्या होगा? जितनी देरी से आप पहुँचेंगे उतनी घबराहट में सवालों के जवाब देंगे, कुछ छूटेंगे तो कुछ गलत होंगे। ...और अगर जल्दबाज़ी में सभी सवालों के जवाब दे भी दिए, तो जैसा आप याद करके गए थे, वैसे उत्तर नहीं लिख पाएंगे। लिखने की शैली अवश्य बिगड़ेगी। बाबा ने भी दाभोलकर को सही रास्ता दिखाने के लिए एक संत स्टेशन भेजा या स्वयं पहुँचे क्योंकि भविष्य की कोख में साईं ने उन्हें श्री साईं सच्चरित्र के माध्यम से अमरत्व प्रदान जो करना था।

दाभोलकर जी शिर्डी पहुँचे। जब वे तैयार होकर बाबा से मिलने निकले, तो उन्हें कुछ लोग मिले। उन्होंने कहा कि जाओ, बाबा अभी लेंडीबाग से वापस आ रहे हैं। मस्ज़िद के कोने में जाकर उनके दर्शन तो कर लो। दाभोलकरजी अनमने चित्त से वहां गए लेकिन जब बाबा को देखा तो देखते ही रह गए और उनके चरणों में गिर पड़े। दाभोलकरजी का गला भर आया और रोम-रोम रोमांचित हो गया।

यह ठीक वैसी ही स्थिति थी, जब हमसे कोई कहता है कि कश्मीर तो स्वर्ग-सरीखा है। जिन्होंने कश्मीर नहीं देखा, वे तस्वीरों फिल्मों या टीवी में देखे गए कश्मीर को याद करके थोड़ा-बहुत रोमांचित हो जाते हैं और जैसे ही चर्चा को विराम लगता है, उनका हृदय रोमांच से सामान्य स्थिति में आ जाता है। कश्मीर गए हैं, वे चर्चाओं में भी कश्मीर की ख़ूबसूरती का वास्तविकता में आनंद महसूस करने लगते हैं। दाभोलकरजी के साथ भी ऐसा ही हो रहा था। वे जैसे ही बाबा के समीप पहुँचे उनका रोम-रोम

रोमांचित हो उठा और जैसे ही दूर हुए, तो अहंकार फिर से अंदर घर कर गया। दरअसल, किसी चीज़ का असली आनंद तब तक नहीं आ सकता, जब तक कि आप अपना अहंकार नहीं छोड़ देते। जीवन का असली आनंद तभी आता है, जब आप अहंकार, ईर्ष्या, मोह-माया को छोड़कर उसके रंग में रंग जाते हैं। दाभोलकर के साथ भी यही हो रहा था। बाबा के दर्शन से वापस लौटे, तो फिर वही हाल कि मैं ज्ञानी, इतना बड़ा जज, एक बाबा के आगे कैसे झुक गया? लेकिन बाबा तो उनकी परीक्षा ले रहे थे। शायद बाबा अपने चमत्कारों के बूते दाभोलकरजी का मन नहीं बदलना चाहते थे। वे तो चाहते थे कि दाभोलकर ख़ुद के प्रयासों से, स्वप्रेरणा से अपने मन को बदलें। किसी के दबाव, प्रलोभन या चमत्कारों से वशीभूत होकर अपनी सोच न बदलें। उनमें जो परिवर्तन आए, वो ख़ुद के बूते आए। यह सच भी है। किसी को सम्मोहित करके आप कब तक उसे अपने प्यार में बाँधे रख सकते हैं? जब-जब वो सम्मोहन से बाहर निकलेगा, तब-तब वो आपसे अजनबियों-सा बर्ताव करेगा क्योंकि उसने मन से आपको कभी चाहा ही नहीं। ...और अगर एक बार उसने मन के अंदर आपकी मूरत बसा ली, तो फिर उसके ऊपर कोई दूसरा सम्मोहन काम नहीं करेगा।

उसी दिन बाड़े में दाभोलकरजी की बालासाहेब भाटे से गुरु की महत्ता और उपयोगिता पर लंबी बहस छिड़ गई। बालासाहेब उनसे कहते रहे, तुम अपने सारे कर्म अपने गुरु के चरणों में न्यौछावर कर दो और जो वो कहें, वही करो। दाभोलकरजी भी अड़े रहे, गुरु की ज़रूरत क्या है?

बालासाहेब ने उनसे दो-टूक कहा-दाभोलकरजी यह आप नहीं आपका अहंकार बोल रहा है। बालासाहेब के मुंह से ऐसे शब्दों की दाभोलकरजी ने कल्पना भी नहीं की थी। यह सुनकर वे दुःखी हो गए। उन्हें शायद जीवन में पहली बार किसी ने आइना दिखाया था कि दाभोलकर तुम अहंकारी हो और तुम्हारा अहंकारी होना ही तुम्हारे दुःख का कारण है। जहाँ अहंकार होता है वहां किसी और के लिए जगह नहीं होती। उसमें कोई दूसरा समा नहीं सकता। हमारे भीतर जो मैं होता है,

वो इतनी सारी जगह घेर लेता है कि दूसरे किसी को शायद सांस लेने की जगह भी नहीं मिले।

अब देखिए, जब इन सब घटनाओं के वर्षों बाद स्वयं दाभोलकरजी ने बाबा का सच्चरित्र लिखा है, तो उसमें यह भाव-उद्‌गार व्यक्त किया कि मैं अहंकार के कारण ग्लानि महसूस कर रहा था।

मैं में मैं समाया सारा,
मैं ही मुझको सबसे प्यारा...

अपनों से मुझे दूर यह रखता,
मैं ही टूटता, मैं ही बिखरता...

मैं ने मुझको पकड़ रखा है,
बस बंधन में जकड़ रखा है...

मैं साँझ सवेरे मैं से लड़ता,
मुंह की खाता, गिर-गिर पड़ता...

उठता फिर कि इससे छूंटू,
जान बचाकर इससे भागूं...

मगर ये मुझको नहीं छोड़ता,
बाहर-अन्दर मुझे तोड़ता...

आरती का समय हो रहा था। बालासाहेब ने दाभोलकर से कहा-चलो, बाबा के पास चलते हैं। बाबा सब देख रहे थे, सब जानते थे। दोनों मस्ज़िद पहुँचे और बाबा को प्रणाम किया। यह 1910 के आस-पास की बात है। बाबा ने कहा-बाला, बाड़े में क्या बहस चल रही थी? क्या बातचीत कर रहे थे तुम दोनों? और इन श्रीमान हेमाडपंत ने क्या कहा?

उस समय तक बाबा को दाभोलकरजी का नाम नहीं पता था। बाबा ने उन्हें हेमाडपंत कह कर संबोधित किया। यह दाभोलकर के लिए अचरज की बात थी। भले ही दाभोलकरजी ज़्यादा शिक्षित नहीं थे, लेकिन सामान्य

ज्ञान उनका बड़ा जबर्दस्त था। वे भाँप गए कि बाबा ने उन्हें लज्जित करने के लिए हेमाडपंत से संबोधित किया है क्योंकि वे ज्ञान का बखान बहुत करते हैं।

दरअसल हेमाडपंत अपभ्रंश है हिमाद्रीपंत का। हिमाद्रीपंत निजाम स्टेट में यादव वंश के राजा रामदेव व महादेव के मंत्री थे। वे बेहद चतुर और विद्वान थे। उन्होंने राज प्रशस्ति और चतुरवर्ग चिंतामणी नाम की दो किताबे भी लिखी थीं। ये माना जााता है कि एकाउंट में जो सिंगल इंट्री सिस्टम है याने की बहीखाते रखने की प्रथा, वह हिमाद्रीपंत की ही देन है। इसके अलावा मराठी की मोढ़ी लिपी का आविष्कार भी हिमाद्रीपंत ने ही किया था। दाभोलकरजी को यह बात चुभने लगी कि हेमाडपंत तो ज्ञानी थे, जबकि वे पांचवीं पास थे शायद इसीलिए बाबा ने उनका उपहास उड़ाया है।

दाभोलकरजी सोच में पड़ गए कि बाबा जब मेरा नाम नहीं जानते, तो इसने मुझे हिमाद्रीपंत क्यों कहा? बात आई-गई हो गई। वहीं कुछ देर बाद मस्ज़िद में दाभोलकर और बाबासाहेब की मौजूदगी में जब किसी ने पूछा कि बाबा कहां जाएं, तो बाबा ने कहा-ऊपर जाओ। उसने तपाक से प्रतिप्रश्र किया- बाबा मार्ग कैसा है? बाबा ने जवाब दिया- कांटो भरा, गड्ढों भरा, टेढ़ा-मेढ़ा। ...और हाँ बीच में सियार और भेड़िये भी ख़ूब मिलेंगे। उस व्यक्ति ने फिर सवाल किया- बाबा यदि कोई मार्गदर्शक मिल जाए तो? तब बाबा ने कहा-अरे! तब तो सब आसान हो जाता है।

इतना सुनते ही दाभोलकरजी के दिमाग की बत्ती जल उठी। वो समझ गए इशारा किसकी ओर है। जो बात बाड़े में चल रही थी, यहाँ उसी की ओर बाबा का इशारा था। मस्ज़िद और बाड़े के बीच इतनी दूरी थी कि यहाँ कि बात वहाँ सुनाई नहीं दे सकती थी, फिर भी बाबा ने सुन लिया। बाबा ने दाभोलकरजी के मन में उठ रहे प्रश्नों का समाधान कर दिया था। बस फिर क्या था, दाभोलकरजी का मन गुरु की भक्ति में रम गया।

तब की बात...

दाभोलकरजी के बाबा से भेंट करने के एक साल बाद यानी यह सन् 1911 की बात है। शिर्डी गांव में हलचल मची हुई थी। बाबा चक्की चलाकर गेहूँ पीस रहे थे। इस घटना का जिक्र इस पुस्तक में हम पहले भी कर चुके हैं, लेकिन यहाँ दोबारा बताना इसलिए आवश्यक है क्योंकि हेमाडपंत ने जब बाबा को यह करते देखा, तो उनके मन में कई प्रकार के विचार पैदा हुए। दाभोलकरजी तो श्री साईं सच्चरित्र में यहाँ तक लिखते हैं कि बाबा जब तक अपने ज्ञात रूप में शिर्डी में रहे, उन्होंने पूरे 60 साल तक चक्की चलाई। यह बात उन्होंने बड़े ही सांकेतिक रूप में कही है। बाबा अपने भक्तों के पाप-संताप को चक्की में पीसते थे। ख़ैर, शिर्डी गांव में हलचल मची थी। उसी दिन दाभोलकरजी का शिर्डी पहुँचना हुआ था। दाभोलकरजी ने देखा कि मस्ज़िद के बाहर भीड़ लगी थी। लोग कौतुहल से देख रहे थे कि आज बाबा कर क्या रहे हैं? बाबा गेहूँ चक्की में डालते, चक्की घुमाते और आटा गिरता जाता। तभी भीड़ में से चार महिलाएं बाहर आईं और बोलीं- बाबा, आप हटो हम चक्की चलाते हैं आपके लिए। महिलाओं ने चक्की की कमान संभाली और ख़ूब सारा आटा पीसा । चक्की चलाते-चलाते वे चारों बात करती रहीं कि बाबा का तो कोई घर-बार, बाल-बच्चे है ही नहीं, फिर वे क्या करेंगे इतने आटे का? उनमें से एक बोली- चलो हम ही ये आटा अपने साथ ले चलते हैं। उन्होंने साड़ी का पल्लू खोला और आटा भरने को हुई। यह देखकर बाबा भड़क उठे-अपने बाप का माल समझ रखा है? किससे पूछ के आटा ले जा रही हो? जाओ समेटो चुपचाप और शिर्डी की सीमाओं पर डाल कर आ जाओ।

दाभोलकर हैरान। आख़िर बाबा ने ऐसा क्यों किया? जब रास्ते पर ही फेंकना था आटा, तो इन औरतों को ही ले जाने देते, इनका ही भला हो जाता। तब किसी गाँववाले ने उन्हें समझाया-यह बाबा की लीला है। पास के गाँव में हैजा फैला है। आसपास के गाँव में बहुत लोग मर गए

थे। हैजे से शिर्डी के लोगों को भी डर था कि हैजा कहीं उन्हें भी अपनी चपेट में न ले ले। लेकिन जैसे ही बाबा ने गाँव की सीमाओं पर वह आटा फिंकवाया, शिर्डी के लोगों के मन से हैजे का डर पूरी तरह ख़त्म हो गया। वहाँ कोई बीमार नहीं पड़ा, एक भी मृत्यु हैजे से नहीं हुई।

कुछ लोगों को इस पर विश्वास नहीं हुआ। ...और होगा भी क्यों? भला सरहद पर आटा फेंकने से कोई हैजा कैसे रुक सकता है? लेकिन जो लोग बाबा को करीब से जानते थे उनके चमत्कारों से रूबरू होते रहते थे उन्हें यकीन था कि बाबा ने ज़रूर कुछ किया है। क्योंकि आटा फेंकने से हैजा शिर्डी में प्रवेश नहीं कर पाया था।

मैं भी बाबा से जुड़ा यह किस्सा लोगों को सुना रहा था। एक सज्जन आए और हैरानी भरे शब्दों में कहने लगे-क्या इन सब बातों पर आपको भरोसा है? क्या वाकई बाबा ने कोई चमत्कार किया था या इसके पीछे कोई कारण रहा था? क्या सच में बाबा आटे से बीमारी रोकते थे और पानी से दीपक जला देते थे? मैं उन सज्जन के सवालों को मुस्कराते हुए सुनता रहा और कोई जवाब नहीं दिया। क्योंकि वो सवाल नहीं कर रहे थे, बल्कि अपनी उत्सुकता व्यक्त कर रहे थे।

ख़ैर, बाबा के पानी से दीपक जलाने की कहानी भी बड़ी अद्‌भुत है। इसे भी इस पुस्तक में हम पहले ही बता चुके हैं। यह शिर्डी में उनका पहला चमत्कार था, जो एक किवदंती बन गया।

साईं से सीधी सीख...

बाबा का यह चमत्कार देखकर दुकानदार डर गए। यहाँ बाबा का चरित्र समझ में आता है कि वे किस तरह हमें सुधारते हैं। दुकानदारों को लगा था कि जो पानी से दिये जला सकता है, वो हमें श्राप भी दे सकता है। लेकिन साईं सज़ा देने वालों में से नहीं हैं। साईं एक रिफॉर्मिस्ट हैं, याने साईं आपको बदल डालते हैं। वो आपके अंतर्मन में इतनी गहराई से समा जाते हैं, घुल-मिल जाते हैं कि आप अपने आप बदल जाते हैं। आपका

स्वभाव बदल जाता है, चाल बदल जाती है और चरित्र बदल जाता है। आपके मन के विकार दूर हो जाते हैं। अगर बाबा के पानी से दीये जलाने के चमत्कार को जीवन-दर्शन के तौर पर समझें, तो बाबा तेल-पानी दिये में नहीं हमारे अंदर उड़ेल रहे होते हैं, ताकि मन का दीपक जल उठे और तमस दूर हो।

बाबा ने दुकानदारों से कहा तुमने मुझे तेल नहीं दिया, लेकिन ऊपर वाले को तो दिये जलाने थे सो उसने जला दिए। फिर बाबा ने कहा- सबसे पहला जुर्म तुमने क्या किया पता है? मानवता के नाते तुमने झूठ बोलने का जुर्म किया तेल होते हुए भी मुझे मना कर दिया क्योंकि तुम्हे बिना मोल के नहीं देना था। दूसरा गुनाह तुम्हारा यह है कि मस्ज़िद रात को अंधेरे में डूबी रहती और यदि कोई यहाँ आता तो गिरता और उसे चोट लग जाती। वो तुम्हे कोसता। तीसरा तुमने झूठ बोलकर उस ऊपर वाले की शान में गुस्ताखी की है। यह सुनकर दुकानदारों को अपनी गलती का एहसास हुआ। वे शर्मिंदा होकर बाबा के चरणों में गिर पड़े। बाबा ने उन्हें पूरी तरह बदल दिया था।

मैं जैसा पहले बता रहा था कि एक सज्जन ने मुझे साईं के चमत्कारों को मानने पर सवाल किया था। मैंने कहा- हाँ, मैं मानता हूँ कि साईं चमत्कारिक हैं। मेरा जवाब सुनकर उनका फिर सवाल था, तुम कैसे मानते हो? बाबा चमत्कार करते हैं, तुम ऐसा सोच भी कैसे सकते हो? मैंने कहा-मैं इसलिए मानता हूँ, क्योंकि साईं लॉजिकल (तर्कसम्मत) नहीं हैं। वह तो तर्क से भी परे हैं। साईं तर्कों से परे हैं। साईं विवाद का विषय नहीं साईं प्रेम का विषय हैं, साईं श्रद्धा का विषय हैं। साईं सब्र का, बदलाव का और जीत का विषय हैं। साईं तो परमानंद का विषय हैं। वे मौज का विषय हैं जिसे एक बार साईं के सान्निध्य में आनंद आने लगता है, वो कहीं और ठहर ही नहीं पाता। इसलिए साईं पर विवाद नहीं होना चाहिए। साईं हमारे विश्वास में बसते हैं।

तब की बात...

बहरहाल, हम वापस लौटते हैं। दाभोलकरजी बाबा के पास पहुँचे। उनके मन में इच्छा उत्पन्न हुई कि अब इस महान व्यक्तित्व की जीवनी लिखी जाए, ताकि लोग उसे पढ़कर ख़ुद में बदलाव ला सकें। समाज और देश को एक अच्छी दिशा में ले जा सकें। लेकिन हेमाडपंत सोच में थे, बाबा के पास जाकर ऐसी मांग करना तर्क संगत तो नहीं था! उन्होंने श्यामा को पकड़ा। जैसे महादेव मंदिर के बाहर नंदी होता है न! हम नंदी से आज्ञा लेकर मंदिर में प्रवेश करते हैं। वैसे ही बाबा के पास पहुंचना होय तो श्यामा को पकड़ना पड़ता था।

यह श्यामा और कोई नहीं माधवराव देशपांडे थे, जिन्हें बाबा ने यह नाम दिया था। हेमाडपंत ने अपने मन की बात श्यामा से कही। श्यामा को बात जंची क्योंकि यह प्रयोजन सबकी भलाई से जुड़ा था। बाबा की जीवनी जो भी पढ़ेगा उसे मार्गदर्शन ही प्राप्त होगा। पाठकों को सही-गलत और पाप-पुण्य के भेद से बोध कराएगी।

मौका पाकर श्यामा दाभोलकरजी यानी हेमाडपंत को लेकर बाबा के पास पहुँचे। उन्होंने सीधे शब्दों में बाबा से कहा, दाभोलकर जी आपकी जीवनी लिखना चाहते हैं। बाबा मुस्कराए-छोड़ो! मैं फ़क़ीर हूँ मेरी जीवनी कौन पढ़ेगा? श्यामा ने जवाब दिया-बाबा आपको अनुमति देनी ही पड़ेगी।

बड़ी मुश्किल से बाबा राजी हुए। दाभोलकरजी को यह छूट मिल गई कि वे बाबा के जीवन से जुड़ी घटनाओं को क्रमबद्ध कर सकते थे, लिख सकते थे और, उसके नोट्स बना सकते थे। लेकिन बाबा ने अनुमति के साथ एक शर्त भी रख दी कि दाभोलकर अंहकार का भाव छोड़कर उनकी शरण में आ जाएं। यदि वह अहंकार का भाव लेकर मेरी शरण में नहीं आएंगे, तो मैं इनकी बिल्कुल मदद नहीं कर पाऊंगा। अगर यह अपना अहंकार छोड़कर मेरी शरण में नहीं आते हैं, तो मैं स्वयं अपनी जीवनी लिखूंगा और जो भी मेरी जीवनी पढ़ेगा और मेरी लीलाओं का श्रवण करेगा, मनन करेगा उनके जन्म

जन्मांतर में किए गए पाप धीरे-धीरे नष्ट हो जाएंगे। उन्हें प्रभु की शरणागति प्राप्त हो जाएगी।

दाभोलकरजी को इस तरह बाबा की जीवनी लिखने की अनुमति मिल गई। बाबा ने समाधि 15 अक्टूबर 1918 के दिन ली थी। वह मंगलवार, दशहरे का दिन था। हेमाड़पंत ने अपने नोट्स को जमाना शुरू किया 1922-23 से और सांई सच्चरित्र का प्रकाशन शुरू हुआ 1929 में। दाभोलकरजी तो ठहरे से बड़े अहंकार वाले, कविता से उनका कोई लेना-देना नहीं था। लेकिन बाबा की जीवनी साईं सच्चरित्र को उन्होंने मराठी की ओवी यानी पद्य के रूप में लिखा। ताज्जुब की बात कि उन्होंने कोई 500 या हजार नहीं पूरी नौ हजार तीन सौ आठ औवियां लिख डालीं।

साईं से सीधी सीख...

आदमी सोचता कुछ है, करता कुछ है, होता कुछ है, दिखता कुछ है और समझ में कुछ और आता है। यही साईं हैं। साईं एक व्यक्ति से क्या-क्या करा लेते हैं, यह तो वो ही जानें। एक बार आप साईं के हो जाओ, वो फिर आपको इतना नवाजते हैं, कि आप जो नहीं सोचते वह भी पा लेते हैं। वो जो तेरी किस्मत में होगा तुझे ज़रूर मिलेगा और यदि बाबा की कृपा हो गई, तो वो भी मिल जाएगा जो तेरी किस्मत में नहीं है।

ईश्वर के घर यानी मंदिर में लोग अपनी भक्ति से जाते हैं, श्रद्धा से जाते हैं। जब तक भगवान का बुलावा नहीं आता, कोई वहाँ नहीं जा पाता। अगर आप बेमन से जाते हैं, तो ऐसे जाने का कोई मतलब नहीं। आज भी शिर्डी वो ही लोग पहुँच पाते हैं, जिन्हें बाबा बुलावा देते हैं।

कहते हैं कि ईश्वर जब एक अवतार से निवृत होता है, तो दूसरे अवतार में चला जाता है। एक प्रयोजन ख़त्म तो दूसरे की तैयारी। बाबा ने भी एक खास प्रयोजन के लिए शरीर धारण किया था। लाखों लोगों के मन का मैल धोया और शिर्डी में विराजे हुए वे आज भी ऐसा ही कर

रहे हैं। वे इन दिनों कहीं किसी दूसरे अवतार में मौजूद होंगे। लोगों की भलाई कर रहे होंगे। हम जब भी उन्हें याद करते हैं, वे हमारे पास मौजूद होते हैं। यह आवश्यक नहीं कि वे अपने पहले वाले शरीर में ही आएं, वे किसी भी रूप में आ सकते हैं। बाबा कहते हैं सबका मालिक एक। ठीक वैसे ही हम अपने सुविधा और श्रद्धा भक्ति के हिसाब से ईश्वर को किसी भी रूप में ढाल दें, लेकिन वो तो एक ही हैं।

साईं को लेकर कोई विवाद नहीं होना चाहिए, क्योंकि साईं उस विश्वास का स्वरूप हैं जो भक्तों के हृदय में बसकर उन्हें अच्छे के लिए बदल डालते हैं। साईं बुरे लोगों को नहीं मारते, बुराईयों को मारते हैं। हमें बदल डालते हैं।

बाबा भली कर रहे

14

साईं के भक्त अकारण भी खुश रह लेते हैं

खुशियाँ मन में छुपी हुईं, क्यों ढूँढे संसार।
साईं शरण में जाइए, हर्ष मिले अपार।।

खुशी के मायने क्या हैं? यह एक ऐसा सवाल है, जिसका उत्तर सबके लिए अलग-अलग हो सकता है। कोई अपने परिवार में खुशियाँ ढूंढता है, तो कोई दौलत-प्रसिद्धि में, तो कोई प्यार-मोहब्बत में और कोई किसी चीज़ को पा कर खुश हो जाता है। लेकिन क्या कभी आपने किसी मानसिक विक्षिप्त व्यक्ति को देखा है? वो अकारण ही खुश होता है। उसे यूँ ही हंसता-मुस्कुराता देख हम उसे पागल करार दे देते हैं। क्या वाकई ऐसा है? दरअसल, जब हमारा दिमाग चलने लगता है, तो हम हर चीज़ को, हर बात को नापतौल के देखते हैं और तब यह निर्णय करते हैं कि हमें कहाँ और क्यों खुश होना है लेकिन जब किसी व्यक्ति का दिमाग काम करना बंद कर देता है यानी जिसे हम पागल बोलने लगते हैं, वो अकारण खुश होता है। उसे इससे कोई सरोकार नहीं होता कि वो खुशियों के लिए कारण तलाशे। वो लोग जिनका अपने दिमाग पर 100 प्रतिशत नियंत्रण होता है वे खुश रहने के लिए बहाना क्यों ढूंढते हैं?

दरअसल, खुशियों का कारण ढूंढना भी एक मानसिक विकार है, जो हमारे और साईं के बीच रोड़ा बनता है। साईं क्या है? साईं ही तो खुशी है। हम मंदिर किसकी तलाश में जाते हैं? यकीनन खुशियों की और

किसकी! साईं की शरण हमें अपने दिमाग पर नियंत्रण करना सिखा देती है। हम अकारण भी खुश रहना सीख जाते हैं।

खुशियाँ तलाशने पर नहीं मिलती वो तो कभी भी, कहीं से भी और किसी भी चीज़ के तौर पर हमारे जीवन में आ जाती हैं। जो लोग खुशियों के लिए कारण ढूँढते हैं वे आर्टिफिशियल यानी बनावटी खुशी ही हासिल कर पाते हैं। जैसे हम बनावटी और गंधरहित कागज़ या अन्य किसी चीज़ से बने फूल ख़रीदकर अपने घर में सजाकर खुश होते हैं। अपनी खुशी के लिए उन पर इत्र या कोई अन्य खुशबू वाला पदार्थ छिड़क देते हैं लेकिन असली खुशी तो असली फूल से ही मिलती है। वो फूल हमारे कहने पर या हमारी इच्छाओं पर नहीं खिलता वो अपने समय और प्राकृतिक नियमों के अनुसार फलता-फूलता है।

यदि तुम्हारे जीवन में किसी कारण से खुशी है, तो तुम कभी उसका आनंद नहीं उठा सकते क्योंकि कारण तो आता-जाता रहता है। जो अकारण खुश रहते हैं वह साईं के भक्त हैं। यानी जो हर काल, हर परिस्थिति और हर माहौल में खुश रह लेते हैं, वो साईं के भक्त हैं।

दासगणु महाराज कीर्तन करते थे। ये वो व्यक्ति हैं, जिन्होंने अपने कीर्तन के ज़रिए बाबा की ख्याति पूरे महाराष्ट्र में फैलाई। एक रोज़ उन्हें प्रेरणा हुई कि ईशावास्य उपनिषद पर टीका करें। टीका यानी कि उसका भावार्थ लिखना। उन्होंने टीका लिखना शुरू किया, लेकिन एक जगह वह अटक गए, तो साईं के पास पहुँचे। बोले, बाबा रास्ता दिखाओ! मैं यहाँ अटक गया हूँ, क्या करूँ!

यहाँ बाबा ने एक लीला रची। बाबा ने कहा-तुम मुंबई चले जाओ। काका साहब दीक्षित के घर पर उनकी नौकरानी तुम्हारी समस्या का समाधान कर देगी। महाराज हतप्रभ रह गए। सोचा नौकरानी और मुझे उपनिषद पर ज्ञान देगी? और फिर अहंकार का भाव उनके मन में कुलबुलाने लगा। बाबा अहंकार के हमेशा खिलाफ़ रहे हैं। उन्होंने समय-समय पर हर किसी का अहंकार तोड़ा है। बाबा ने उनको रास्ता

दिखाया, दासगणु महाराज को मानना भी पड़ा। क्या करते? टीका में अटक जो गए थे। कोई चारा भी नहीं था उनके पास। वे मुंबई में काका साहब के यहां पहुँचे। वहां रात भर उनके दिमाग में चिंतन-मनन का दौर चलता रहा। अगले दिन सबसे-सबेरे जब उनकी नींद टूटी, तो उनके कानों में मीठी वाणी सुनाई दी। जैसे कोई गुनगुना रहा हो। गाने के बोल थे... लाल रंग की साड़ी, जिसकी ज़रीदार किनार है। दासगणु महाराज जब बाहर गए, तो देखा कि नौकरानी नाम्या की बहन मलकर्णी रोज़मर्रा के काम करते हुए बहुत खुश होकर अपनी मस्ती में यह गीत गुनगुनाए जा रही थी।

दासगणु महाराज को उसके कपड़ों की दशा देखकर उस पर दया आ गई और उन्होंने उसे लाल रंग की ज़रीदार साड़ी मंगाकर दे दी। साड़ी मिलते ही वह बड़ी खुश हो गई। उसने बड़ी उत्सुकता से साड़ी पहनी। उसके बाद पूरे दिन उल्लास के साथ घर का कामकाज निपटाया।

अगले दिन दासगणु महाराज ने देखा कि मलकर्णी फिर से वही अपनी फटी-पुरानी साड़ी पहनकर काम पर आई थी। उतनी ही खुशी से वो फिर एक नया गाना गुनगुनाते हुए मस्ती से अपना काम कर रही थी। दासगणु महाराज ने हैरानी से उससे सवाल किया-मैंने जो साड़ी तुम्हें दी थी, उसे पहनकर क्यों नहीं आई, वह कहाँ रख दी? मलकर्णी ने कहा-रोज़ नई साड़ी पहन कर थोड़े ही आऊंगी! उसे तो मैंने संदूक में रख दिया। बस दासगणु महाराज को अपनी जिज्ञासा का समाधान मिल गया कि खुशी जो है, वो किसी चीज़ पर आधारित नहीं है। जो खुश रहना चाहता है, वो हमेशा खुश रहता है। कहीं भी, किसी भी चीज़ और परिस्थिति में खुशी ढूंढ लेता है। यूं भी कहा जा सकता है कि जो खुश रहना चाहता है उसे खुशी खुद ढूंढते हुए आ जाती है और जो खुशी की तलाश में तनाव पालता है, उसे साक्षात परमब्रह्म भी खुश नहीं रख सकते। यदि आपकी खुशी किसी चीज़ पर आधारित है, तो आप भगवान में, अपने साईं में विश्वास नहीं रखते। यदि किसी चीज़ के मिल जाने पर या खो जाने पर

आपकी खुशी आती या जाती है, तो आपकी भक्ति में, विश्वास में कहीं कोई कमी रह गई है।

तब की बात...

बाबा का भक्त था नानावली। उसका असली नाम था शंकर नारायण वैद्य। बाबा के शिर्डी में आने से पहले ही वो वहाँ था। वह कुछ अलग तरह का व्यक्ति था। कुछ कहते थे कि वह सनकी था। कभी वो निर्वस्त्र घूमने लगता, तो कभी अपनी जेब में सांप, बिच्छू रखकर घूमता। हाँ, नुकसान किसी का नहीं करता था। जब बाबा शिर्डी पहुँचे, खंडोबा मंदिर के पास नानावली अचानक कहीं से आ पहुँचा और बोला-आओ मामा। बाबा को उसने मामा बना लिया था।

समय गुज़रता गया। नानावली यूँ ही सनक भरी हरकतें करता रहा। उसका एक ही नारा था। बाबा की फौज करेगी मौज। वो ख़ुद को बाबा की सेना का कमांडर यानी सेनापति कहता। शिर्डी के लोग मज़े में कहते बाबा का गुंडा है यह।

यह बात उस वक्त की है, जब बाबा की ख्याति ख़ूब हो गई थी और भक्तों की कतारें लगती थी उनके दर के सामने। नानावली अचानक दनदनाते हुए मस्ज़िद में आ घुसा। जो लोग बाबा के लिए पूजा की थाली लाए थे, वो गिर गईं। लोगों के हाथों से बाबा के लिए लाए उपहार भी गिर गए। भक्तों में अफ़रा-तफ़री मच गई। नाना ने बाबा से जाकर कहा-चल उठ, अपने आसन से। मस्ज़िद में सन्नाटा छा गया। बाबा उठे, तो नानावली ख़ुद बाबा के आसन पर जाकर बैठ गया। बाबा ने कुछ नहीं कहा, बगल में ही खड़े हो गए। नानावली ने प्रश्न किया-क्यूं नवाब कैसे हो? बाबा ने कहा-एकदम मज़े में हूँ। नाना ने फिर पूछा-अब दुनिया कैसी लग रही है? बाबा ने कहा-वैसी ही, जैसे पहले लगती थी।

बाबा से यह उत्तर सुनते ही नानावली आसन से उठा और बाबा के कदमों में जा गिरा। फिर वहां से भाग गया। शिर्डी वाले कहते हैं कि

नानावली के अंदर कोई पहुँची हुई आत्मा थी, जिसने बाबा की परीक्षा लेने के लिए यह प्रपंच रचा था। वह जानना चाहता था कि यदि बाबा को उनके स्थान से हटा दिया जाए, तो क्या वह पहले की तरह ही रहेंगे।

साईं से सीधी सीख...

मलकर्णी की साड़ी और नानावली के उदाहरण से यही साबित होता है कि यदि हमारी खुशी किसी कारण पर आश्रित है, तो हम अभी ईश्वर से दूर हैं। इन दोनों ही किस्सों में यह स्पष्ट हो जाता है कि विपरीत परिस्थितियों में भी सहज रहने से ही हमें खुशी का असली आनंद मिल सकता है। खुशी अगर किसी विषय, वस्तु या विचार पर आधारित है तो उनके सरकने से खुशी भी सरक सकती है लेकिन जो अकारण खुश रहते है तो विषय, वस्तु या परिस्थितियां उन्हें दुःखी कदापि नहीं कर सकती।

बाबा भली कर रहे

साईं का हम से जन्मों का नाता है

माटी जैसा हो बदन, बस लेता नया आकार।
माटी को नये रूप में, ढाले ज्यों कुम्हार।।

साईं जन्म-जन्मांतर के बंधन में बेहद यकीन रखते थे। हमारे दर्शन में लिखा भी है कि आत्मा कभी मरती नहीं, बस शरीर बदलती है। दरअसल, इस बात को कई लोग इसलिए नकारते हैं, क्योंकि उन्होंने ऐसा होते नहीं देखा। उन्हें याद नहीं होता कि उनकी आत्मा पिछले जन्म में किस शरीर में मौजूद थी। लेकिन ज़रा सोचिए, देख तो हम साईं को भी नहीं पाते, तो क्या यह मान लेते हैं कि साईं जैसी कोई वस्तु है ही नहीं! जैसे साईं की उपस्थिति को महसूस किया जाता है, वैसे ही आत्मा का नया अवतार भी आभास करने की ही चीज़ है।

हम अपने जन्म में जो सुख-दुःख भोगते हैं, वे हमारे पूर्व जन्मों के कर्मों का ही प्रतिफल होते हैं। इसलिए यह मान लीजिए कि इस जन्म में हम जो भी काम करेंगे, जैसा भी कर्म करेंगे, धर्म करेंगे उसका प्रतिफल हमें अगले जन्म में भोगना ही होगा। यानी वही असली स्वर्ग और नरक होगा, बाबा इस बात को अच्छे से जानते थे।

कर्म तो अपने आप में एक बेहद वृहद विषय है, लेकिन हमें यह जानना ज़रूरी होगा कि कर्म तीन प्रकार के होते हैं: (1) क्रियमाण, (2) संचित और (3) प्रारब्ध। क्रियमाण कर्म वो होते है जो अभी हुए नहीं है

और इसी कारण से हमारे अधिकार में होते है। संचित कर्म वो कहलाते हैं जो पूर्व में हो चुके हैं लेकिन उनका फल निर्धारण अभी हुआ नहीं है। इन कर्मो का फल अभी पका नहीं है। प्रारब्ध वो कर्म होते है जो पूर्व में हमारे द्वारा किये जा चुके हैं और उनका फल जो हमें भोगना है, निर्धारित हो चुका है और हमारे भाग्य निर्माण में उसका अंश पूर्णतः समाहित हो चुका है।

अमेरिका में एक बड़े साईंको थैरेपिस्ट हैं। उनका नाम है डॉ. ब्राइन वाइस। उन्होंने पुनर्जन्म पर बहुत सारी किताबें लिखी हैं। ये हिप्नोसिस के भी मास्टर रहे हैं और लोगों को उनके पूर्व जन्म में ले जाते हैं। जब डॉ. ब्राइन लोगों को पूर्व जन्मों में ले जाते हैं, तो उनका संपर्क कुछ ऐसी अच्छी आत्माओं से हो जाता है, जिन्हें वो मास्टर कहते हैं। जब इनका उनसे संवाद हो जाता है, तो यह बन जाता है ''वाइस ऑफ मास्टर''।

डॉ. ब्राइन वाइस ने अपनी एक पुस्तक, मैसेजेस् फ्रॉम द मास्टर्ज़, में लिखा है कि एक बार उनका संपर्क एक मास्टर से हो गया जिसने डॉ. ब्राइन को एक संदेश दिया। यह संदेश था–अवर टॉस्क इज़ नॉट टू **फॉलो साईं बाबा, बट बी साईं बाबा,** यानी कि बाबा का अनुसरण न करो, ख़ुद साईं बन जाओ। यह सच भी तो है, क्योंकि बाबा भी तो यही चाहते हैं।

तब की बात...

नानासाहेब चाँदोरकर को उन्होंने कैसे बुलवाया इसकी कथा भी रोचक है। नारायण गोविंद चाँदोरकर उर्फ़ नानासाहेब डिप्टी कलेक्टर के निजी सहायक थे। शिर्डी से करीब 15 किमी पर कोपरगांव में वह सीमांकन करने आए हुए थे। अप्पा कुलकर्णी शिर्डी के ही रहने वाले थे और उनके रैवेन्यू डिपार्टमेंट में थे। नानासाहेब ने जामाबंदी के कार्य में अपनी मदद के लिए अप्पा को बुलवाया। अप्पा कुलकर्णी ने बाबा से अनुमति ली क्योंकि शिर्डी से बिना बाबा की अनुमति लिए कोई जा नहीं सकता था और बिना बाबा की अनुमति के कोई भी द्वारकामाई की सीढ़ी चढ़ नहीं सकता था।

अप्पा कुलकर्णी बाबा के पास गए। बाबा ने कहा-ठीक है। जाओ और वहां नाना से कहना कि मैंने उसे बुलाया है। अप्पा कुलकर्णी हतप्रभ कि यह नाना कौन हैं? बाबा ने कुलकर्णी के चेहरे के भाव पढ़ लिए। वे फिर बोले-अरे जाओ भई, वहां तुम्हारा एक अफसर है उसका नाम है नाना। अप्पा कुलकर्णी तो ठहरे मुलाजिम! बेचारे उनको क्या मालूम साहिब का नाम। वहां गए, तो पता चला नारायण गोविंद चाँदोरकर को नानासाहेब के नाम से भी जाना जाता है। उन्होंने बाबा का संदेश नानासाहेब को दे दिया। नानासाहेब ने अहंकार में सवाल किया, वह फ़क़ीर क्यों मिलना चाहता है मुझसे? मैं ऐसे फ़क़ीरों से नहीं मिलता। कुलकर्णी ने बाबा को संदेश पहुँचा दिया कि नाना ने तो आपसे मिलने से स्पष्ट मना कर दिया है। बाबा ने कहा, कोई बात नहीं। बाबा ने सवाल किया, अगली बार जामाबंदी याने कि सीमांकन कब होने जा रहा है। अप्पा ने कहा-बाबा! अब तो यह कोई छह महीने बाद ही होगा। बाबा ने कहा-ठीक है। तुम जाओ तो मुझसे पूछ के जाना और नाना को साथ लेकर ही आना।

अप्पा अगली बार भी गए, बाबा ने फिर वही बात दोहराई। अप्पा फिर नाना के पास पहुँचे और साईं की बात दोहराई। नाना ने फिर जाने से मना कर दिया। इस तरह कुछ समय बीत गया। बाबा ने बुलाना नहीं छोड़ा और नाना भी न आने की जिद पर अड़े रहे। कुछ समय बाद फिर अप्पा बाबा के पास गए। बाबा ने उन्हें फिर से नाना को बुलाने भेजा।

इस बार तो बाबा ने वज़ह भी तैयार कर रखी थी। अहमद नगर जिला कलेक्टर का आदेश था कि चेचक के प्रकोप से बचने के लिए सभी शासकीय कर्मचारी चेचक का टीका लगवाये। चूंकि प्रमुख कर्मचारियों को यह टीका पहले लगवाना था और इसके बारे में पहले से किसी को ठीक-ठीक पता भी नहीं था, इस कारण से नाना तनाव में थे। अप्पा के इस बार फिर बाबा के संदेश के बाद नाना के मन में भाव जगे। उन्हें लगा कि ये फ़क़ीर ही मुझे इस मुसीबत से बचा सकता है। मेरा नाम भी जानता है ये तो? लिहाज़ा मन में कई सवाल लिए आख़िरकार इस बार

नाना जा पहुँचे बाबा के दरबार में। नाना ने जाते ही प्रश्न किया-आपने मुझे क्यों बुलाया! बाबा ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया-मेरा और तेरा चार जन्मों का रिश्ता है। दुनिया में कई नाना हैं, मैंने तुझे ही क्यों बुलाया सोच ज़रा? बाबा ने नाना के संशय का समाधान उनको आश्वस्त करके किया कि इस टीके को लगवाने में कोई नुकसान नहीं है।

इसके बाद देखिए कि नानासाहेब ने बाबा के संदेश वाहक का कार्य किया। संपूर्ण महाराष्ट्र, विदर्भ और खानदेश में बाबा की ख़्याति फैलाई। बाबा के वे भक्त जो बाद में ख़ुद भी अपने-अपने कर्मों के कारण प्रसिद्ध हुए उन सभी को नानासाहेब शिर्डी लाए थे। स्वयं नाना की आध्यात्मिक उन्नति में भी बाबा के साथ उनके संसर्ग का पूर्ण योगदान रहा।

साईं से सीधी सीख...

हम लोग अपने स्वार्थवश ही किसी तीर्थ-स्थल अथवा धाम को जाते हैं। जब तक हम किसी तनाव या परेशानी में नहीं घिरते तब तक हम भगवान की ज़रूरत महसूस नहीं करते हैं। यदि हम अपने सुख के क्षणों में साईं को धन्यवाद देते हुए लगातार, उन्हें हर वक़्त याद करते रहें तो दुःखी करने वाली परिस्थितियाँ अगर हमारे समक्ष आती भी हैं तो हमें दुःख नहीं होगा। अपने आध्यात्मिक विकास और मानसिक स्थिरता के लिए हमें परमपिता परमात्मा या अपने साईं में पूर्ण श्रद्धा रखते हुए अपने सुख के समय में उन्हें याद करते रहना होगा। कबीरदास ने लिखा भी तो हैः

दुःख में सुमिरन सब करें, सुख में करे न कोय।
जो सुख में सुमिरन करें, तो दुःख काय को होय।।

श्यामा और श्रीमती खापर्डे का किस्सा...

बाबा के परमभक्त थे श्यामा, जो एक स्कूल मास्टर थे। एक बार अचानक बाबा ने उनके गाल पर चिमटी काट ली। श्यामा तो कभी बाबा से नाराज़

होते नहीं थे लेकिन उस दिन उन्होंने बाबा से कहा- बाबा, तुम कैसे देव हो। ये सब हरकते मत करो मुझे यह सब पसंद नहीं। बाबा ने हँसते हुए कहा-तुम्हें कैसा देव चाहिए? श्यामा ने कहा-ऐसा देव जो रोज़ हमें मीठा-मीठा और अच्छा-अच्छा खाने को दे। रोज़ नए कपड़े दे। और आख़िर में बोल पड़े-हमें सुख से रखें। बाबा ने तपाक से कहा-इसीलिए तो मैं यहां आया हूँ। श्यामा! मेरा-तेरा 72 जन्मों का नाता है।

ठीक ऐसा ही किस्सा श्रीमती खापर्डे के साथ हुआ। जब बाबा राज़ दोपहर में खाना खाते थे तब एक बार यदि पर्दे गिर जाएं, तो फिर किसी को भी बाबा के कक्ष में जाने की अनुमति नहीं होती थी। कुछ ख़ास लोग जैसे बड़े बाबा, तात्या, श्यामा ही बाबा के साथ भोजन करते थे। एक दिन श्रीमती खापर्डे ने अचानक परदा हटा दिया। दरअसल, उन्हें बहुत इच्छा थी बाबा को नैवेद्य चढ़ाने की। पर्दा हटाकर उन्होंने थाली बाबा के सामने रख दी। बाबा ने बाकी सारा भोजन अलग रख दिया और उसी थाली से स्वाद लेकर खाने लगे। इस पर श्यामा ने उनसे पूछा- बाबा यह क्या है? बाकी भक्त इतने प्यार से तुम्हारे लिए भोजन लेकर आए और तुमने सब परे कर इस बाई की थाली में से ही खाना पसंद किया? बाबा ने तात्या और श्यामा की ओर देखते हुए श्रीमती खापर्डे को जवाब दिया-मेरा इसका कई जन्मों का नाता है। यह कुछ जन्मों पहले साहूकार के यहां मोटी गाय थी। फिर इसका जन्म एक क्षत्रिय परिवार में हुआ और अब ब्राह्मण परिवार में यह जन्मी है। हर जन्म में मेरा इसका नाता रहा है।

साईं से सीधी सीख...

बाबा का मानना था कि यदि तुम्हारे पास कोई आता है तो तुम्हारा उसका ज़रूर कोई पुराना ऋणानुबंध है। यह ऋणानुबंध किसी पूर्व जन्म के लेन-देन का परिणाम हो सकता है। यदि सड़क पर भी कोई भिखारी आता है, तो उसका भी तुमसे पुराने जन्म का कोई ऋण रहा है, जिससे वह तुम्हें मुक्त करने आया है। यदि तुम उसकी मदद न भी करना चाहो,

तो उसे दुत्कारो मत। कितनी अच्छी सीख देते हैं बाबा। यदि कोई हमारे पास मदद के लिए आया है, तो इसे ख़ुदा की नेमत समझें कि उसने हमें इस लायक बनाया है। हम उसकी मदद करें या न करें ये हमारी सद्‌बुद्धि पर निर्भर करता है। यदि हम मानसिक शांति चाहते है तो हमें इस ऋणानुबंध से मुक्ति पानी होगी। हमारा हाथ सिर्फ़ देने के लिए उठे, लेने के लिए नहीं। लेने से यह ऋणानुबंध और आगे के लिए बढ़ जायेगा। जब भी हम पर कोई दुःख या तकलीफ़ आये तो अपने साईं से ही मदद माँगनी चाहिए। किसी और से मदद माँगने पर अहसास होता कि परेशानी तो शायद कुछ पल की थी पर अहसान पूरी ज़िंदगी का चढ़ जाता है।

बाबा भली कर रहे

16

भोगी, उपयोगी

काम-क्रोध-मद-मत्सर, सब देते भांति-भांति के रोग।
इन सबको करो काबू में, बनो उपयोगी और पाओ योग।।

बाबा हमेशा कहते रहे है कि अपनी सब बुराइयाँ मुझे दे दो, अपने दुःख मुझे दे दो, मैं तुम बन जाता हूँ और तुम मैं बन जाओ। आज भी हम इसी उद्देश्य के साथ शिर्डी जाते हैं। हमारी इच्छा होती है कि हम शिर्डी पहुंचें, तो बाबा की शरण में जाते ही हमारी समस्त इच्छाएं पूर्ण हो जाये और सारे पाप-दुष्कर्म दूर हो जाएं। सारी बुराइयाँ मन से क़ाफूर हो जाएं। जब हम शिर्डी से लौटें, तो मैं बनकर नहीं साईं बनकर आयें। मैं यानी अहंकार और साईं मतलब हम। जब मैं धीरे-धीरे हम में तब्दील हो जाता है, तो व्यक्ति मैं के बारे में नहीं हम की भलाई की सोचने लगता है। जब कोई व्यक्ति मेरे-तेरे के फेर से परे हो जाता है, तो उसकी ज़िंदगी बदल जाती है। इंसान उपयोगी बनने लगता है। ऐसे इंसान को कहीं और योग की तलाश नहीं करनी पड़ती। दूसरों के लिए उपयोगी बनने से इंसान योगी बन जाता है।

तब की बात...

एक थीं सीतादेवी तर्खड। उनका सम्पूर्ण परिवार बाबा का भक्त था। एक बार जब वे शिर्डी प्रवास पर थीं, उनके बेटे को पेट में प्लेग की गांठे निकल आई। वे घबराते हुए बाबा की शरण में दौड़ी चली आईं। पहुँचते ही दुःखी मन से बोलीं- देखिए यह क्या हो गया देवा? मेरे बेटे को प्लेग की

गांठे निकल आई हैं। बाबा ने आसमान की ओर देखते हुए कहा-आसमान बेहद काला हो गया है, लेकिन बादल भी बस छँटने ही वाले हैं। इतना कहकर उन्होंने अपनी कफ़नी ऊपर की। लोगों ने देखा कि बाबा के शरीर पर प्लेग की चार गांठे थीं। सीता देवी उनके चरणों में गिर गईं। वापिस घर लौटीं, तो देखा कि बेटा ठीक हो गया है। प्लेग की गांठे गायब हो गई थी।

श्रीमान खापर्डे अपने जीवन की उल्लेखनीय घटनाएं एक डायरी में लिखते थे। इसमें खापर्डे ने बाबा के कई चमत्कारों का भी वर्णन किया है। उन्होंने लिखा कि बाबा की उनसे बड़ी अंतरंगता हो गई थी। बाबा ने एक बार उनसे कहा था कि मैं अपने भक्तों के दुःख अपने शरीर पर ले लेता हूँ। लेकिन इस शरीर की भी अपनी सीमाएं हैं। मेरा शरीर थक गया है अपने भक्तों के दुःख लेते-लेते लेकिन जब तक मेरे प्राण हैं, मेरे भक्तों को कुछ नहीं होगा और मेरे मरने के बाद अस्थियाँ भी मेरी समाधि से मेरे भक्तों में आशा और विश्वास का संचार करती रहेंगी। वो मेरे भक्तों के साथ बात करेंगी। चलेगी-फिरेंगी। कोई भी भक्त मेरी समाधि से कभी खाली हाथ नहीं जाएगा। बाबा ने इसे निभाया, आज भी निभा रहे हैं और आगे भी निभाते करते रहेंगे।

म्हालसापति दुनियादारी से एकदम दूर रहते थे। हालांकि पहले तो उनका आभूषणों का काम था यानी वे पेशे से सुनार थे लेकिन दुनियादारी में उनकी रुचि नहीं थी। दुकान चली तो ठीक, नहीं तो कोई बात नहीं। वे पहले खंडोबा और उसके बाद बाबा की शरण में आ गए थे। बाबा के भक्त उन्हें समय-समय पर उनकी ज़रूरतों के लिए पैसा देने की पेशकश किया करते थे, लेकिन म्हालसा हर बार इनकार कर देते। बाबा की भी इसमें रूचि नहीं थी कि म्हालसा पैसों के मोह में पड़कर अपनी आध्यात्मिक उन्नति की राह कमज़ोर कर दें। वे बाबा की ही तरह भिक्षा मांगकर गुजारा करते थे।

यह दिसंबर, 1886 की बात है। बाबा को श्वांस की तकलीफ़ हो गई थी। तब बाबा की ख्याति इतनी नहीं फैली थी। बाबा ने म्हालसापति को

अपने पास बुलाकर उनकी गोदी में अपना सिर रखा और बोले- म्हालसा मुझे बेहद तकलीफ़ हो रही है। मैं तीन दिन अपने पिता के पास हो आता हूँ। यदि मैं तीन दिन में नहीं लौटा, तो यहीं पर मुझे गाड़ देना और उस पर दो झंडी लगा देना। जिससे तुझे याद रहे कि मेरा साईं यहीं रहता था।

यह कहकर बाबा ने आंखे मूंद लीं और निष्प्राण हो गए। म्हालसापति रो भी नहीं सकते थे। उन पर कितनी बड़ी ज़िम्मेदारी थी कि अपने गुरु, अपने मित्र, परमात्मा याने कि सर्वस्व को संरक्षित करके रखना है। शिर्डीवासियों को तो लगा कि बाबा के प्राण पखेरू उड़ गये है लेकिन म्हालसा को विश्वास था कि बाबा वापस आएंगे। उसने तीन दिनों तक प्रतीक्षा करने की ठान ली।

एक दिन तक गांववालों ने बाबा का इंतजार किया, कुछ नहीं हुआ। साईं के शरीर में प्राण नहीं लौटे। दूसरे दिन कुछ गांववाले जाकर सरकारी अधिकारियों को बुला लाए। वे म्हालसा के साथ जोर-जबर्दस्ती करने लगे कि हम इस शरीर को यहां नहीं रखने देंगे, इससे बीमारियां फैलेंगी। म्हालसा ने कहा - नहीं। मैं बाबा के कहे अनुसार तीन दिन इंतजार करूंगा। उसके बाद उनके कहे अनुसार ही उन्हें दफ़न कर दूंगा। लेकिन तब तक हाथ नहीं लगाने दूंगा।

म्हालसा बाबा के शरीर की रक्षा में लग गए, तो उनके घर दो दिन चूल्हा तक नहीं जला। ऐसी स्थिति में घर में हड़कंप मच गया। पत्नी भूख से बिलखते बच्चों को देखकर रोने लगी। लेकिन म्हालसा की तपस्या देखिए कि वे बाबा का शरीर गोदी में लिए दो दिन तक वहीं बैठे रहे।

तीसरा दिन हुआ। शरीर में कोई हलचल नहीं। गांववाले और अधिकारी म्हालसा के सिर पर मानो तलवार लिए खड़े थे। दबाव बढ़ता ही जा रहा था। 72 घंटे पूरे होने को थे, लेकिन बाबा निष्प्राण। रात घिरने पर गांव वालों ने तय कर लिया कि कल सुबह होते ही बाबा को दफ़न कर दिया जाएगा। अचानक सभी देखते हैं कि बाबा के दांये हाथ की उंगली में हरकत हुई और वे उठ खड़े हुए।

जरा सोचिए यदि उस वक्त म्हालसापति बाबा के शरीर को दफ़नाने की इजाजत देते, तो क्या आज हम बाबा के आशीर्वाद से इतनी खुशहाल ज़िंदगी गुज़र-बसर कर रहे होते? हमारा दुःख कौन हर रहा होता? हमें सच्चे मार्ग पर कौन ला रहा होता? क्या हजारों भक्तों को बाबा से सीधा साक्षात्कार हो पाता?

ऐसे थे साईं और उनकी यौगिक क्रियाएँ। बाबा को योग में संपूर्णता हासिल थी, यानी बाबा परमयोगी थे क्योंकि वो परम उपयोगी भी थे।

साईं से सीधी सीख...

साईं को मानना अलग बात है और साईं की मानना, सर्वथा अलग। बाबा को तो हम सब बहुत मानते हैं और जितना उनको मानते हैं, उतना ही उनसे माँगते भी है। बात है साईं की मानने की। अपने मन को किसी भी वृत्ति से दूर रखने की। साईं की तरह परमयोगी बनने की। लेकिन हम तो योगी भी नहीं बन पाते। हाँ! भोगी ज़रूर बन जाते हैं और भोग करते-करते रोगी भी।

साईं का आधार है हमें 'उपयोगी' बनाना। जब हम दूसरों के लिए उपयोगी भी बन जाते हैं। तो हम अपने-आप योगी भी बन जाते हैं। इस तरह से हम साईं-तत्व के और करीब आ जाते हैं। साईंत्व को प्राप्त कर लेते हैं। उपयोगी बनने पर चित्त की वृत्ति रूक जाती है और ममता का भाव समता के भाव में बदलने लगता है। दुःख, शोक, मोह और भय, सुख, शांति और आनंद में बदल जाते हैं। देने का सुख लेने के भाव से अलग होता है। जब आप माँगते हैं तो भिखारी से लगते हैं। कहते हैं कि अमीर मंदिर के अंदर भीख मांगता है और गरीब मंदिर के बाहर। देने का भाव आपको राजा बना देता है और राजाधिराज साईं के पास ले आता है।

17

बीमारों की सेवा बड़ा परोपकार

सुख में जो कोई साथ दे, पीड़ा में दुत्कार।
कितना भी पूजन-पाठ कर, सबके सब बेकार।।

बाबा हमेशा बीमारों, परेशानियों और मुसीबतों में घिरे लोगों की मदद को आतुर रहते थे। इसी आतुरता ने बाबा को लाखों लोगों के बीच परोपकार की मूरत के तौर पर स्थापित किया। जहां तक लोगों को ज्ञात है, बाबा ने डॉक्टरी की कोई विधिवत शिक्षा नहीं ली थी, लेकिन उनका ज्ञान पढ़े-लिखे लोगों पर भी भारी पड़ता था। शायद वो इसलिए क्योंकि वो ईश्वर का अवतार थे, इसलिए उनके लिए इस संसार में होने वाली कोई भी घटना अनजान नहीं होती थी। वे तो दुनिया को अच्छाई और परोपकार की सीख देने आए थे।

बाबा बीमारों की सेवा और उनके उपचार को प्राथमिकता देते थे। बाबा चमत्कारिक तरीके से बीमारों का इलाज करते थे। हालांकि लोगों के लिए ये चमत्कार होते थे, लेकिन बाबा के लिए वो ज्ञान और अनुभव का हिस्सा होते थे। कभी किसी की आंख में इनफेक्शन हुआ, तो बाबा ने कहा भिलावा के पत्ते आंख पर बांध लो। सामने वाले ने डरते-सहमते बाबा के आदेश का पालन किया। भिलावा का पत्ता उसकी आंख को भला-चंगा कर देगा, ऐसा संशय उसके मन में बना रहता था, चूंकि आदेश बाबा ने दिया है, इसलिए मना करने का साहस भी नहीं था। लेकिन जब उसकी

आंख की बीमारी जाती रही, तब उसे अहसास हुआ कि अरे! वो बेकार में बाबा पर शक कर रहा था। दरअसल, आंख की पीड़ा और भिलावा के पत्ते का कोई संबंध ही नहीं है, लेकिन उस भक्त की आँखें ठीक हो गईं।

तब की बात...

अब बापूसाहेब बूटी के बारे में जान लीजिए। यह वही सौभाग्यशाली व्यक्ति रहे हैं, जिन्होंने शिर्डी में दगड़ी बाड़े का निर्माण कराया था। इस बाड़े में ही बाबा का समाधि मंदिर है, जहाँ बाबा अब आराम कर रहे हैं। बापूसाहेब बूटी नागपुर के करोड़पति सेठ थे, लेकिन बाबा के भक्त हो गए। बापू साहब को एक बार डिसेन्ट्री (पेचिश) हो गई। बाबा ने उन्हें मस्ज़िद में बुलाया। मस्ज़िद में जाने से पहले बापू साहब के दोस्त डॉ. चिदंबरम पिल्लई उनकी बड़ी सेवा कर चुके थे। बहुत दवाइयाँ दीं, लेकिन कोई लाभ नहीं हुआ। मस्ज़िद में बाबा ने उंगली हिलाकर इशारा किया, अब तुमको उल्टियां नहीं होंगी। अब तुम बैठ जाओ, अब तुम ठीक हो जाओगे। उसके बाद बाबा ने डॉ. पिल्लई को बुलाकर कहा, इन्हें बाड़े में ले जाओ और पिस्ता बादाम का गाढ़ा काढ़ा बनाकर पिला दो। डॉ. पिल्लई को हैरानी हुई। डॉ. पिल्लई ने बापूसाहेब को पिस्ता-बादाम का काढ़ा पिला दिया। बापूसाहेब भले-चंगे हो गए। आजकल के डॉक्टर होते तो कहते, डिसेन्ट्री का मरीज है और उसे पिस्ता-बादाम का काढ़ा बनाकर पिला दिया, तो बेचारा मर ही जाए! बाबा की दवाइयों और उनके इलाज के तौर-तरीकों में अगर हम तर्क ढूंढने जाएंगे, तो समझ लीजिए कि फिर हम बाबा में विश्वास नहीं रखते। साईं तर्कों से परे, एक अदम्य अनुभूति हैं।

एक बार बाबा के भक्तों ने मस्ज़िद के जीर्णोद्धार का काम शुरू करा दिया। बाबा को इसके बारे में कुछ नहीं बताया। इन भक्तों में नानासाहेब चाँदोरकर, काकासाहेब दीक्षित और नानासाहेब निमोणकर शामिल थे। हालांकि इन लोगों ने जानबूझकर ऐसा नहीं किया था। दरअसल, यह लोग जब भी बाबा से पूछते कि बाबा मस्ज़िद का जीर्णोद्धार करा दें, तो

इन्हे जवाब न में ही मिलता था। बाबा कहते, मैं तो ऐसे ही, इसी तरह से रहूँगा। साईं को ढकोसलों और आडम्बर बेहद नफरत थी। वो तो गीले फर्श पर और टाट के आसन पर भी बहुत खुशी से रह लेते थे।

बाबा कभी-कभार मस्ज़िद के समीप स्थित चावड़ी सोने चले जाते थे। एक रात बाबा जब चावड़ी सोने चले गए तो इन लोगों ने मौका पाकर मस्ज़िद के जीर्णोद्धार का काम शुरू कर दिया। जब बाबा चावड़ी से वापस लौटै, तो देखकर गुस्से में आग-बबूला हो उठे- यह मेरी मस्ज़िद में क्या चल रहा है? बाबा का गुस्सा देखकर सब लोग तितर-बितर हो गए। कोई बाबा के सामने ठहर ही नहीं सकता था।

मस्ज़िद के जीर्णोद्धार के लिए खंभे गाड़े गए थे, जिन पर रातों-रात छत खड़ी करने का इरादा था, बाबा ने ज़ोर से हिलाकर गिरा डाले। काका महाजनी बेचारे तो नानासाहेब चाँदोरकर और काकासाहेब दीक्षित के कहने पर काम करा रहे थे। उन दिनों उनकी भी हालत खराब थी। उन्हें अतिसार हो गई थी। वो मस्ज़िद में काम कराने जाते थे, तो पानी से भरकर लोटा भी ले जाते थे। क्या पता कब ज़रूरत पड़ जाए।

इस भागादौड़ी में कोई भक्त मूंगफली के दानों का पैकेट छोड़ गया था। भागते हुए काका महाजनी का बाबा ने हाथ पकड़ा और कहा- बैठ यहाँ पे। काका बेचारे बैठ गए, तो बाबा ने मूंगफली छीलकर उन्हें खाने का आदेश दिया। अब यह देखिए बाबा की लीला। बाबा का क्रोध, भक्तों का सहमकर किनारे होना और काका महाजनी का मूंगफली खाना सब एक साथ हो रहा था। काका महाजनी बाबा के आदेश को टाल नहीं सकते थे, लेकिन तभी काका महाजनी ने महसूस किया कि उनकी पेट की तकलीफ़ ठीक हो रही थी। क्या मेडिकल साइंस इसमें लॉजिक ढूंढ सकती है, लेकिन बाबा ये सब करते थे। कह सकते हैं कि बाबा के काम का तरीका अलग था। वे बीमारों का उपचार करते थे, लेकिन आनंदपूर्वक।

साईं से सीधी सीख...

साईं के पास मेडिकल साईंस की कोई डिग्री नहीं थी और न ही वो कोई प्रशिक्षित वैद्य या चिकित्सक थे। हम धरती पर डॉक्टर को भगवान तुल्य मानते हैं। कारण सबको पता है। हम डॉक्टर के पास अपनी बीमारी का इलाज कराने जाते हैं। डॉक्टर हमसे जो कहते हैं, जैसा करने को कहता हैं हम बगैर कोई शक-शंका के उसका अक्षरशः अनुसरण करते हैं। वो हमें कौन-सी दवा दे रहा है, कैसे इलाज कर रहा है, हम इसे लेकर बिलकुल आशंकित नहीं होते। ठीक ऐसी ही स्थिति गुरु, माता-पिता और ईश्वर के मामले में होती है। इन सबकी आज्ञा का हम दिल से पालन करते हैं। कोई शंका की गुंजाइश नहीं होती। अगर शंका हुई, तो समझिए हम अच्छे शिष्य, बेटा-बेटी और भक्त कदापि नहीं हो सकते।

बाबा भली कर रहे

18

उदी सिखाती जीने का रास्ता

तन में कुछ उल्लास भरा हो और मन में हो भक्ति।
निष्प्राण में भी जान फूँक दें, बाबा में है ऐसी शक्ति।।

साईं जिसे भी शिर्डी बुलाते हैं, उसे साईं की धूनी की राख, जिसे साईं के भक्त उदी कहते हैं, साथ में लेकर आने की ललक रहती है। कतार में खड़े, साईं के दीवाने इस उदी को मिलने पर माथे पर लगाते हैं, पानी में घोल कर पी लेते हैं, किसी भी शुभ कार्य में जाने से पहले उसे ज़रूर अपने साथ रखते हैं, काफ़ी सारे तो उसे रोज़ ही सवेरे-शाम अपने माथे लगाकर धन्य महसूस करते हैं। दाभोलकरजी द्वारा रचित पावन ग्रन्थ, श्री साईं सच्चरित्र, में उदी के कई सारे चमत्कारों का उल्लेख भी मिलता है।

ये चमत्कार आज भी होते रहते हैं। बाबा की धूनी की उदी आज भी रामबाण औषधि है, संकट हरती है, कल्याण करती है और साईं के सदा जीवित होने और उनका अपने भक्तों के साथ सदैव होने का सतत अहसास कराती है। आज भी कई ग्रन्थ इस उदी के चमत्कारों पर लिखे जा सकते हैं।

इतिहास गवाह है कि साईं ने अपने दूसरे प्रवास में शिर्डी की उस टूटी-फूटी इमारत, जो कि एक जमाने की मस्ज़िद थी और कई सालों से इसमें इबादत होना बंद हो चुकी थी, को अपना ठिकाना बना लिया। इसे

बाद में बाबा ने मस्ज़िदमाई कहा और अपने अनगिनत चमत्कार, कर्मो और अपने जीवन के साथ-साथ समाधि का भी साक्षी बनाया।

इसी जगह को बाद में लोगों ने अपनी योग्यतानुसार और प्रारब्ध के चलते ज्ञान, काम, अर्थ और मोक्ष पाने का साधन मानते हुए द्वारिकामाई कहा। इसी पावन स्थान पर साईं ने एक नित्य अग्निहोत्र के समान धूनी पूरे समय जलाए रखी। बाबा के हाथ से प्रज्ज्वलित यह धूनी आज भी अनवरत जल ही रही है। बाबा भक्तों से जो दक्षिणा लेते थे, उससे मुख्यतः इस धूनी के लिए लकड़ियाँ लेते। बाबा पूरे समय अपने हाथों से इस धूनी में लकड़ियाँ डालते रहते। यह क्रम बाबा की समाधि के बाद उनके कई भक्तों ने निभाया और अब साईं बाबा संस्थान इस धूनी की पवित्र आग को जलाए रखता है।

बाबा जब शिरडी में नए-नए आए थे तो उन्होंने लोगों के रोगों का इलाज अपनी अनोखी चिकित्सीय विधा से किया लेकिन जब लोगों की भीड़ शिर्डी में बढ़ने लगी तो बाबा ने इसी धूनी से मुट्ठी भर-भर राख लोगों को देना शुरू कर दिया और इस राख ने तो चमत्कार कर दिए। इसी राख ने न जाने कितनों को नयी जिन्दगी दी और कितनों को रोग-मुक्त किया। बहुत से लोगों के बिगड़े काम बने तो कई को अपना खोया भाग्य मिला।

उदी यानी राख की अपनी ताकत होती है। सुना और पढ़ा भी होगा कि जब गांव-गांव में साबुन आदि उतने इस्तेमाल नहीं होते थे तब लोग हाथ साफ़ करने के लिए चूल्हे की राख का इस्तेमाल करते थे। वे राख अपनी हथेली पर अच्छे से मलते और फिर पानी से धो देते। उनका हाथ कीटाणु से मुक्त हो जाता। राख में यह गुण है कि वो आपके हाथों से कीटाणु मार सकती है। आज भी कई गांवों में ऐसा होता है। साधू-संत आज भी ऐसा ही करते हैं। लेकिन जब इस राख से किसी महान पुरुष का स्पर्श होता है, तो उसमें ऊर्जा का संचार भी हो जाता है। यही ऊर्जा व्यक्ति के अंदर की बीमारियों को साफ़ कर देती है। बाबा यही चमत्कार करते थे। वे राख़ की ताकत को अपनी शक्ति और पवित्र ऊर्जा से और

अधिक प्रभावी बना देते थे।

कई भक्तों के तो भाल पर बाबा अपने हाथों से उदी लगाते। यहाँ तक कि अपने घोड़े श्यामसुंदर को भी पालकी के लिए चलने के समय प्यार से उदी लगाते। बड़े प्यार से बाबा खुले हाथों से उदी बांटते और गाते... "रमते राम आओजी, उदियाँ की गुनिया लाओ जी..."

अब की बात...

कई लोगों ने बाबा के चमत्कार देखे और आज भी महसूस कर रहे हैं। हमें भी ऐसे सैकड़ों लोग मिले हैं जिन्होंने अपने अनुभव हमसे बाँटे हैं, उन्हीं में से एक कुछ यूँ है- एक बार साईं की कृपा से हमें भोपाल में एक साईं मंदिर में जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वहां एक सेवादार थीं। वे 1977 का अपना एक अनुभव सुनाने लगीं। उन्होंने कहा- सुमीत भाई, मैं जीवन में पहली बार बाबा के भजन का कार्यक्रम प्रस्तुत करने जा रही थी, तभी मेरा गला बुरी तरह से पक गया, मैंने तो बाबा की उदी पानी में मिलाई और पी गई। शाम को कार्यक्रम में भजन भी गाए और मुझे पता ही नहीं चला कि मेरा गला कब ठीक हो गया। एक साधारण से मनुष्य के लिए यह किसी चमत्कार से कम नहीं, लेकिन बाबा के लिए तो यह आम बात थी। वे उस महिला सेवादार की दुविधा को पढ़ चुके थे। इसलिए उन्होंने ऊदी में अपना आशीर्वाद मिलाया अपने भीतर अथाह रूप से भरी हुई ऊर्जा का एक अंश उसमें मिश्रित किया। जैसे ही उस सेवादार ने ऊदी को पानी में घोला और पिया उसका गला एकदम दुरुस्त हो गया।

ऐसी ही एक घटना और है। उसी मंदिर में हमें एक सज्जन मिले। भोपाल के बी.एच.ई.एल के रिटायर्ड अफ़सर थे, लेकिन बाद में दिल्ली में रहने लगे थे। ड्यूटी के दौरान कारखाने में उनके सिर पर कोई भारी चीज़ गिर पड़ी थी। वे बाबा के भक्त हैं। बाबा ने उनकी जान तो बचा दी लेकिन उन्हें इनसेसेंट वर्टिगो हो गया। मतलब वह अपनी गर्दन ज़रा ऊपर करते, तो चक्कर आ जाते और वे गिर पड़ते। उनके लिए ठीक से खड़े

हो पाना मुश्किल हो गया था। जब वो अपनी यह पीड़ा हमें बता रहे थे, तब उनकी आँखों से आंसू बह रहे थे।

वे कहने लगे- दुनियाभर के अच्छे-बड़े डॉक्टर को दिखा चुका था, लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। भेल प्रबंधन ने ख़ुद मेरा खर्च उठाया। हर तरह से इलाज करवाया, लेकिन लाभ नहीं मिला। फिर मैं किसी के कहने पर शिर्डी गया। मुझे ट्रेन में लिटाकर ले जाना पड़ा, क्योंकि मैं खड़ा ही नहीं हो पाता था। शिर्डी में साईं मंदिर में किसी ने मेरे सिर पर भभूत लगाई और मुझे बाबा के सामने लिटा दिया। जैसे ही मैंने सिर उठाया, मुझे नहीं पता कि मेरा वर्टिगो कहाँ चला गया।

मित्रों, यह तो दूसरों के किस्से हैं। मैं आपको अपना ही एक अनुभव बताता हूँ। मुंबई के नानावटी हॉस्पिटल का चिल्ड्रन इन्टेन्सिव यूनिट। पेशेंट का नाम कृष। मेरी साली का बेटा। कृष को दौरे पड़ते थे। एक दिन इसी तरह के दौरे के दौरान उसने ख़ुद को बुरी तरह घायल कर लिया। उसका शरीर काला पड़ गया। डॉक्टर ने उसके बचने की उम्मीद छोड़ दी थी। हम लोग उसे देखने गए। डाक्टर ने कहा, अब यह केवल समय की बात है।

मेरी पत्नी ने पूछा- आपके पास बाबा की ऊदी है? मैंने हाँ में जवाब दिया। उसने कहा- लाइए। मैं हॉस्पिटल के बाहर खड़ी अपनी गाड़ी से ऊदी लाया। हमने डॉक्टर की परमिशन ली और ऊदी बच्चे के सिर पर लगा दी। चूंकि आईसीयू में किसी को भी ज़्यादा ठहरने की इजाजत नहीं दी जाती इसलिए हमें तुरंत वहां से निकलना पड़ा। करीब एक घंटे के बाद कृष की माँ ने हमें फोन पर बताया कि कृष अब ठीक था, और डॉक्टर ने भी उसे घर ले जाने की इजाज़त दे दी थी।

एक और किस्सा! जयपुर में रहने वाले मेरे अभिन्न मित्र के बेटे को डेंगू हो गया था। उसके प्लेटलेट्स चार लाख से गिरकर मात्र 20 हजार रह गए थे। हम लोग भी जयपुर पहुँचे। मैंने दोस्त को बाबा की भभूति दी और कहा, आगे बाबा भला करेंगे। दोस्त ने पानी में मिलाकर उसे भभूत लगाई और पिला दी। दोपहर को मेरे मित्र ने बताया कि उसके पुत्र को

डॉक्टर ने स्वस्थ पाया और अब उसे वे घर ले जा रहे थे।

साईं से सीधी सीख...

शायद बाबा उदी में हमारे जीवन का सार समझते थे और सदैव उनका प्रयत्न ऐसा ही रहता था कि हम सभी जीवन की क्षण-भंगुरता को समझें। यह परम सत्य है कि मृत्यु सभी को आनी है और इसका कोई भी समय निश्चित नही है। हम सभी को एक ना एक दिन राख में तब्दील हो जाना है। कोई अरबपति हो या फ़क़ीर, सभी की राख एक मुट्ठी बराबर ही होती है। फिर हम किस बात का घमंड रख सकते है!? चिता की आग, सभी को एक बराबर समझती है। सभी का अंत वही है। लेकिन जिस तरह उदी राख होने के बावजूद भी उसे माथे पर लगाया जाता है और राख होने पर भी वह कल्याणकारी होती है, ऐसा किरदार हम सभी का क्यों नहीं हो सकता? क्यों हम ऐसा जीवन न जियें, जिसमे करुणा, प्रेम, आत्मीयता, क्षमा, शांति और एकात्मता का भाव हो, जो हमारे जीते जी ऐसी मिसाल बन जाए जिसे हमारे होने पर लोग आदर्श मान कर हमारे जैसे बनने का प्रयास करें और राख होने पर भी हमारा जीवन और उसमे किये गए कार्य, लोगों का कल्याण करें।

बाबा भली कर रहे

19

जिसकी जैसी नीयत, वैसी उसकी बरकत

मन से माँगो सब मिले और जीवन बने सफ़ल।
बाबा का उपकार हो, मन माफ़िक मिलता फल।।

जो सपने देखते हैं और उन्हें साकार करने की दिशा में अग्रसर हो जाते हैं, वे जीवन में सफ़ल हैं। अगर आपकी नीयत साफ़ है तो नियति भी अच्छी ही होगी। हम मंदिर क्यों जाते हैं? ताकि हमारा मन दूषित भावनाओं से बचा रहे। बाबा के पास भी हज़ारों लाखों लोग इसी उद्देश्य को लेकर पहुँचते रहे और आज भी शिर्डी आ रहे हैं। साईं की महिमा अपंरपार है। वे अपने भक्तों से ऐसे मिलते हैं, ऐसा बर्ताव करते हैं, जैसे जन्म-जन्मांतर का रिश्ता हो। बाबा के दरबार से कभी कोई खाली हाथ नहीं लौटा। अगर आप सच्चे मन से बाबा से कुछ माँगते हैं, तो यकीनन आपका मनोरथ पूरा होगा।

तब की बात...

एक थे श्रीमान औरंगाबादकर। उनकी पहली पत्नी से एक बेटा था। दूसरी शादी को करीब 20 साल होने आए थे, लेकिन संतान का सुख नहीं था। उन्हें एक बच्चे की और कामना थी। उनकी पत्नी सौतेले बेटे के साथ बाबा के दर्शन करने आईं। कई दिनों तक वह शिर्डी में ही रहीं लेकिन बाबा से प्रार्थना नहीं कर पाईं। दरअसल, बाबा के दरबार में भीड़ ही इतनी

रहती थी। आख़िरकार उन्होंने श्यामा से कहा, बाबा से दरख़्वास्त कर दो कि मेरी गोद भर जाए। श्यामा तो बाबा पर जैसे अधिकार-सा रखते थे। श्यामा, श्रीमती औरंगाबादकर को एक योग्य समय बाबा के पास ले गए।

श्रीमती औरंगाबादकर पूजा की थाली में एक नारियल भी लेकर आई थीं, जो उन्होंने बाबा को अर्पण कर दिया। बाबा ने सहजता भाव से उस नारियल को उठाया और उसे कान के पास बजाया। उसमें पानी था। बाबा ने कहा, यह तो गुड़गुड़ करता है। श्यामा ने तुरंत कहा, बाबा इस बाई के पेट में भी बच्चा ऐसे ही गुड़गुड़ करना चाहिए। बाबा ठहरे अंतरयामी। उन्हें श्यामा से ऐसे ही जवाब मिलेगा, यह उन्हे पहले से ही पता था। लेकिन उन्होंने अपने चिर-परिचित अंदाज में श्यामा को झिड़कते हुए कहा- चल हट! कोई फ़क़ीर को आकर नारियल चढ़ा देता है, तो क्या उसको बच्चा होने लगता है?

श्यामा यह अच्छे से जानते थे कि बाबा का स्वभाव ऐसा ही है। वे हठी बच्चे की तरह बोले, बाबा तुम्हें इस बाई की मुराद पूरी करनी ही होगी। बाबा ने कहा- मैं तो तोड़ के खाऊंगा नारियल। श्यामा बोले- जब तक तुम इस बाई की मुराद पूरी नहीं करते, मैं तुम्हें नारियल तोड़ने नहीं दूंगा। बाबा मुस्कुराए- ठीक है भाई! एक साल के अंदर इस बाई की मुराद पूरी हो जाएगी। श्यामा का बाबा पर अधिकार देखिए उन्होंने मुस्कुराते हुए श्रीमती औरंगाबादकर से कहा- अगर एक साल में तुझे औलाद नहीं हुई, तो मैं यह नारियल इसी बाबा के सिर पर तोड़ दूंगा। इस बात को धीरे-धीरे समय होता गया। एक साल बाद श्रीमती औरंगाबादकर अपने बच्चे के साथ बाबा का आशीर्वाद लेने पहुंची। बाबा ने उनकी मुराद पूरी कर दी थी।

साईं से सीधी सीख...

बाबा कभी भी अपने भक्तों को निराश नहीं करते। बाबा इस बात से भली-भाँति वाकिफ़ हैं कि उनके पास कौन किस मंशा से आया है। बाबा

उनका मन परख लेते हैं। अगर सामने वाले का मनोरथ बाजिब है, नीयत साफ़ है, तो वे उसकी झोली में खुशियां अवश्य भरते हैं। श्रीमती औरंगाबादकर अपनी गोद में बच्चे की आस को लेकर व्याकुल थी। बाबा ने उनकी आस पूरी की क्योंकि उन्हें ज्ञात था कि श्रीमती औरंगाबादकर का मन साफ़ है। मांगने वाले के मन में कोई छल-कपट या मोल-भाव का विचार नहीं होना चाहिए। जब हम दाता से कुछ मांगने की इच्छा रखते हैं तो बिलकुल निर्मल हृदय से और स्वच्छ भाव से मांगना चाहिए और देने वाले की नियत पर शक नहीं करना चाहिए। माँगते समय मन में अहंकार की भावना भी नहीं होनी चाहिए। कोई शर्त भी नहीं लगानी चाहिए क्योंकि देने वाला जानता है कि उन्हें किस वक़्त पर किस चीज़ की कितनी मात्रा में ज़रूरत होगी। पूरे विश्वास के साथ साईं से मांगोगे तो साईं तुम्हें वो भी दे देंगे जो तुम्हारी किस्मत नहीं होगा।

तब की बात...

साधू-संत, ऋषि-मुनी अपने बाहरी आवरण पर नहीं बल्कि अपने आचरण को साफ़-सुथरा बनाने का प्रयास करते रहते हैं। बाबा को जिसने भी पहली बार देखा उसे ख़्याल आया-अरे यह संत तो फटे-पुराने कपड़ों में रहता है?, बाद में जब वो बाबा के सानिध्य में आ जाते हैं, तो उनके भाव भी बदल जाते हैं। कितनी अद्भुत लीला है इस संत की जो ख़ुद तो फटे कपड़ों में रहता है, लेकिन उसे दूसरों की फिक्र हमेशा बनी रहती है। जब बाबा की कफ़नी में जगह-जगह छिद्र हो जाते, तब भी वे उसे बदलने में कोई रुचि नहीं दिखाते थे।

तात्या जो बाबा के प्रिय भक्त थे, वे बाबा के फटे कपड़ों में उंगली डालकर उसे और चीर देते थे। इसके बाद बाबा के पास कोई चारा नहीं बचता था। नई कफ़नी बनवानी ही पड़ती थी। दर्जी काशीनाथ शिंपी बाबा की कफ़नियाँ सिलता था। मोटे खद्दर जैसे कपड़े की कफ़नियाँ सिलवाते थे बाबा, वो भी एक नहीं एक साथ 4-5 लेकिन कभी भी उन्होंने काशीनाथ

से मुफ़्त में काम नहीं करवाया। कभी उन्होंने यह नहीं कहा- शिंपी, मैं तुझे मेहनताना नहीं दूंगा। कफ़नी आती और शिंपी जो मांगता बाबा उसे वह मेहनताना दे देते।

इसी काशीनाथ से जुड़ीं कुछ और भी कहानियां हैं, जो बाबा के चमत्कार के रूप में सामने आईं। काशीनाथ पेशे से दर्जी था इसलिए उसके नाम के पीछे दर्जी भी लगता था। ये कहानियां हेमाडपंत के ग्रंथ श्री साईं सच्चरित्र के हिंदी अनुवाद में नहीं है, जिसे श्री शिवराम ठाकुर ने किया है। म्हालसापति का अभिन्न मित्र था काशीनाथ। शिर्डी के पास एक गांव में नियमित हाट लगता था। काशीनाथ वहीं से सिलने के लिए कपड़े खरीदकर लाता था। एक बार काशीनाथ हाट से लौट रहा था। उसके पास ख़ूब-सारा माल था, जो उसने अपने घोड़ों पर लाद रखा था।

काशीनाथ अपनी मस्ती में चला आ रहा था कि अचानक लुटेरों ने हमला कर दिया। लुटेरों ने डरा-धमकाकर काशीनाथ से सब-कुछ छीन लिया जो वह हाट से ला रहा था, लेकिन वो एक पोटली देने को तैयार नहीं था। काशीनाथ ने उसके लिए अपनी ज़िंदगी दांव पर लगा दी। पोटली में तो शक्कर का बुरादा था, जिसे वो चींटियों को डालने लाया था। काशीनाथ ने लुटेरों से कहा- मैंने तुमको सब-कुछ दे दिया लेकिन इस पोटली को हाथ नहीं लगाने दूंगा।

लुटेरों को लालच आ गया कि ज़रूर पोटली में कोई बेशकीमती चीज़ होगी वर्ना यह आदमी अपनी ज़िंदगी दांव पर क्यों लगाता? लुटेरों ने काशीनाथ से पोटली छीननी चाही लेकिन वो अड़ गया। लुटेरों ने उसे मारना-पीटना शुरू कर दिया। काशीनाथ अधमरा हो गया। तभी एक लुटेरे ने उसके सिर पर कुल्हाड़ी दे मारी। काशीनाथ सारी रात मरणासन्न वहीं पड़ा रहा। सबेरा हुआ तो गांववालों की दृष्टि उस पर पड़ी। वे उसे उठाकर वैद्य के पास ले जाने लगे। काशीनाथ उस वक्त थोड़े-से होश में था। वो बोला- मुझे तो मेरे बाबा के पास ले चलो। गांववालों को कुछ समझ नहीं आया, लेकिन जब घायल काशीनाथ अपनी बात पर अड़ा रहा, तो

मजबूरन लोग उसे बाबा के पास ले आए। लुटेरों ने काशीनाथ को बुरी तरह से पीटा था। खासकर कुल्हाड़ी का वार काफ़ी गहरा था। बहुत खून बह चुका था। बाबा ने तुरंत उसका देसी इलाज शुरू कर दिया। कुछ दिनों में काशीनाथ के ज़ख्म भर गए और वो चलने-फिरने लगा।

लोग बताते हैं कि जिस रात लुटेरे काशीनाथ को पीट रहे थे, मस्ज़िद में लेटे बाबा चिल्ला रहे थे- 'मुझे मत मारो! मत मारो।' यह बाबा का चमत्कार ही था कि आख़िरकार लुटेरे काशीनाथ को जिंदा छोड़कर चले गए। इतने गहरे ज़ख्म होने के बावजूद काशीनाथ जिंदा बच गया, यह भी बाबा का ही चमत्कार था। उस वर्ष प्रांत सरकार ने काशीनाथ को लुटेरों से बहादुरीपूर्वक लोहा लेने के कारण वीरता पुरस्कार से सम्मानित भी किया।

साईं से सीधी सीख...

कहते हैं कि होनी को कोई नहीं टाल सकता। ईश्वर भी नहीं। ईश्वर के हाथ में सबकुछ है, वो चाहे तो वक्त रोक दे, लेकिन वो ऐसा नहीं करता। अगर ऐसा कर दिया, तो सारे चक्र रुक जाएंगे। इसलिए बाबा ने काशीनाथ के साथ होने वाली घटना तो नहीं टाली, क्योंकि वो उसकी किस्मत में लिखी थी, लेकिन उसे बचा ज़रूर लिया। अगर बाबा का प्रताप न होता, तो काशीनाथ का बचना नामुमकिन था। बाबा उसका सुरक्षा कवच बन गए थे, इसलिए बाबा रात में चिल्ला रहे थे, मुझे मत मारो। ध्यान देने योग्य बात यह है कि काशीनाथ ने चींटियों के भोजन का प्रबंध कर रखा था और उन्हीं चींटियों के भोजन को बचाने के लिए उसने अपनी जान भी दाँव पर लगा दी थी। साईं को वो लोग बहुत प्यारे लगते हैं जो हमेशा परमार्थ की सोचते हैं और अपनी कमाई से दूसरों का भला भी करते हैं।

तब की बात...

बाबा की बहुत सारी क्रियाएँ और बातें लोगों को सहजता से समझ में नहीं आती थीं। ऐसा ही एक किस्सा है जब बाबा ने एक दिन अचानक

वहीं काम कर रहे एक मज़दूर से उसकी लकड़ी की सीढ़ी मांग ली और उसे राधाकृष्ण माई के घर से सटे वामन गोंदकर के घर पर लगाकर एक तरफ से चढ़कर दूसरी तरफ से उतर गए। उतर कर उन्होंने उसे मज़दूर को सीढ़ी वापिस करते हुए तुरंत दो रुपये मज़दूरी के रूप में दे दिये, जो उस समय के लिहाज से बहुत अधिक रकम थी। लोगों ने जब इस बात पर आश्चर्य व्यक्त किया तो बाबा ने मुस्कुराकर बात को टाल दिया। लोगों का मानना था कि राधाकृष्ण माई जो उस समय बुखार से तप रही थी, बाबा की इस क्रिया के बाद बिलकुल ठीक हो गई थी।

साईं से सीधी सीख...

इस किस्से से बाबा ने कितने सरल और सीधे तरीके से यह दर्शा दिया था कि किसी को भी उसकी मज़दूरी उसका पसीना सूखने से पहले और उसकी चाहत से अधिक मिल जाये तो वह सुख से अपने दिन बिता सकता है। हममें से जो भी बाबा की कृपा से इतने सामर्थ्यवान हैं जो लोगों को काम पर रख सकते हैं, उन्हें रोज़गार के अवसर निर्मित करने चाहिए और यथायोग्य वेतन, इत्यादि समय पर वितरित करते रहना चाहिए जिससे समाज में सम्पन्नता और खुशहाली लाने में हमारा सहयोग लगातार होता रहे।

बाबा भली कर रहे

20

मन की तरंग को साध लो

पुण्य करो निःस्वार्थ भाव से, न करो कोई अहंकार।
लेखा-जोखा व्यर्थ है, करके कोई उपकार।।

जीवन को अच्छा और बुरा बनाने में संगत का बहुत असर पड़ता है। आप जैसी संगत में रहेंगे आपके मन में वैसे ही विचार जन्म लेंगे। आपका आचरण वैसा ही होता चला जाएगा। लुटेरों के हाथों हुई मार-पीट से मरणासन्न अवस्था में पहुँचे काशीनाथ दर्जी के मामले में भी ऐसा ही हो रहा था। बाबा ने कभी भी उससे मुफ़्त में कफ़नी नहीं सिलवाई। बाबा आदमी की मेहनत का पूरा-पूरा सम्मान करते थे। कहावत है घोड़ा घास से यारी करेगा, तो खाएगा क्या? कपड़े सिलना ही काशीनाथ का पेशा था। अगर बाबा उससे निःशुल्क कफ़नी सिलवाते तो वो अपने और अपने परिवार के लिए दाना-पानी का प्रबंध कैसे कर पाता?

अगर बाबा को देखकर उनकी संगत में रहने वाले दूसरे लोग भी बाबा की धौंस दिखाकर मुफ़्त में कपड़े सिलवाने लग जाते तो बेचारे काशीनाथ की ज़िंदगी का क्या होता? जब कड़ी मेहनत के बावजूद उसे भूखे मरने के लाले पड़ जाते, तो निश्चय ही वो पैसा अर्जित करने कोई तिकड़म भिड़ाता, हो सकता था कि वो गलत राह पर चल पड़ता। हमारे समाज में आज ऐसी कई मिसालें मिल जाएंगी।

तब की बात...

इस घटना के बाद काशीनाथ को भी पैसे के अहंकार ने जकड़ लिया था। वो अकसर बाबा को दक्षिणा देने की कोशिश करता। वो भी इसलिए ताकि देखने वालों को लगे कि बाबा की फिक्र में काशीनाथ कितना धन खर्च करता है। यह बात 1890 के आसपास की है। हालांकि बाबा तो ठहरे अन्तर्यामी उन्हें सबके मन की बात पता थी कि कौन किस प्रयोजन से कोई काम कर रहा है। इसलिए बाबा काशीनाथ को मना करते थे कि उन्हें दक्षिणा की कोई आवश्यकता नहीं है। लेकिन काशीनाथ अपने अहंकार के कारण बाबा की बात मानने से इन्कार कर देता और नित्य बाबा से कहता, मुझसे आप दक्षिणा ले लो। मैं आपके दीप के लिए तेल ले आऊँ, आपके कपड़े बनवा दूँ? आख़िरकार बाबा उससे दक्षिणा ले लेते और वो इसलिए ताकि वक्त आने पर काशीनाथ का अहंकार दूर किया जा सके। बाबा उसके पैसों को हाथ भी नहीं लगाते थे। बाबा ने काशीनाथ का दिल रखने के लिए कभी उससे एक आना, तो कभी दो आना लेना शुरू कर दिया। धीरे-धीरे यह नियम हो गया कि काशीनाथ से वह कुछ न कुछ दक्षिणा ज़रूर लेते। पर देखिए बाबा की संगत में रहने के बाद भी काशीनाथ का दिल अहंकार से खाली नहीं रह सका। उसके दिल में यह आ गया कि ''मैं दाता और बाबा पाता''।

आख़िरकार एक दिन बाबा ने काशीनाथ का गुरूर तोड़ने की लीला रची। बाबा ने काशीनाथ से दक्षिणा मांगना शुरू कर दिया वो भी अपनी इच्छा के अनुरूप। शुरुआत में काशीनाथ को बेहद खुशी हुई कि यह तो बहुत बढ़िया हुआ! बाबा ख़ुद उससे दक्षिणा मांग रहे हैं। यानी उससे बड़ा कोई दानी नहीं! लेकिन उसे क्या पता था कि बाबा दक्षिणा मांगने के ज़रिये उसे क्या पाठ पढ़ाने जा रहे हैं। काशीनाथ से बाबा अब स्वयं दक्षिणा माँगते रहे और वो उन्हें गुरूर के साथ देता रहा। आख़िरकार एक दिन ऐसा आया जब काशीनाथ के पास कुछ न बचा। घर में खाने-पीने के लाले पड़ गए। काशीनाथ को अब कुछ समझ नहीं आ रहा था कि वो क्या

करे? घर में कुछ बचा नहीं और यदि बाबा ऐसे ही दक्षिणा माँगते रहे, तो फिर तो उसके भीख मांगने की नौबत आ जाएगी। चिंताओं ने काशीनाथ को घेर लिया। वो परेशान हो उठा, लेकिन अहंकारवश वो बाबा के सामने अपनी व्यथा नहीं बता सका। वैसे भी यह लीला तो बाबा ने स्वयं रची थी, ताकि काशीनाथ का अहंकार दूर हो और वो सद्मार्ग पर चल पड़े।

अंततः एक दिन बाबा ने उससे कहा- काशीनाथ जब तू दक्षिणा देता है न, तब तू अहंकार क्यों करता है, रे? मैं तो ठहरा फ़क़ीर। तू कितना भी कुछ मुझे दे दे! मेरे पास तेरा दिया कुछ भी नहीं बचेगा। तू तो घर गृहस्थी वाला है रे, अहंकार अपने अंदर मत ला। काशीनाथ को समझते देर नहीं लगी कि बाबा पहले उससे दक्षिणा लेने से मना करते थे, लेकिन बाद में क्यों मांगने लग गए थे। काशीनाथ बाबा के पैरों में गिर पड़ा। उसे अपनी गलती का अहसास हो चुका था। बाबा के चरणों में गिरते ही काशीनाथ का अहंकार क़ाफूर हो गया। उस दिन के बाद से काशीनाथ की किस्मत ने फिर पलटा खाया। शिर्डी वाले तो कहते हैं कि काशीनाथ की किस्मत ऐसी चमकी कि वो पहले से ज़्यादा धनवान और विनम्र हो गया।

साईं से सीधी सीख...

बाबा ने यह लीला सिर्फ़ काशीनाथ के अहंकार को तोड़ने के लिए नहीं रची थी, बल्कि इसके ज़रिये वे दूसरे लोगों को भी एक सीख देना चाहते थे। बाबा ने कई मौकों पर कहा- 'यदि हम किसी को दान-दक्षिणा या उपकार में कुछ चीज़ें देते हैं या विकट परिस्थितियों में किसी की मदद करते हैं, तो आंखों में आँखें डालकर अपने धनवान-बलवान होने का दंभ न भरें।' क्योंकि जो आपसे लेता है, उसकी आंखों में हमेशा शर्म होती है, धन्यवाद का भाव होता है। उसकी आंखों में नमी होती है। लेकिन अगर आप अहंकारवश उसे कुछ दे रहे होते हैं, तो आपकी आंखों में ख़ुद के महान होने का भाव झलकता है। आपकी महानता का बखान किसी और को करने दीजिए, स्वयं न करें, एक बड़ा आदमी, अच्छा आदमी वो है,

जिसकी तारीफ लोग करें, न कि वो स्वयं।

एक दिन की बात है। बाबा से किसी ने सवाल पूछ लिया, सारी दुनिया ईश्वर को पूजती है, लेकिन वो तो दिखता ही नही है? जवाब मिला, तुम्हें जो चाँद -सूरज, पृथ्वी, हवा-पानी आदि मिले हैं, वो किसने दिए? तुम्हारी रगों में जो खून बहता है, वो कैसे बनता है? तुम्हारी धड़कनों को साँसें किसने दीं? घर-गृहस्थी बसाने की तरकीब किसने सिखाई? रोजी-रोटी की समझ कहाँ से आई? सवाल करने वाला निरुत्तर।

बाबा का यही मानना रहा कि जो चीज़ दिखती नहीं है, इसका मतलब यह नहीं कि उसका कोई अस्तित्व नहीं है। हवा हमें कहाँ नज़र आती है? हमारे दिल को कौन धड़का रहा है, क्या कभी किसी ने देखा? हमारी आंखों में जो रोशनी है, वो किसने दी? यही सब तो ईश्वर है। **''ऊर्जा ही ईश्वर है''**। इस संसार में जो कुछ है, वो सभी ईश्वर की ही तो देन है। ईश्वर बड़ा विनम्र है । हमें इतना सब देने के बाद वह यह नहीं देखना चाहता कि हम लेते-लेते कितने शर्मसार हैं, इसीलिए वह सामने नहीं आता। हम ईश्वर के अस्तित्व में यकीन करें या नहीं, ईश्वर हमारे अस्तित्व में ज़रूर यकीन रखता है। यही कारण है कि नित नये जन्म हो रहे हैं और इतने उत्खनन के बाद भी यह पृथ्वी बढ़ती हुई जनसंख्या का भार उठा रही है और उसकी ज़रूरतें भी पूरी कर रही है।

एक सज्जन ने प्रश्न उठाया, कहते हैं कि ईश्वर हमारे मन में बसता है, फिर बुराइयाँ कैसे जन्म ले जाती हैं? उत्तर मिला, एक अकेले दूध से कितनी चीज़ें बनती हैं, लेकिन क्या कच्चे दूध में वो सब दिखाई देती हैं। मक्खन भी दूध में ही होता है। लेकिन जब तक दूध को मथा नहीं जाए, वो बाहर नहीं निकलता। जब हम मक्खन के लिए दूध को मथते हैं, तो उसे मट्ठा भी निकलता है। दोनों के गुण-दोष अलग-अलग होते हैं। उपयोग करने का तौर-तरीका भी अलग-अलग होता है। किसे कब और कैसे इस्तेमाल करना है, यही सूझबूझ व्यक्ति को इन्सान बनाती है। जैसे जो व्यक्ति मोटा है, अगर वो रोज़ ख़ूब सारा मक्खन खाए, तो उसकी

चर्बी बढ़ती जाएगी और उसकी ज़िंदगी खतरे में पड़ सकती है। वहीं जब गला खराब हो और सीधे कच्चा मट्ठा पी लिया जाए, तो तबीयत और नासाज़ हो सकती है। लेकिन दोनों को सही वक्त और सही तरीके से इस्तेमाल किया जाए, तो फायदेमंद भी है।

ठीक वैसी ही स्थिति हमारे मन के अंदर बैठे ईश्वर की है। अगर हम अपने मन को ठीक से मथेंगे, तो ईश्वर किसी न किसी रूप में हमारे सामने आ जाएंगे। हमारी मदद करेंगे। अगर हमने मथते वक्त अहंकार का भाव रखा, तो दूध खराब भी हो सकता है। हमें अच्छे परिणाम नहीं मिलेंगे।

तब की बात...

शिर्डी में रहते थे रघु पाटील। एक बार वे नेवासा में रहने वाले बालाजी पाटिल के घर गए। उनका दिन बहुत अच्छा बीता और ढेरों बातें भी हुईं। शाम को अचानक उन्होंने देखा कि गौशाला में एक सर्प घुस आया है। सभी पशु डर के मारे यहाँ-वहाँ भागने लगे। लेकिन बालाजी के मन में आया कि कहीं यह साईं तो नहीं? क्योंकि बाबा लोगों को सीख देने के नये-नये तौर-तरीके अपनाते रहते थे। वे फौरन दौड़े और घर से एक प्याला दूध ले आए। फिर विनम्र भाव से बोले, बाबा आप डराइए मत, दूध पीजिए। कुछ देर बाद सर्प वहां से चला गया। वो सर्प बाबा भी हो सकते थे और असली सर्प भी।

साईं से सीधी सीख...

यह ईश्वर के होने का ही आभास था। जैसे अगर हम सर्प को मारने की कोशिश करते, तो निश्चय ही वो भी फुफ़कारता, पलटवार करता। लेकिन बालाजी ने उसके आगे दूध रख दिया और फिर वो सर्प वहाँ से चला गया। ठीक वैसी ही स्थिति हमारे मन की है। अगर हम मन में बैठे विकारों को जबरन मारने की कोशिश करेंगे, तो वे और बलशाली हो जायेंगे। उन्हें तो

बस प्यार से, सहज भाव से दूर किया जा सकता है। अगर हम विचारों को उकसाएंगे और उसे बल देंगे तो वो विकार बन जाएंगे। विचारों को साधना, विकारों को साधने से कहीं आसान होता है। विचार के विकार से पनपा ज़हर दुनिया का सबसे खतरनाक ज़हर होता है।

बाबा भली कर रहे

21

सुनो, गाओ और याद करो

मन से कुछ भी चाहोगे, पूरी होगी आस।
बाबा हर पल साथ हैं, रखो अगर विश्वास।।

गुरु की महिमा के बारे में कितना भी लिखो, बखान करो, कम है। इस ब्रह्मांड में गुरु से बड़ा कोई नहीं। ईश्वर, माता-पिता और दोस्तों के गुण एक संग जिस व्यक्ति में मिलते हैं, वो गुरु कहलाता है। साईं ने गुरु के महत्व को अच्छे से प्रस्तुत किया। उन्होंने अपने भक्तों को बताया कि जीवन में गुरु का क्या महत्व है। बाबा ने यह भी बताया कि जितनी एक शिष्य के लिए गुरु की आवश्यकता है, उतनी ही गुरु के लिए एक अच्छे शिष्य की भी है। जब तक एक शिष्य में अपने गुरु के लिए समर्पित न हो उसकी शिष्यता अथवा भक्ति फलीभूत नहीं होती।

भक्ति याने प्रभु में प्रीति। जब साईं से लगन लग जाती है और हमें लगातार उनका ध्यान रहता है, हमारे मन से इच्छा होती है कि उनकी छवी देखी जाए तब हम मान सकते है कि हमें साईं में प्रीति हो गई है और उनके भक्त बन गये है। भक्ति के दो पुत्र, ज्ञान और वैराग्य, माने जाते हैं। सदाचरण भक्ति के माथे की बिंदिया होती है। सदभाव और समता भक्ति के हाथ के कंगन होते है। सदाशयता भक्ति की करधनी और श्रृद्धा और सब्र भक्ति के पैर की पायल माने गये हैं।

बाबा अकसर छोटी-छोटी कहानियों में बात करते थे। उनको समझना मुश्किल था। दरअसल, बाबा की बातों में गूढ़ रहस्य छिपे होते

थे। बाबा अन्तर्यामी हैं। वे भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों के ज्ञाता हैं, लेकिन हम-तुम अपने भूत और वर्तमान के अलावा कुछ नहीं जानते। हमें यह नहीं पता होता कि हमारा आने वाला कल कैसा होगा? भूत और वर्तमान भी हम सिर्फ़ अपना ही जानते हैं, दूसरों की ज़िंदगी में क्या गुज़रा और क्या चल रहा है, यह भी हमें नहीं पता होता। लेकिन बाबा सबके बारे में सब कुछ जानते थे। यही कारण है कि जब वो कुछ बात करते तो वे सामने वाले के भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों का बखान कर देते । यह बात हर कोई नहीं समझ पाता था। केवल वह व्यक्ति जिसकी ओर बाबा का इशारा होता, वह ज़रूर कुछ मंशा पकड़ पाता।

एक बार का किस्सा है। आनंदराव पाटणकर नामक एक व्यक्ति बाबा से मिलने शिर्डी पहुँचे। आनंदराव जब शिर्डी में बाबा के दर्शन करने मस्ज़िद पहुँचे, तो बाबा ने बगैर आगे-पीछे कुछ यह बात बोल दी- एक व्यापारी के घोड़े ने यहां लीद के 9 गोले कर दिये। इस बात का न ओर न छोर, अचानक बाबा ने ऐसा क्यों कहा, आनंद राव को समझ नहीं आया। बाबा के एक भक्त काका साहब दीक्षित वहीं पर मौजूद थे। वे आनंदराव के हैरानी को भांप गए। उन्होंने कहा- भाई, मैं बाबा के कहे का सही-सही अर्थ तो नहीं बता सकता लेकिन मुझे लगता है कि लीद के 9 गोले से बाबा का अर्थ है नव विधा भक्ति यानी भक्ति के 9 प्रकार।

श्रवणम्, कीर्तनम्, स्मरणम्, विष्णुः पाद सेवनम्,
अर्चनम्, वंदनम्, दास्यम्, संख्यम्, आत्म निवेदनम्।

बाबा अकसर कहा करते थे- "मेरे भक्तों के घर कभी अन्न और वस्त्र का अभाव नहीं होगा। जो अंतःकरण से मेरे पास आएगा, उसका कल्याण होगा." साईं बाबा के कहे हुए इन शब्दों का बड़ा गहरा अर्थ है। साईं के भक्तों ने यह अनुभव किया है, कि यह वचन पूर्णतः सत्य साबित होते हैं और भक्तगण यह स्वयं जान लेते हैं कि बाबा के बोले हुए शब्द कोई मरीचिका नहीं बल्कि सत्य होते हैं। यह वचन साईं के भक्तों में साईं के

प्रति महत्त्व-बुद्धि को प्रगाढ़ करते हैं, साईं के चरणों में आस्था को बढ़ाते हैं और साथ ही स्वयं को आत्म-बोध या आत्म-अनुभूति की ओर ख़ींच लाते हैं।

सच ही तो है, व्यक्ति में यदि अन्न और वस्त्र की चिंता ख़त्म हो जाती है तो वह, धीरे-धीरे ही सही, आत्मोन्नति की सीढ़ी चढ़ने लगता है। मैनेजमेंट एक्सपर्ट एब्राहम मास्लो द्वारा दी गयी और मैनेजमेंट के कोर्स में पढ़ाई जाने वाली 'Maslow's Hierarchy of Needs' नाम के सिद्धांत को पढ़ाते समय मैनेजमेंट गुरु भी बताते हैं कि इंसान की मूलभूत ज़रूरतें जैसे कि रोटी, कपड़ा और मकान की पूर्णता के बगैर उसकी प्रगति self-actualisation यानि आत्म-अनुभूति की ओर संभव ही नहीं है।

इन पहली और अंतिम सीढ़ी के बीच तीन और सीढ़ियाँ होती है। दूसरी सीढ़ी के रूप में सुरक्षा की आवश्यकता का उल्लेख हुआ है। यह भी साईं में भक्ति पूरी करती है। साईं के भक्तों ने ख़ुद ही महसूस किया है कि साईं-साईं का सुमिरन मात्र करने से तमाम सुरक्षा मिल जाती है और भय दूर हो जाते हैं।

तीसरी सीढ़ी पर एक इंसान को चाहिए होती है- समाज में स्वीकार्यता अपने और अपने परिवार के लिए, अपने कार्यों के लिए। यहाँ भी साईं कहाँ पीछे रहते हैं! साईं की कृपा से जब मन में साईं का उदय होना प्रारम्भ होता है तब से हमारे विचारों में जो पर्तिवर्तन आता है, वह हमारे कार्यों का स्वरूप बदल देता है। कार्य सद्कार्यों में तब्दील होने लगते हैं, उनकी प्रशंसा होने लगती है और समाज में मान-सम्मान मिलने लगता है। इन्ही कार्यों के चलते परिवार को पहचान भी मिलती है।

अगली सीढ़ी पर स्वाभिमान, आत्म-विश्वास, सम्मान पाने की ललक और सम्मान देने की इच्छा, पराक्रम, इत्यादि आता है। साईं के भक्तों को आत्म-सम्मान के लिए कहीं जाने की ज़रूरत। छोटा हो या बड़ा, साईं ने सभी को हरदम, हमेशा सम्मान दिया उनका भाग्य बदल कर या कहें कि उन्हें अपनाकर बाबा ने उनकी जीवन-गति ही बदल दी।

श्रवण–भक्ति का पहला प्रकार

भक्ति का यह प्रकार सबसे आसान और सुलभ है। इसमें किसी प्रकार के शारीरिक श्रम की ज़रूरत नहीं होती है। कान के रास्ते शुरू होने वाली भक्ति आत्म–निवेदन के अंतिम पड़ाव पर पूर्णता पाती है। बाबा लोगों से कहा करते थे कि रामायण, भागवत, महाभारत सब पढ़ा करो। जो लोग किसी कारण–अकारण नहीं पढ़ पाते थे, बाबा उनसे कहते कि तुम सुनो। तुम्हारे कान में यदि हरि का नाम पड़ जाएगा तो तुम भी भक्त हो जाओगे। श्रवण सबसे आसान प्रकार की भक्ति है। जोग, बाबा की आरती उतारा करते थे। एक बार बाबा ने उनसे कहा, तुम एकनाथी भागवत पढ़ा करो और बाकी लोग उसे सुना करेंगे। प्रभु का नाम जैसे–जैसे आपकी जुबान पर आता जाएगा, आपके पाप कटते जाएंगे। जो आपको सुन रहे होंगे, उनका भी उद्धार होगा। इसी तरह बाबा अपने भक्त हाजी अब्दुल बाबा को भी कुरान बोलकर पढ़ने के लिए कहते थे जिससे अन्य भक्त जो धार्मिक ग्रंथ पढ़ न पाते हों, वो भी उसे सुनकर अनुग्रहित हो जायें। इसी तरह बाबा ने रामायण और भागवत भी अपने भक्तों जैसे - नानासाहेब चाँदोरकर, काकासाहेब दीक्षित, बी.व्ही.देव, इत्यादि को भी बोलकर पढ़ने को उत्प्रेरित किया जिससे दूसरे भक्तों का भला हो सके। धार्मिक ग्रंथों का पारायण बाबा के समय से ही शिर्डी में लगातार हो रहा है।

कीर्तन–भक्ति का दूसरा प्रकार

ईश्वर का नाम किसी भी भाषा में उच्चारित हो तो आपके आस–पास का वातावरण शुद्ध और पवित्र बन जाता है। हमारी जिव्हा से जैसे ही ईश्वर का नाम बाहर के वातावरण में गूंजता है तो हमारे आस–पास के वातावरण में एक सकारात्मक ऊर्जा उत्पन्न होती है और हम उस ऊर्जा के दायरे में ऊर्जावान बन जाते हैं। जैसे बाल्मीकि डाकू, उसे किसी ने सलाह दी कि तुम राम का नाम लो। उसे बात ठीक से समझ नहीं आई, क्योंकि उसकी ज़िंदगी तो लूटपाट में गुज़र रही थी। उसे इन सब बातों से क्या लेना–देना

था? ख़ैर, हर इंसान के अंदर एक अच्छाई भी छुपी होती है, आत्मचिंतन की। उसे बेशक कुछ समझ नहीं आया कि उसे क्या बोलना है? फिर भी उसने प्रयास किए ''वह मरा-मरा बोलता रहा''। प्रयास उल्टा था, लेकिन जब उसके बोलने की गति तेज हुई, तो उच्चारण राम-राम निकलने लगा। ठीक वैसे ही, जब हम किसी काम को सीखने की कोशिश करते हैं, तो कई बार उल्टी-सीधी बातें हो जाती हैं। लेकिन निरंतर अभ्यास के बाद हम उसमें महारथ हासिल कर लेते हैं। बाल्मीकि के साथ भी ऐसा ही हुआ। वो धीरे-धीरे राममय हो गए और फिर रामायण जैसे अमर महाग्रंथ की रचना कर दी।

साईं ने भी हमेशा ही अपने मुख पर 'अल्लाह मालिक' सजाये रखा। वे श्यामा को प्रेरित करते कि वो लगातार विष्णु सहस्त्रनाम का जाप करता रहे जिससे उसका भला होगा। इसी तरह जब 1912 में बाबा के उर्स के साथ रामनवमी उत्सव जुड़ गया तो बाबा ने उसमें राम जन्म का बखान करने की जवाबदारी कृष्णराव जागेश्वर भीष्म को दी। बाबा की शेज आरती में भी पहले ज्ञानदेव और तुकाराम महाराज की स्तुति गाई जाती है। इन स्तुतियों के गाये जाने के समय स्वयं साईंनाथ भी इन महान संतों के सम्मान में अपने स्थान पर खड़े हो जाते थे। बाबा के समय में द्वारकामाई मस्ज़िद में रोज़ शाम विभिन्न कलाकारों के भजनों का भी आयोजन लगातार होता रहता था।

स्मरण-भक्ति का तीसरा प्रकार

बाबा का नाम न ले पा रहे हों तो साईं का स्मरण ही मन को शांति पहुँचाने के लिए पर्याप्त है। बाबा के निश्छल स्मरण में गहराई होती है। इतनी गहराई के हम उसमें डूबकर अपने दुःख और पाप से छूट जाते हैं। नाम-स्मरण में जितना गहरा भाव होगा उतनी ही तीव्र अनुभूति के साथ हमारी प्रार्थना साईं तक पहुंचेगी और प्रार्थना का उत्तर मिलने पर भक्ति प्रगाढ़ होती जायेगी।

नाम स्मरण से आ जाते हैं, मेरे साईं बाबा।
उनके आने से कट जाती है, हर व्याधि-हर बाधा।

माधवराव वामनराव अडकर रचित साईं की आरती में भी यही भाव उजागर होता है।

तुमचे नाम ध्याता, ...हरे संसृति व्यथा...

इसका आशय यह हुआ कि बाबा तुम्हारा नाम ध्यान यानी स्मरण मात्र से ही हमारी सारी व्याधियां दूर हो जाती हैं। जब हम बोलकर प्रार्थना करते हैं, तो साईं हमारी बात सुन रहे होते हैं लेकिन जब हम मौन रहकर प्रार्थना करते हैं तो हम साईं की बात भी सुन सकते हैं।

साईं से सीधी सीख...

साईं ने स्वयं को कभी भी भगवान के रूप में निरूपित नहीं किया। उन्होंने हमेशा ही अपने आप को ईश्वर का दास या सेवक ही कहा। उन्होंने ईश्वर में अपनी भक्ति के माध्यम से ईश्वरत्व को अपने अंदर पा लिया था। उन्होंने हमेशा ही सबसे कहा कि ईश्वर का नाम सदैव सर्वाधिक शक्तिशाली होता है और जो हमें इस दुनिया की दुःख, तकलीफ़, पाप और संताप से उपर उठाकर हमें स्वयं में स्थित कर देता और हमारे मन को व्यथित होने से बचाता है। ईश्वर के नाम को सुनो, बोलो, गाओ या फिर केवल याद भर कर लो। यह फिर ईश्वर की ज़िम्मेदारी बन जाती है कि वे अपने भक्तों को कभी नीचा देखने का अवसर न दें। भक्ति के माध्यम से ईश्वर को बांधा भी जा सकता है और पाया भी। यह हम पर आधारित है कि हम किस रास्ते से उस परमशक्ति को पाना चाहते हैं।

बाबा भली कर रहे

22

पैर पखारो, अर्चन करो या वंदन करो

साईं चरणों में समर्पण है इस जीवन का सार।
सर्वस्व समर्पित कर दो, साईं को दे दो अपना भार।।

भक्ति में दो विचारधाराएं चलती है। निर्गुण निराकार और सगुण साकार। ऐसा माना जाता है कि ईश्वर का कोई निश्चित स्वरूप, आकार, रंग, गंध और चिन्ह नहीं है। ईश्वर को इस रूप में मानने वाले निराकार ईश्वर की उपासना करते हैं। इस उपासना में ईश्वर को चित्रों, मूर्तियों या प्रतीकों में न मानकर या श्लोक, मंत्र, ग्रंथ इत्यादि को ईश्वर तक पहुंचने का माध्यम न मानकर भक्ति की जाती है, जो बेहद कठिन और गृहस्थ जीवन का पालन करने वालों के लिए बेहद मुश्किल और दुश्कर होता है। इसके विपरीत, सगुण ईश्वर की भक्ति करने वाले ईश्वर को एक निश्चित स्वरूप में मानकर, देखकर, उसके रूप से अभिभूत होकर उसे भजन, मंत्र और श्लोक आदि से पाने को बेहतर मानते हैं। सगुण आराधना अपेक्षाकृत आसान मानी गई है क्योंकि इसमें ईश्वर को हमारे ही जैसे स्वरूप का माना गया है- जिसका रंग, रूप, वस्त्र, आभूषण और गंध हैं। इस धारणा के आसान होने के कारण इसकी व्यापकता अधिक है और अधिकांश लोग ईश्वर को सगुण आराधना के माध्यम से पूजते हैं।

साईं ने अपने सदेह रहते हुए भी लोगों को यह भास लगातार कराया था कि वो सिर्फ़ शिर्डी में विराजमान साढ़े तीन हाथ के हाड़-मांस के

पुतले मात्र नहीं है बल्कि पूरे विश्व में कहीं पर भी उनको दिल से याद करने पर उनके होने का आभास लगातार उनके भक्तों को होता रहता है।

पादसेवन–भक्ति का चौथा प्रकार

ईश्वर के चरणों की सेवा करना भी भक्ति का एक विशेष प्रकार है। इस प्रकार की भक्ति को पादसेवन कहा गया है। चाहे वो गुरू स्थान हो, द्वारकामाई मस्ज़िद हो, चावड़ी हो या समाधि मंदिर, साईं के चरणों की प्रतिकृति सभी जगह स्थापित है और इनसे साईं के प्रत्यक्ष होने का आभास लगातार होता रहता है।

साईं का एक मूल चित्र बहुत प्रख्यात है जिसमें वे एक शिला के ऊपर बैठे हैं और उनके चेहरे पर एक मंद मुस्कान है। उनका बायां पांव नीचे है। दायां पांव घुटने से मुड़ा हुआ, बायें पैर के घुटने के ऊपर रखा हैं। उनके बाएं हाथ की उंगलियां पंजे पर रखी हैं। उसमें से उनका अंगूठा स्पष्ट दिखता है। महाराष्ट्र में रिवाज चला आ रहा है। अमावस्या जैसे ही ख़त्म होती है और दूज का चंद्रमा प्रकट होता है, लोग अपने हाथ में एक सिक्का लेकर पेड़ की टहनियों के बीच से चंद्रमा को निहारते हैं और उससे यह प्रार्थना करते हैं कि जिस तरह तुम्हारे स्वरूप में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जाएगी, उसी तरह मेरी सुख-समृद्धि में भी वृद्धि होती जाए।

हेमाडपंत की कल्पना देखिए! उन्होंने श्री साईं सच्चरित्र में बाबा के बायें पैर के अंगूठे को उस दूज के चंद्रमा के सदृश बता दिया। हेमाडपंत ने लिखा है कि बाबा के चित्र को जो भी देखेगा और इस अंगूठे को ध्यान में रखेगा उसकी सारी व्याधियां नष्ट हो जायेंगी। ध्यान या पूजन-पाठन में भी एकाग्रचित्त होना अति आवश्यक है। सम्मोहन के दौरान भी एकाग्रचित्त होना पड़ता है। ठीक वैसे ही बाबा के पैर का अंगूठा हमें एकाग्रचित्त होने में सहायक है। हम टकटकी बांधे बाबा के पैर का वह का अंगूठा निहारते हैं, तो हमारा सारा ध्यान उसी पर हो जाता है। बाकी यहाँ-वहाँ क्या चल रहा है, हम भूल जाते हैं। जब तक कोई बात या चीज़ हमारे दिमाग में

चलती रहेगी, हम उसे लेकर व्याकुल बने रहेंगे। यानी हमारी तकलीफ़ दूर नहीं होगी। जब हमें चोट लगती है ज़ख्म होता है, तो उसकी पीड़ा हमारे तंत्रिका तंत्र के ज़रिये हमारे दिमाग तक पहुंचती है। तंत्रिका तंत्र लगातार अपना काम करता रहता है, जब तक हम अपने मर्ज़ का इलाज नहीं करा लेते। यानी वो हमारा ध्यान उस पीड़ा पर बराबर बनाए रखता है। जरा भी हटने नहीं देता। सोचिए अगर हमारा तंत्रिका तंत्र काम करना बंद कर दे, तो क्या हम अपनी भावनाएं, पीड़ा आदि महसूस कर पाएंगे, बिलकुल नहीं। बाबा का अंगूठा हमारे लिए एक तंत्र का काम करता है। जैसे ही हमारी आंखों उस पर ध्यान गड़ाती हैं, वो हमें बुराइयों से दूर कर अच्छाइयों की ओर एकाग्रचित्त कर देता है। यही है पादसेवनम! साईं के चरणों में रहने की इच्छा जिससे उनकी सेवा का सुअवसर मिले, वही इस भक्ति की भावना है।

तब की बात...

दासगणु महाराज को एक बार प्रयाग स्नान की इच्छा हुई। बिना बाबा की मर्जी के तो वे जा नहीं सकते थे। उन्होंने ने बाबा से अनुमति माँगी। बाबा ने कहा- तू प्रयाग क्यों जा रहा है, गणु ? गंगा तो यहीं है। यह कहकर उन्होंने दोनों पैर नीचे रख दिए और उसमें से गंगा प्रवाहित हो चली। यह बाबा का चमत्कार था। साईं की उस चरण गंगा से अमृतपान कर दासगणु महाराज धन्य हो गए और साथ ही उस अमृत की धार अपने शब्दों में व्यक्त कर हमारे लिए बाबा के भजनों के रूप में छोड़ गए।

बाबा की जितनी भी मूल तस्वीरें देखने को मिलती है उनमें प्रायः सभी में बाबा के चरण स्पष्ट दिखते हैं। उनके चरणों में बसने की आकांक्षा साईं के भक्तों में प्रायः देखने को मिलती है। साईं के चरण अभयकारी हैं और उनमें बस जाना अभयत्व को जन्म देता है।

अर्चना–भक्ति का पांचवा प्रकार

भक्ति के इस प्रकार में सगुण उपासना करते हुए भक्त अपने साईं को श्रृंगारित करते हैं, वस्त्र अर्पण करते हैं, धूप-दीप भी दिखाये जाते हैं, आरती उतारी जाती है और नैवेद्य-प्रसाद भी चढ़ाया जाता है। अपने साईं के प्रसाद ग्रहण के बाद भक्त उसी प्रसाद को श्रद्धापूर्वक ग्रहण करते हैं।

यह 1908 गुरुपूर्णिमा की बात रही होगी। उस दिन किसी को याद नहीं रहा कि आज गुरु पूर्णिमा है। बाबा ने सबेरे-सबेरे श्यामा से कहा- ऐ श्यामा, उस बुड्ढे को बुला ला और कहना कि धूनी के सामने जो खंभा है, वो उसकी पूजा करे। बाबा कृष्णाजी नूलकर उर्फ़ तात्यासाहेब नूलकर को प्यार से बुड्ढा कहा करते थे।

तात्यासाहेब पेशे से जज थे। पंढरपुर के प्रसिद्ध विठोबा मंदिर में पूजा के अधिकार को लेकर उनकी अदालत में चल रहे मुकदमे में उन्होंने मौजूदा व्यवस्था के विरूद्ध जानकर जो निर्णय दिया था उससे उनके उपर एक वर्ग विशेष ने बहुत दबाव बनाया था, जो उनके दिल पर गहरा असर कर गया था। यह निर्णय आज भी उस मंदिर में सभी को सेवा का बराबर अवसर देने के लिए याद किया जाता है। उनकी तबीयत इस दबाव को लेकर बिगड़ना शुरू हो गई थी। वो गहरे अवसाद में थे।

तात्यासाहेब को शिर्डी लाने वाले व्यक्ति थे नानासाहेब चाँदोरकर। इसका भी एक किस्सा है। तात्यासाहेब नूलकर ने कहा कि मैं दो ही शर्तों पर शिर्डी चलूंगा, पहली-मुझे अपने लिए बढ़िया सा ब्राह्मण रसोईया चाहिए, दूसरी बाबा को भेंट देने के लिए बढ़िया से नागपुरी संतरे चाहिए। चूंकि बाबा चाहते थे कि तात्या उनके पास आएं, इसलिए उन्होंने यह लीला रची। नाना के पास एक व्यक्ति घूमते-घूमते आया, उसे नौकरी की तलाश थी। नाना ने कहा क्या काम करते हो भई? उसने कहा-रसोईया हूँ। नाना ने उसका नाम पूछा, तो वह ब्राह्मण निकला। यानी तात्या की एक शर्त तो पूरी हो गई। उनके साथ जाने के लिए ब्राह्मण रसोईया मिल गया था। अब सवाल था, दूसरी शर्त पूरी होने का। उसे भी बाबा ने ऐसे

पूरा किया। नानासाहेब डिप्टी कलेक्टर थे, इसलिए उन्हें उपहार वगैरह ख़ूब मिलते थे। एक दिन कोई आकर उन्हें नागपुरी संतरों की पेटी भेंट में दे गया। इस तरह तात्या की दूसरी शर्त भी पूरी हो गई। इसके बाद नानासाहेब चाँदोरकर ने तात्या से कहा-अब शिर्डी चलो! तात्यासाहेब के पास अब तो कोई चारा ही नहीं बचा था। वह चल पड़े।

तात्यासाहेब जैसे ही बाबा के दर्शनों को पहुँचे, बाबा के चेहरे का तेज देखकर भाव-विभोर हो गए। उनका अवसाद आंखों से अश्रु बनकर बह निकला। बाबा के समक्ष आने के बाद तात्या अपनी व्यथा भूल गए। वे बाबा से मिलकर वापस घर लौटे, तो उसके बाद कहीं मन नहीं रमा। नौकरी से त्यागपत्र दे दिया और शिर्डी में आकर एक छोटा सा घर लेकर वहीं बस गए।

इन्हीं के लिए बाबा ने श्यामा से कहा था कि जा उस बुड्ढे से खंभे की पूजा करने को कह। श्यामा को समझ नहीं आया कि बात क्या है। वह दौड़ा-दौड़ा गया दादा केलकर के पास। वे पंचांग देखते थे। उन्होंने पंचांग देखा, तो बताया कि आज तो गुरु पूर्णिमा है। आज गुरु की पूजा करते हैं। बाबा खंभे की पूजा नहीं करवाना चाहते थे। वे तो यह चाहते थे कि सब लोग अपने गुरुजनों को याद करें। इस खंभे को प्रतीक मानकर उनकी पूजा करें। श्यामा ने दादा केलकर से कहा- हमारे गुरु तो हमारे देव हमारे साईं बाबा हैं, लेकिन बाबा तो अपनी पूजा कराने से पीछा छुड़ाते थे। अब बेचारे भक्त क्या करें, शिष्य अपने गुरु यानी बाबा की गुरुपूर्णिमा पर पूजा-अर्चना कैसे करें? श्यामा के दिमाग में यह चल रहा था कि अब बाबा को मनाया कैसे जाए कि वे सब उनकी पूजा करना चाहते हैं।

श्यामा बाबा के पास पहुँचे और अपने मन की बात रखी। बाबा ना-नुकुर करने लगे, लेकिन श्यामा तो श्यामा थे। अड़ गए कि बाबा आज तो हम तुम्हारी पूजा ज़रूर करेंगे। आज तुम मना नहीं कर सकते। हम तो उस खंभे की नहीं तुम्हारी ही पूजा करेंगे। श्यामा ने बाबा को जबर्दस्ती

प्रेम से, हठपूर्वक उठाया और धूनी के सामने लगे खंभे के पास लेकर बैठा दिया। म्हालसापति ने बाबा को चंदन लगाया। श्यामा ने पांव पखारे और दादा केलकर पंखा झलने लगे। इसके बाद शिर्डी में वो हुआ जो पहले कभी नहीं हुआ था। बाबा की आरती पहली दफ़ा उतारी गई। बाबा की आरती उतारने वाले पहले शख्स थे तात्यासाहेब नूलकर।

आज हम लोग बाबा की आरती उतारने के लिए लालायित रहते हैं, लेकिन सबसे पहले किसने बाबा की आरती उतारी थी, वो शायद किसी को याद भी न हो। किसी भी कार्य को जब भक्ति समझ कर किया जाये तो वो कार्य आने वाली पीढ़ियों के लिए उदाहरण बन जाता है। जैसे भक्ति में आस्था का समावेश होता है वैसे ही किसी भी कार्य को आस्था के साथ किया जाना उस कार्य को फलीभूत कर देता है। हर कर्मचारी को अपना कार्य भक्तिभाव के साथ ही करना चाहिए। इससे भले ही तत्काल लाभ होता न दिखे लेकिन लंबे समय में आपकी कर्तव्य निष्ठा आपको दूसरों से ऊपर ले जाती है और आपकी एक अलग पहचान बन जाती है। आप अपने बॉस के विश्वासपात्र बन जाते है और आपको अधिक चुनौतीपूर्ण कार्यों के लिए चुना जाता है। आने वाली पीढ़ियों के लिए आप उदाहरण बन जाते हैं और आपकी गिनती उन चुनिंदा लोगों में होने लगती है जिन पर भरोसा किया जा सकता है।

कुछ ही समय मात्र 47 वर्ष की उम्र में नूलकर अंतिम साँसें भर रहे थे। उन्हें कोई गंभीर रोग हो गया था। अंत समय में उन्होंने श्यामा से यही कहा– मुझे बाबा के चरणों का तीर्थ मिल जाए। उस वक्त रात के एक बज रहे थे। किसी की हिम्मत नहीं थी कि वह बाबा को नींद से उठाए इस समय। सिर्फ़ श्यामा ही इतनी जुर्रत कर सकते थे। श्यामा बदहवास हाथ में कटोरा लेकर मस्ज़िद की ओर भागे। तेजी से मस्ज़िद का दरवाज़ा खोला। खटर-पटर की आवाज से बाबा की नींद टूट गई। बाबा ने गुस्से में पूछा, श्यामा रात को क्यूं आया तू? श्यामा ने तुरंत जवाब दिया– बाबा नूलकर जा रहा है। वह चाहता है कि उसे तुम्हारे चरणों का तीर्थ मिल

मिले। बाबा ने कहा, क्या करूं मैं? श्यामा ने कहा- "कुछ मत करो। ये कटोरा लाया हूँ। उसके अंदर कोलम्बा से पानी भर रहा हूँ, उसमें अपने पैर रखो।" यह कहने की हिम्मत और किसी में नहीं थी। यह केवल श्यामा ही कह सकते थे। श्यामा ने पास में रखे मटके याने कोलम्बा से पानी लिया और बाबा ने उसमें अपने पैर रख दिए। श्यामा ने ले जाकर वह तीर्थ नूलकर को पिला दिया। नूलकर ने साईं-साईं कहते हुए अपने प्राण त्याग दिए। मस्ज़िद में बाबा के साथ म्हालसा भी सोते थे। जैसे ही तात्या ने प्राण त्यागे उसी वक्त बाबा ने म्हालसा से कहा, नूलकर भगवान में मिल गया। अब उसका कोई और जन्म नहीं होगा।

आरती भक्ति में अर्चना का प्रकार है। इस किस्से का जिक्र करना इसलिए ज़रूरी था ताकि जब बाबा की आरती उतारें, तो उनके उस भक्त का स्मरण करें जिसने उनकी आरती पहली बार उतारी। बाबा ने जो भी लीलाएं रचीं वो अपने भक्तों के माध्यम से ही रची।

बाबा के भक्तों में मेघा का और उसकी भक्ति का उल्लेख न हो तो बाबा की जीवनी अधूरी ही रह जायेगी। अनपढ़-गंवार, जिसे उसे ओम नमः शिवाय पंचाक्षरी मंत्र के अलावा कुछ नहीं आता था। मेघा दिन भर ओम नमः शिवाय का जाप करता रहता और साईंजी के यहां भोजन पकाता। उसका भक्तिभाव देखकर हरि विनायक साईं को ख़्याल आया कि इसे आत्मोन्नति के लिए बाबा की शरण में भेज देना चाहिए।

देखिए, कितनी अच्छी बात है। आजकल हम अपने मुलाज़िमों के बारे में कहाँ सोचते हैं, लेकिन साठे जी ने सोचा। आज कहीं न कहीं हम लोग बेहद स्वार्थी और आत्मकेन्द्रित हो गए हैं। साईंजी ने मेघा से बाबा की शरण में जाने को कहा- मेघा जाने को तैयार नहीं हुआ, क्योंकि उसने सुन रखा था कि बाबा मुसलमान हैं। साईंजी ने उसे समझाया- बाबा हिंदू है या मुस्लिम यह सब हमको मालूम नहीं, लेकिन वे बेहद चमत्कारी हैं। तुमको उनके पास जाना पड़ेगा, इससे तुम्हारा जीवन सफ़ल हो जाएगा।

मेघा की निष्ठा सराहनीय है। भले ही अनमने मन से लेकिन मेघा

शिर्डी गया। शिर्डी में बाबा ने मेघा का स्वागत कैसे किया, यह भी बड़ा दिलचस्प है।

दादा केलकर साईंजी के ससुर थे। केलकर मेघा का हाथ पकड़े-पकड़े उसे बाबा के पास ले जा रहे थे। मेघा ने जैसे ही मस्ज़िद में अपना पहला कदम रखा, बाबा गुस्से में बोले-निकालो इस निकम्मे को यहां से! तू एक ऊंचे कुल का ब्राह्मण है, तू क्या करेगा एक यवन के यहां आकर? बाबा एक बार इस तरह से गुस्सा हो जाएं, तो फिर दादा केलकर हो या कोई अन्य उनके सामने कोई ठहर नहीं सकता था। दादा केलकर मेघा से बोले-तू त्र्यंबकेश्वर चला जा, वहीं तेरे शिव विराजते हैं, लेकिन यहाँ मेघा बाबा के चमत्कारिक रूप को देख चुका था। वो सोच में पड़ गया कि आख़िर बाबा को उसके मनोभावों का पता कैसे चला? बाबा को कैसे ज्ञात हुआ कि वो हिंदू-मुस्लिम को लेकर संशय में था? ख़ैर, यहाँ उसके मन में बाबा की भक्ति की लौ टिमटिमाने लगी थी। वह त्र्यंबकेश्वर गया और वहां साल भर आराधना की। साईं साहब उसे हर माह पैसा भेजते थे, लेकिन उसका मन त्र्यंबकेश्वर में नहीं लग रहा था। वह वापस बाबा के पास आना चाहता था, लेकिन डरता था कि बाबा ने जिस तरह उसका पहली बार स्वागत किया था वैसा ही स्वागत उसे दूसरी बार भी न मिले। वह साल भर बाद हिम्मत करके दोबारा शिर्डी गया।

इस बार वह दादा केलकर को साथ लेकर नहीं गया, बल्कि अकेला जाकर बाबा के चरणों में गिर पड़ा। उसे बाबा में साक्षात अपने शिव नज़र आ रहे थे। धीरे-धीरे वह बाबा के करीब आता गया। मेघा का नियम था कि वह रोज़ शिर्डी के तमाम मंदिरों में पूजा करता और उसके बाद आकर बाबा की पूजा करता। शिव मानकर वह बाबा को बिल्व पत्र चढ़ाता। वह जंगल में दूर-दूर जाकर बिल्व पत्र लाता और बाबा को अर्पित करता। प्रदोष हो शिवरात्रि या फिर शिव का कोई अन्य दिन, वह वहां से 15 किमी दूर कोपरगांव जाता जहां गोदावरी नदी प्रवाहित होती है। वहां से पैदल जल लेकर आता था।

एक बार उसने इच्छा ज़ाहिर की- बाबा मैं आपके ऊपर गोदावरी नदी का जल चढ़ाना चाहता हूँ। बाबा उसकी भावनाओं को समझने और मानने लगे थे। बाबा ने कहा- ठीक है चढ़ा दो, लेकिन जो सिर होता है वह शरीर का प्रधान अंग होता है। जल केवल मेरे सिर पर डालो, मेरा बाकी शरीर गीला न हो। अब मेघा तो मेघा! हर-हर गंगे करके पूरा का पूरा जल डाल दिया। पूरा कलश उड़ेल दिया, लेकिन वहाँ खड़े लोगों ने देखा कि बाबा का केवल सर ही भीगा, लेकिन पूरा शरीर सूखा था। यह बाबा का चमत्कार था।

एक बार मेघा खंडोबा के मंदिर के दर्शन किए बगैर बाबा की पूजा करने आ गया। बाबा ने कहा- तू आज कुछ चूक कर रहा है। मेघा सीधा-सच्चा दिल का इंसान था। वह बोला-बाबा मैं खंडोबा के मंदिर गया था, वहां के द्वार बंद थे। इसलिए मैं तुम्हारी पूजा करने आ गया, क्योंकि तुम फिर लेंडीबाग चले जाते और मेरी पूजा रह जाती। बाबा ने कहा-तू वापस जाकर वहाँ पूजा करके आ, तब तक मैं यहीं तेरी राह देखूँगा। मेघा मंदिर गया शिवजी की पूजा की और जब आया तो देखा बाबा वहीं बैठे उसका इंतजार कर रहे थे।

आपने भक्त को भगवान का इंतजार करते सुना होगा, लेकिन क्या कभी भगवान को भक्त का इंतजार करते देखा है? ऐसे हैं हमारे साईं। वे अपने भक्तों की भावनाओं का पूरा ख़्याल रखते हैं क्योंकि उनमें अहंकार का अंश नहीं है। वे अपने भक्तों को अपना मित्र समझते हैं।

एक दिन की बात है, मेघा सोया हुआ था। उसे स्वप्न आया कि बाबा उसके बाड़े में आए हैं और उसके ऊपर चावल के कुछ दाने फेंक रहे हैं। इसके बाद बाबा ने मेघा को आज्ञा दी-मुझे त्रिशूल लगाओ! यह सुनते ही मेघा की नींद उचट गई। वह उठकर बैठ गया। मेघा ने देखा कि उसके सिरहाने चावल के दाने पड़े हुए हैं। उसे समझते देर नहीं लगी कि बाबा ने कोई चमत्कार किया है। वह उसी समय बाबा के पास गया। बाबा उठ चुके थे। उन्होंने मेघा से पूछा-क्या हुआ मेघा, तू मुझे बिना

त्रिशुल लगाए ही आ गया? मेघा ने सवाल किया–दरवाज़ा तो बंद था, फिर आप अंदर कैसे आए बाबा? साईं ने जवाब दिया–मुझे कहीं आने–जाने के लिए किसी दरवाजे की ज़रूरत नहीं होती। मेघा बाबा का आशय समझ चुका था। वह वापस लौटा और बाबा के चित्र के पास लाल सिंदूर से एक त्रिशूल खेंच दिया। ऐसा बर्ताव करते थे बाबा अपने भक्तों के साथ, किसी अपने के जैसा।

कालांतर में पुणे से एक भक्त शिर्डी पहुँचे। वो बाबा को शिवलिंग भेंट करना चाहते थे। सफ़ेद संगमरमर की बनी शिवलिंग। बाबा बोले मुझे ये शिवलिंग भेंट करने का क्या प्रयोजन है भाई? मेघा पास ही में खड़ा था। बाबा उससे बोले–इसे तू ले जा! मज़े की बात देखिए, उस समय काका दीक्षित बाड़े में ध्यान लगाए बैठे थे और उनके ध्यान में वहीं शिवलिंग आया। उन्होंने जैसे ही आँखें खोलीं, मेघा वह शिवलिंग अपने गोद में उठाए–उठाए उनके सामने आया। अब वह शिवलिंग गुरू–स्थान में नीम के पेड़ के नीचे बाबा की मूल तस्वीर के साथ स्थापित है।

मेघा जब तक जिया, उसने उस शिवलिंग की पूजा तो की, लेकिन नूलकर जी के गुज़र जाने के बाद बाबा ने उसे अपनी आरती का अधिकार भी दे दिया। तात्यासाहेब नूलकर के निधन के बाद मेघा ही बाबा की आरती उतारता रहा और मेघा एक पैर पर खड़े होकर बाबा की आरती उतारा करता था। मेघा की मृत्यु पर बाबा उसके माथे को सहलाते हुए फूट–फूटकर रोये थे और गांव की सीमा तक उसकी अंतिम यात्रा के साथ गये थे। बाबा ने कहा था कि मेघा उनका सच्चा भक्त था।

मेघा की मृत्यु के बाद बापूसाहेब जोग को यह सौभाग्य मिला। बापूसाहेब वह आख़िरी व्यक्ति थे, जिन्होंने बाबा की आरती सशरीर उतारी।

वंदना – भक्ति का छठा प्रकार

जब हम किसी देव या देवी की वंदना करते हैं तो हम उनके चरणों में साष्टांग दण्डवत करते हुए नमस्कार अर्पण करते हैं। इसे प्रपन्न होना

भी कहते हैं। पैर का वह भाग जो पंजे और पिंड़ली को जोड़ता उसे प्रपन्न कहा जाता है। वंदना करते हुए भक्त अपने मन में साईं के सामने साष्टांग दण्डवत करते हुए प्रपन्न हो जाते हैं। इसे सर्वस्व अर्पण करने का भी भाव माना जाता है जिसमें सर्व यानी सबकुछ और स्व यानी ख़ुद को न्यौछावर करने का भाव आ जाता है और भक्त तुरंत ही अहंकार के भाव से मुक्ति पा जाता है।

यह मुले शास्त्री की कथा है। नासिक के प्रकाण्ड पंडित, अग्निहोत्र ब्राह्मण, हस्तरेखा विशेषज्ञ। मुले शास्त्री को बापूसाहेब बूटी शिर्डी लेकर आए थे। अमीर लोग अपने साथ ज्योतिषी को ज़रूर रखते हैं। दरअसल, उनमें अविश्वास की भावना होती है कि पता नहीं कब क्या हो जाए? पैसा बढ़ने के साथ-साथ प्रभु में भक्ति कम और ज्योतिषियों-तांत्रिकों में विश्वास अधिक बढ़ जाता है। मुले शास्त्री ने बाबा से निवेदन किया कि बाबा अपने हाथों की रेखाएं उन्हें पढ़ने दें। बाबा ने उन्हें हाथों की रेखाओं को पढ़ने नहीं दिया लेकिन साथ में प्रसाद रूप में उन्हें केले दे दिए। मुले शास्त्री अपने बाड़े में लौटे और फिर पूजा में लीन हो गए।

उसी दिन की सुबह की बात है। सबेरे जब बाबा लेंडीबाग जा रहे थे, तो उन्होंने भक्तों से कहा- गेरूआ लाना, आज भगवा रंगेंगे। उस समय तो किसी को कुछ समझ नहीं आया कि बाबा किसे भगवा रंग में रंगने की बात कह रहे हैं, लेकिन शाम को सारा माजरा स्पष्ट हो गया।

उधर, मस्ज़िद में आरती का वक्त हो गया था। जैसे ही आरती शुरू हुई, तभी बाबा ने बापूसाहेब से कहा-जाओ उस ब्राह्मण (मुले शास्त्री) को बाड़े से बुला लाओ, मुझे उससे दक्षिणा लेनी है। मुले शास्त्री के पास जब यह संदेशा पहुँचा, तो वे हतप्रभ रह गए कि वो एक ब्राह्मण और बाबा यवन! फिर बाबा को वे दक्षिणा कैसे दे सकते हैं? देखिए विधि का विधान! बाबा जैसा संत दक्षिणा माँग रहे हैं और बापूसाहेब बूटी जैसा करोड़पति सेठ मुले शास्त्री से दक्षिणा लेने आए हैं। घोर आश्चर्य में घिरे मुले शास्त्री बोले- चलिए बापूसाहेब। मैं चलता हूँ लेकिन दक्षिणा तो मैं दे नहीं सकता।

दोनों बाड़े से रवाना हुए। वे मस्ज़िद की सीढ़ी तक जैसे ही पहुँचे, आरती शुरू हो गई। बाबा के चेहरे की दिप्ती देखने लायक थी। आभा से उनका चेहरा चमक रहा था। अचानक लोगों ने देखा कि मुले शास्त्री बाबा के चरणों में गिरे हुए उनकी वंदना कर रहे है और ज़ोर-ज़ोर से प्रार्थना कर रहे हैं। दरअसल बाबा की लीला ऐसी ही थी। मुले शास्त्री को बाबा में अपने गुरु घोलप स्वामी के दर्शन हुए थे। जब लोगों ने मुले शास्त्री को बाबा के चरणों में पड़ा देखा, तो वे समझ गए कि बाबा किसे रंगने की बात कह रहे थे? गेरूआ रंग सन्यास और समर्पण का प्रतीक माना जाता है। मुले शास्त्री पूरी तरह बाबा के आगे समर्पण भाव में अपने गुरू के समकक्ष साईं को मान अपना सर्वस्व अर्पण कर रहे थे।

साईं से सीधी सीख...

हमारे दिल में हमारे अपने हमेशा मौजूद रहते हैं। वे कहीं भी कितनी भी दूरी पर रहते हों, जब भी हम उन्हें याद करते हैं, यूँ लगता है कि वे हमारे सामने ही खड़े हों। बाबा के साथ भी ऐसा ही है। अगर हम उन्हें सच्चे मन से याद करते हैं, तो मानकर चलिए वे हमारे संग खड़े हैं। बाबा अकसर उन लोगों से कहा करते थे, जो किसी कारणवश शिर्डी से बाहर जा रहे होते थे या जिन्हें सदा के लिए दूर जाना पड़ रहा होता था कि तुम क्या समझते हो, मैं क्या सिर्फ़ शिर्डी में हूँ? तुम जहां याद करोगे मैं वहाँ भी हूँ।

सच भी है, बाबा तो हमारे मन के अंदर बैठे हैं। आवश्यकता उन्हें याद करने की है। बाबा का व्यवहार बड़ा विचित्र रहा है। वे अचानक कभी गुस्सा हो जाते थे, तो कभी बड़े प्यार से उनके साथ हंसी-ठिठौली करते थे। दरअसल, यह बाबा का चरित्र था। उनकी हर अदा में कुछ न कुछ विशेष प्रयोजन छुपा होता था। अगर वे किसी से भी अचानक नाराज़ हुए हैं, तो इसका मतलब यह था कि वे सामने वाले को किसी बड़ी गलती से बचाने का प्रयास कर रहे हैं, जो वो जाने-अनजाने भविष्य में करने

वाला था। अगर बाबा यकायक विनोदी स्वभाव अख्तियार कर लें, तो जान जाइए कि वे आस-पास के वातावरण को सहज बनाने का प्रयास कर रहे हैं, जो किसी कारण से नीरस हो चला है।

साईं ने हर रूप में अपने भक्तों की भक्ति को सहज भाव से स्वीकार किया और उन्हें हमेशा सत्कर्म के मार्ग पर उंगली पकड़कर अपने साथ लेके चलने की प्रेरणा सदैव दी।

बाबा भली कर रहे

23

चाकरी, मित्रता और स्वयं को देकर साईं को पा लो।

मैं साईं का, साईं हैं मेरे रक्षक। यह निश्चय बदले नहीं।
जो साईं करेंगे, वो मेरे हित का। यह भरोसा टूटे नहीं।।

स्वयं को खोजना मतलब ईश्वर को या साईं को पाने के चार रास्ते हमारे दर्शन-शास्त्रों में बताये गए हैं - ज्ञान, योग, कर्म और भक्ति। इन सभी में कठोर श्रम और निष्ठा का समावेश होने पर ही ईश्वर या स्वयं की प्राप्ति बतलाई गई है। मन में अभय का भाव ईश्वर के प्रति प्रेम से उपजता है और यह प्रेम, भक्ति मार्ग पर निश्छल, निष्कपट और निर्लिप्त भाव से अपने ईश्वर या साईं के प्रति बिना शर्त समर्पण से उत्पन्न होता है। जहाँ भक्ति में इस समर्पण के बदले साईं से कुछ भी चाहने की चाहत पैदा होने पर चाहत तो पूरी हो जाती है लेकिन साईं हम से और हम साईं से दूर ही रहते हैं। जब हम भक्ति के बदले कुछ चाहते हैं तो भक्ति में युक्ति का समावेश हो जाता है जो भावरहित भक्ति को जन्म देता है। अगर साईं पर पूरा भरोसा हो तो हमें लालच में आकर कुछ मांगकर स्वयं को छोटा साबित नहीं करना चाहिए बल्कि इस सत्य पर पूरा भरोसा रखना चाहिए कि साईं ने हमारे लिए जो सोच रखा है वह पर्याप्त है। जब हम साईं से माँगते हैं तो हम अपनी छोटी सोच के हिसाब से माँगते हैं, लेकिन जब साईं देता है तो वह अपनी हैसियत के हिसाब से हमें देता है जो हमारी सोच से कई गुणा बड़ा और आगे का होता है।

दास्यता– भक्ति का सातवां प्रकार

दास्यता यानी अपने भगवान का दास हो जाना। भक्ति के इस प्रकार में भक्त स्वयं को साईं का दास या चाकर समझने लगता है और उनकी सेवा में लग जाता है। जब हम इस भाव से साईं की शरण में जाते हैं तो हम साईं के भरोसे पर स्वयं को छोड़ देते हैं। तब यह साईं की मजबूरी बन जाती है कि साईं हमारा पूरा ध्यान रखे और हमें अपने अंदर बसे ईश्वर या साईं से मिलवा दे।

राधाकृष्ण माई, हाजी अब्दुल बाबा ये सब बाबा के उस श्रेणी के भक्त थे, जिन्होंने बाबा को अपना स्वामी मान लिया था और उनके दास बन गए थे। राधाकृष्ण माई का असली नाम था सुंदरा बाई क्षीरसागर। वे बाल विधवा थीं। 17 वर्ष की उम्र में उनके पति का निधन हो गया था। वे पंढ़रपुर की रहने वाली थीं। उनसे किसी ने कहा– शिर्डी के साईं बाबा स्वयं पंढरपुर के स्वामी हैं, तुम वहां चली जाओ। राधा कृष्णा माई शिर्डी पहुँची और वहीं की होकर रह गई। वह बाबा की गैरहाजिरी में मस्ज़िद जातीं, धूनी सरकातीं, धूनी से काली पड़ गई मस्ज़िद की दीवारों को साफ़ करतीं, बाबा जिस राह से लेंडीबाग जाते उसे बुहारती। कभी किसी और भक्त ने यह काम कर दिया तो कुछ देर बाद वह देखता कि सड़क फिर से गंदी हो गई है और राधाकृष्ण माई झाड़ू लगा रही हैं क्योंकि राधाकृष्ण माई स्वयं वहाँ कचरा फैला देती थीं, जिससे सड़क साफ़ करने का सौभाग्य उन्हें ही मिले। काफ़ी लंबे समय तक, बायज़ामाई के बाद, बाबा के भोजन का ध्यान राधाकृष्ण माई ने रखा। चूंकि राधाकृष्ण माई बहुत सुंदर थी, अपने कई भक्तों के चरित्र की परीक्षा लेने बाबा उनको किसी न किसी कारण से राधाकृष्ण माई के घर भेज देते। राधाकृष्ण माई के अलौकिक सौन्दर्य और विलक्षण भक्ति के चलते उनकी सोच में सकारात्मक परिवर्तन आ जाता। उनके घर को बाबा शाला कहते।

कुछ समय तक यह सड़क साफ़ करने का काम बालाजी नेवासकर ने भी किया। बालाजी नेवासा का रहने वाला था। वह बटिया पर ज़मीन

लेकर खेती करता था और जो भी उपज उसको प्राप्त होती वह, पूरी की पूरी बाबा के सामने अर्पण कर देता। अन्य भक्तों के लिए बाबा उस में से कुछ निकाल लेते और बाकी का अन्न बालाजी के काम आ जाता। एक बार ज़मीन के मालिक से, जिन्होंने अपनी ज़मीन बालाजी को खेती के लिए बटिया पर दी थी, बालाजी का विवाद हो गया। वो अपनी ज़मीन निजी कारणों से बालाजी से वापिस चाहता था। मामला बाबा तक पहुँचा। बाबा ने योग्य निर्णय करते हुए ज़मीन के मालिक को ज़मीन ससम्मान वापिस दिये जाने का आदेश बालाजी को दिया, जिसका सम्मान बालाजी ने किया। इसके बाद भी बालाजी ने अपनी फसल बाबा को अर्पित करने का क्रम जारी रखा। उसी के संकेत स्वरूप आज भी द्वारकामाई में गेहूं का बोरा रखा रहता है जो हर राम नवमी पर बदला जाता है।

नांदेड़ के हाजी अब्दुल बाबा जिसे बाबा अपना कौवा कहते थे, उन्होंने बाबा के कपड़े भी धोए। दियों में तेल भी भरा। मस्ज़िद की सफ़ाई भी की। वे साईं के स्वप्न में प्राप्त आदेश पर अपने गुरू इस्लामपुरकर द्वारा बाबा की सेवा में भेजे गये थे। हाजी अब्दुल बाबा ने काफ़ी लंबे समय तक साईं की समाधी का ध्यान रखा और लगातार साईं की सेवा में लगे रहे।

मित्रता– भक्ति का आठवां प्रकार

जैसे-जैसे आप भक्ति के चरम पर पहुँचते जाते हैं, भक्ति की सीढ़ी चढ़ते जाते हैं, तो प्रभु के दोस्त बन जाते हैं। भक्ति के इस प्रकार में भक्त की भगवान से मित्रता हो जाती है, जिसमें कोई औपचारिकता या भेद नहीं रहता। मित्र की भांति भक्त और भगवान एक दूसरे की सुनते और सुनाते हैं। आप अधिकारपूर्वक प्रभु से कुछ भी करा लेते हैं।

माधवराव देशपाण्डे उर्फ़ श्यामा नामक एक स्कूल मास्टर, साईं के मित्र थे। श्यामा भी बाबा पर ऐसा ही अधिकार रखते थे जैसे कोई मित्र रखता है और साईं ने भी हमेशा श्यामा की बात का, उनकी ज़िद का

हमेशा मान रखा। हम पूर्व में भी पढ़ चुके हैं कि जो भी भक्त संकोचवश या अन्य कारणों से साईं से अपने मन की बात सीधे नहीं कह पाते थे वे श्यामा के ज़रिये, बाबा तक पहुँचते थे। मैं और तू का भेद साईं और श्यामा में नज़र नहीं आता था। जिस तरह शिवालय में जाने से पहले नंदी के दर्शन होते हैं, साईं से पहले भक्तों को श्यामा के दर्शन हो जाते थे। दूसरे भक्तों की तरह बाबा ने श्यामा को बहुत अधिक धन तो नहीं दिया लेकिन इस बात पर श्यामा की नाराज़गी को उन्होंने बड़े-बड़े अधिकारियों का संसर्ग, मान, प्रतिष्ठा, इज्ज़त देकर बाबा ने अपने मित्र होने का फर्ज़ बखूबी निभाया।

आत्म निवेदनम्- भक्ति का नवां प्रकार

भक्ति का आख़िरी प्रकार है आत्म निवेदनम्। आप ईश्वर के हो जाते हो, अपना संपूर्ण उनको दे देते हो। भक्ति के इस प्रकार में साईं को पाते-पाते हम स्वयं के मूल स्वरूप में स्थित हो जाते हैं जो सुख, शांति और आनंद का मिश्रण होता है। ऐसे भक्त को मोक्ष प्राप्त करने के लिए मरने की ज़रूरत नहीं होती। उसका पूरा जीवन शांति से बीतता है और उसे किसी भी प्रकार दु:ख महसूस नहीं होता है।

हरिनारायण उर्फ़ काकासाहेब दीक्षित लोनावला में रहते थे। वे बहुत बड़ा हृदय रखते थे। काकासाहेब ऐसे व्यक्ति थे, जिनके घर जो जाता, वो भूखा नहीं लौटता था। लोग यह तक कहने लगे थे कि लोनावला में होटल वाले परेशान थे क्योंकि काकासाहेब सबको मुफ़्त में भोजन कराते थे। वे बहुत पहुंचे हुए वकील होने के साथ-साथ कई भाषाओं के ज्ञाता भी थे। राजनैतिक रूप से सक्रिय और बहुत पहुंच वाले व्यक्ति थे काकासाहेब।

यह 1906 की बात है। इंग्लैंड में रेल में चढ़ते हुए वे एक दुर्घटना का शिकार हो गए। उनका पांव टूट गया। वह लंगड़ा कर चलते थे। इस कारण से उनका मन उचट गया था। उनके मित्र नानासाहेब चाँदोरकर ने काकासाहेब से कहा- चलो मैं तुम्हें एक संत से मिलवाता हूँ। काकासाहेब

ने मायूस होकर उत्तर दिया- अपने संत से निवेदन करो कि पैर की पंगुता की बजाय वह मेरे मन की पंगुता को दूर कर दें।

काकासाहेब बाबा से मिले और फिर बाबा के ही होकर रह गए। उन्होंने शिर्डी में भक्तों की सुविधा के लिए बाड़ा बनवाया, और वे उनके भोजन की भी व्यवस्था करते थे। अपना काम उन्होंने बंद कर दिया और सब कुछ बेच दिया। उनकी आत्मोन्नति के कारण बाबा ने उनसे कह दिया था कि वे कुछ महिनों तक बाड़े में ही अकेले रहकर धार्मिक ग्रंथों का नियमित पठन करें। इस अवधि में उन्हें मस्ज़िद में भी आने की अनुमति नहीं थी। उनकी पत्नी द्वारा इस बात को लेकर चिंता ज़ाहिर करने पर बाबा ने उन्हें आश्वस्त किया था कि वे बिलकुल चिंता न करें क्योंकि काकासाहेब की ज़िम्मेदारी अब उनकी है। एक बार उनके ब्राह्मण होने के बावजूद भी काकासाहेब बाबा की आज्ञा पर एक बकरा अपने हाथों से काटने के लिए भी राज़ी हो गये थे। सही वक़्त पर बाबा ने उनको रोक दिया था। बाबा ने इस तरह उनकी भक्ति की कई परीक्षाएं भी ली और हर परीक्षा में सफ़ल होने पर उन्हें उनके अन्य समकालीन भक्तों द्वारा 'बावनकसी सुवर्ण' भी कहा गया है यानी ऐसा सोना जो बावन कसौटियों पर खरा उतरा।

एक बार निजी दबाव के कारण एक राज परिवार का मुकदमा आया। बाबा से ऐसी लगन लगी थी कि उनसे अनुमति माँगी कि क्या मैं यह मुकदमा लड़ लूँ? बाबा ने कहा- जाओ लड़ो। बाबा की कृपा से काकासाहेब को उस मुकदमे में विजय प्राप्त हुई। काकासाहेब को वह मुकदमा जीतने पर संदूक भरकर चाँदी के सिक्के फीस के तौर पर मिले। लेकिन काकासाहेब तो बाबा के हो गए थे। उन्होंने सिक्कों से भरा संदूक बाबा के सामने रख दिया। बाबा ने भी उनकी परीक्षा ले डाली। जो भी बाबा के सामने आया, उन्होंने मुक्त हाथों से काकासाहेब द्वारा दिए गए सिक्के बाँट दिए लेकिन काकासाहेब के चेहरे पर रत्तीमात्र भी शिकन नहीं आई। वह तो बाबा से एकाकार हो चुके थे। बाबा के शरणागत हो गए थे।

काकासाहेब ने बाबा के शरीर छोड़ने के बाद मुकदमा लड़कर श्री साईं बाबा संस्थान शिर्डी की स्थापना की और उसे एक मुकाम तक पहुँचाया। उसमें जितनी भी न्यायिक परेशानियाँ थीं, केस लड़कर उन्हें दूर किया। बाबा जब देह रूप में थे, तब उन्होंने काकासाहेब से कहा था- तेरा समय आने पर मैं तुझे लेने के लिए पुष्पक विमान भेजूंगा। ऐसा हुआ भी। संस्थान का कामकाज देखते-देखते काका का वक्त बीत रहा था। एक दिन वे मनमाड़ से ट्रेन में चढ़े। उनके साथ दो साथी और भी थे। साईं की बात करते-करते अचानक काकासाहेब ने अपना सिर एक साथी के कंधे पर रख दिया। विमान आ गया था। काका साहेब अपने साईं के पास चले गए थे। बाबा ने उन्हें आत्मसात् कर लिया था अपने अंदर। यही है आत्म निवेदनम्।

साईं से सीधी सीख...

इस पूरे विश्व में कोई भी ऐसा नहीं है जिसके अंदर प्रेम-भाव न हो। प्रत्येक व्यक्ति का प्रेम पाने अथवा देना का ज़रिया और जगह अलग-अलग हो सकती है, लेकिन प्रेम-भाव एक सरीखा होता है। कोई अपने बच्चों से प्यार करता है तो कोई धन-सम्पत्ति से। कोई अपने शरीर से प्यार करता है तो कोई ज़मीन-जायदाद से, सम्पन्नता से, मान-प्रतिष्ठा और पुरस्कारों से। कोई प्रसिद्धि चाहता है तो कोई ज्ञान। किसी को खाने के प्रति प्रेम होता है तो किसी को अच्छे कपड़ों से लगाव होता है। हर इंद्री का अपना अलग प्रेम-भाव होता है और जब सारी इंद्रियों से यह प्रेम-भाव एक रूप होकर साईं के प्रति प्रेम बन जाये तो वह भक्ति हमें अपने मूल स्वरूप में स्थित कर देती है, अपने आप से मिलवा देती है।

बाबा भली कर रहे

24

मन के विकार मिटाते साईं

साईं नाम, साईं नाम, साईं जपिये।
काम, क्रोध, मद्, लोभ, मोह तजिये।।

ईश्वर क्या है? कहाँ रहता है? उसे कैसे पाया जा सकता है? वो हमें कहाँ मिलेगा? क्या कभी मिलेगा भी? ऐसे सैकड़ों प्रश्न हैं, जो हमें भीतर से व्याकुल करते रहते हैं। जब किसी बात से हमें डर लगता है, भय हमारे भीतर दौडने लगता है तब हमें ईश्वर की अधिक आवश्यकता होती है। मानों ईश्वर कोई रामबाण दवा हो, जो सारी समस्याओं को दूर करने का माद्दा रखता हो! वैसे यह सच भी है क्योंकि ईश्वर का स्मरण हमें भयमुक्त कर देता है। साईं का नाम लेने से ही नहीं, सोचने भर से हमारे सारे डर दूर हो जाते हैं। साईं हमारे दुःख-दर्द और डर को दूर करने के लिए ही तो अवतरित हुए थे। फिर हमारी उनसे इतनी अंतरंगता हुई कि वे हमारे बीच ही बस गए।

साईं अकसर अपने भक्तों से कहते थे और वचन भी दिया था कि मेरे बाद मेरी अस्थियाँ लोगों में ऊर्जा का संचार करेंगी। मेरे भक्तों का घर कभी अन्न और धन से खाली नहीं रहेगा। मेरी लीलाएं सुनने से उनके दिल में एक प्रकाश का उदय होगा और उनका जीवन सफ़ल हो जाएगा। साईं जब सशरीर हमारे साथ थे, तब तो उनका आशीर्वाद, मार्गदर्शन हमें मिलता ही रहा, अब जबकि वे सशरीर मौजूद नहीं हैं, तब भी वे हमारे ही अंदर विराजे हैं। वह सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञाता हैं। उन्हें अपने

अंदर ढूंढ़ना तभी संभव है जब हमारे अंदर दूसरों के लिए भी जगह हो। अगर हम यह सोचते रहे कि यह मैं तय करूंगा कि कौन मेरे मन में रहेगा और कौन नहीं, तो साईं क्या, कोई भी आपका अपना नहीं हो सकता।

जितना प्रबल हमारा अहंकार होता जायेगा, उतना ही मुश्किल अपने हृदय में साईं को बिठाना होता जायेगा। अहंकार दरअसल हमारा ही प्रत्यक्ष विस्तार होता है लेकिन हमारे मन-मस्तिष्क से बहुत ज़्यादा ताकतवर। हमारे सारे अस्तित्व पर छा जाता है और हमारे वजूद पर पूरा नियंत्रण कर लेता है।

हमारा अहंकार हमें वो होने का आभास दे देता है जो हम हैं ही नहीं। सारे फसाद की जड़ वही होता है। हमारे अन्दर इतनी जगह घेर लेता है कि हमारे अपनों के लिए हमारे अन्दर ही कोई जगह नहीं बचती। अपनी नज़र में हम इतने ताकतवर हो जाते हैं कि हमें लगता है कि दुनिया हम से ही शुरू और हम पर ही ख़त्म हो जाती है। ऐसी खुशफहमी हो जाती है कि दुनिया में हमें किसी की जरुरत नहीं पड़ेगी। दूसरों को नीचा देखने लगते हैं, स्वयं को बहुत ऊपर। कोई हमारे सामने टिकता नहीं दिखता। ज़बान में कड़वाहट और स्वर में कटुता आ जाती है। अपने ही साथ बहुत मज़ा आने लगता है और दूसरों का साथ खलल डालता है। पत्नी, बच्चे, माता-पिता, मित्र सब दूर होने लगते हैं और आख़िर में जब हमें अपनों के दूर हो जाने का अहसास होता है तब हम कितनी ही आवाज दें, अब वे उनको सुनाई नहीं देतीं। पश्चाताप में हाथ मलते रह जाते हैं लेकिन दिल से निकलते आंसू भी उन दूरियों को कम नहीं करते।

दरअसल, साईं की खासियत है कि वो हमें हमारी औकात से ज़्यादा देते हैं। वे हम पर इतनी कृपा करता है कि हम भूल जाते हैं कि दरअसल साईं हमारी परीक्षा ले रहे हैं। वो हमें और भी ज़्यादा देने से पहले परखना चाहता है कि हम उसकी कृपा के लायक है भी कि नहीं। इस परीक्षा में भी वो हमारी सहायता करता है, इशारे से सुझाता है। यह हम पर है कि हम उसका इशारा समझ सकें।

साईं को अपने मन में जगाना ही साईं को पाना है जो कुछ भी और पाने से बहुत ज़्यादा है। सवाल यह है कि वो तो देना चाहता है लेकिन क्या हम लेने के लिए तैयार हैं?

जैसे किसी घर में अँधेरा हो, तो मेहमान घंटी नहीं बजाते, वैसे ही जब मन में अहंकार भरा हो तो साईंनाथ नहीं आते।

तब की बात...

एक सज्जन थे। उनके पास बहुत पैसा था। उन्होंने कई तरीके अपनाकर अपना धन जोड़कर रखा था। एक बार वो शिर्डी के लिए निकले। वह कोपरगांव के स्टेशन पर उतरे और तांगे वाले से मोलभाव करने लगे- "मुझे शिर्डी जाना है और बाबा से ब्रह्मज्ञान लेकर तुरंत वापस भी लौटना है। तुम कितने पैसे लोगे?" दोनों के बीच मोल-भाव शुरू हुआ। इन महोदय ने तांगेवाले से कहा- "हम तीन घंटे वहाँ रुकेंगे, तब तक तुम भी वहीं ठहरना। तब तक मैं बाबा से ब्रह्मज्ञान ले लूंगा, फिर हम वापस लौट आएंगे।" तीन घंटे में ब्रह्मज्ञान? कितनी हैरानी वाली बात है न? ब्रह्मज्ञान कोई दुकान पर मिलने वाली वस्तु तो है नहीं कि गए और खरीद लाए! ब्रह्मज्ञान पाने के लिए ऋषि-मुनी घने और डरावने जंगलों, पहाड़ों, बर्फीली गुफाओं में बैठकर वर्षों तपस्या करते हैं, तब भी इसकी कोई निश्चितता नहीं होती कि उन्हें ब्रह्मज्ञान मिलेगा या नहीं! और ये महाशय तीन घंटे में बाबा से ब्रह्मज्ञान लेकर वापस लौटने की बात कह रहे थे! बड़ी दिलचस्प कहानी है। इंसान के पास जब बहुत पैसे आ जाते हैं, तो वह ईश्वर की तलाश में निकल जाते हैं। पैसों के अहंकार में वह उस ताकत का बोध खो देते हैं, जिसके कारण वे ईश्वर की तलाश में कई तीरथ घुम रहे थे, वह तो दरअसल उनके अंदर ही समाये हुए हैं।

कस्तूरी कुंडल बसे, मृग ढूँढे बन माही।
ऐसे घटी-घटी राम है, दुनिया देखे नाही।।

कस्तूरी मृग की नाभि में होती है, लेकिन उसकी खूशबू उसे इतना पागल बना देती है कि वह उसे जंगल में खोजता रहता है। ऐसा ही साईं के साथ है। वे हमारे अंदर विराजे होते हैं और हम उन्हें जगत भर में ढूंढते फिरते हैं।

यह सज्जन तांगे पर सवार होकर बाबा के पास पहुँचे और बोले– "बाबा मुझे ब्रह्मज्ञान चाहिए।" बाबा जानते तो सब हैं लेकिन दिखाते ऐसा है कि वह कुछ नहीं जानते। उन सज्जन की बात सुनकर बाबा खुश, एकदम खुश हुए। वे मुस्कराते हुए बोले– वाह! बहुत ख़ूब। मेरे पास तू पहला ऐसा व्यक्ति आया है, जो ब्रह्मज्ञान चाहता है। मेरे पास तो हर कोई कुछ न कुछ मांगने आता है लेकिन तूने तो सर्वोच्च चीज़ मांग ली। अच्छा तुम थोड़ी देर बैठो, हम अभी तुम्हें ब्रह्मज्ञान देते हैं।

इसके बाद बाबा अपने पास काम कर रहे एक छोटे से बच्चे को बुलाते हैं। फिर उससे कहते हैं कि– "बेटा जाओ, पड़ोस वाले मारवाड़ी के घर से जरा पांच रुपए तो ले आ।" बच्चा चला जाता है। बाबा को तो पता है कि मारवाड़ी तो घर पर है ही नहीं। उसके घर पे तो ताला लगा है। बच्चा वापस आकर कहता है– "बाबा वहां तो ताला पड़ा है।" बाबा फिर किसी और जगह उसे भेजते हैं। वहां भी वही हाल। फिर बाबा उसे एक तीसरी जगह भेजते हैं, तो वह बच्चा काफ़ी देर तक आता ही नहीं है।

इधर उन सज्जन यानी सेठजी का भी ब्लड प्रेशर बढ़ रहा था कि तांगे वाले से तो तीन घंटे की बात की थी। समय बढ़ेगा तो उसका किराया भी बढ़ जाएगा। वह व्याकुल होकर बाबा से कहते हैं– "बाबा देर है क्या बह्मज्ञान में अभी?" बाबा मुस्कुराकर कहते हैं– "सेठ, तू ब्रह्मज्ञान लेने आया है और इतना भी नहीं समझता कि मैंने उसे पांच रुपए लेने क्यों भेजा?" उन सज्जन ने हैरानी से जवाब दिया– 'नहीं बाबा!'

बाबा फिर सवाल करते हैं– "सेठ! तेरी जेब में तो पांच के पचास गुना रुपए पड़े हैं। तू अगर चाहता तो वह पांच रुपए मुझे यूँ ही दे देता लेकिन जब तुझसे वह पांच रुपए नहीं छूट रहे हैं, तो तू ब्रह्म का हाथ क्या

पकड़ेगा?" सेठ हड़बड़ाकर अपनी जेब से रुपए निकालकर गिनने लगता है। उसके पास से दस-दस के पच्चीस नोट याने पूरे 250 रुपए थे। बाबा को इस बात का पता था कि उनके इस भक्त की जेब में कितने रुपए पड़े हैं। फिर बाबा ने उसको समझाया- "देख भाई! तू ब्रह्म ज्ञान लेने आया है। पहली बात तो ईश्वर कहीं बसते नहीं, वह तो तेरे अंदर ही रहते हैं। दूसरा जब तक तेरे इन विकारों का कोई उपचार नहीं होगा तेरे पास से तेरी आसक्ति छूटेगी नहीं, तब तक ब्रह्मज्ञान मिल पाना मुश्किल है।"

साईं से सीधी सीख...

साईं में प्रीति याने अनासक्ति है, विरक्ति नहीं। साईं में प्रीति रखें। आसक्ति, अनासक्ति और विरक्ति तीनों में अंतर ऐसे भी समझा जा सकता है। कुछ लोग धन-दौलत को लेकर अपने भीतर इतना लालच पाल लेते हैं कि सोते-जागते, उठते-बैठते उन्हें हर वक्त पैसा हासिल करने का विचार आता रहता है। कहीं से भी और कैसे भी बस पैसा आना चाहिए। नाव जब तक पानी में रहे तब तक तो ठीक है। जब पानी नाव में आ जाता है तो नाव डूब जाती है। इसी तरह जब तक पैसा हमारी जेब में रहे तब तक तो ठीक है लेकिन जब हम दिन-रात पैसे के बारे में ही सोचते रहें तो परेशानी होना स्वाभाविक है।

जब यह भाव अंदर आता है, तो उसे आसक्ति कहते हैं। आसक्ति में व्यक्ति सिर्फ़ अपने भले की सोचता है। उसे दूसरों के सुख-दुःख से कोई सरोकार नहीं होता। अगर कोई बीमार-दुःखी, भूखा उसे दो रोटी, कुछ पैसे मांगे, तो वो नहीं देगा और मान लीजिए कि उसने दे भी दिए, तो हमेशा चिंतित रहेगा कि पता नहीं पैसा वापस मिलेगा कि नहीं। यानी चिंता उसके शरीर को खाये जा रही है, लेकिन उसे सिर्फ़ पैसे की पड़ी है।

जिस व्यक्ति को धन में अनासक्ति होती है, वो पैसे की उपयोगिता समझता है, उसका मूल्य समझता है। उसे पता होता है कि अगर वो धनी है, तो उसका पहला कर्तव्य है कि वो इन पैसों से दूसरों की भी मदद

करे। पैसों की तृष्णा से उसे कुछ हासिल नहीं होगा। उसे दुनिया से जाना तो अकेले ही है।

अगर लोग यह समझते हैं कि ईश्वर-प्राप्ति में धन बाधक है तो यह ग़लत है। यदि ईश्वर-प्राप्ति में कोई चीज़ बाधा बनती है तो वह है अनीति और अधर्म के रास्ते कमाया हुआ धन और उस कमाए हुए धन के प्रति आसक्ति। अधर्म से कमाया हुआ धन मन को संशयों में जीने को मजबूर कर देता है, असुरक्षा की भावना उठ खड़ी होती है, नींदें उड़ जाती है, स्वास्थ्य बिगड़ने लगता है, मनोभाव विकृत होने लगते हैं, संतान अय्याशी में पैसे उड़ाने लगती है, बेकार के काम में धन ख़र्च होने लगता है, तकलीफ़ देने वाली बीमारियों से जूझना पड़ता है। यह धन टिकता नहीं और अधर्म के रास्ते निकल जाता है।

स्वर्ण नगरी बनाने में कोई हर्ज़ नहीं है। स्वर्ण नगरी रावण की लंका भी थी और कृष्ण की द्वारका भी, लेकिन लंका में मर्यादा नहीं टिक पाई और जल कर ख़ाक हो गयी। वहीं द्वारका में तो सुदामा जैसे दीन-हीन व्यक्तियों का स्वागत था। उनके चरण कृष्ण स्वयं अपने हाथों पखारते और सम्मान देते थे। नीति का प्रश्न उठने पर द्वारका को कृष्ण ने ख़ुद ही जलमग्न कर दिया।

इस के विपरीत, धन यदि सही रास्तों और धर्म से कमाया है तो वह धन अपना रास्ता धर्म में ही ढूंढ लेगा। उस धन से स्कूल और विद्यार्जन के स्थानों का निर्माण होगा, धर्मशालाएं बनेंगी, अस्पताल और रोगोपचार केंद्र बनेंगे, निर्धन लोगों के लिए रोज़गार के नीतिगत साधन उपजेंगे, परमार्थ के कार्य संपन्न होंगे, प्रार्थना-स्थल बनेंगे। ऐसे धन की रक्षा के लिए रातों की नींद नहीं उड़ानी होगी, स्वास्थ्य ठीक रहता है, सोच सकारात्मक हो जाती है, संतान सुपात्र होती है और मन शांत रहता है। धन को धर्म के काम में ख़र्च करने से धन ही ख़र्च होता है, लक्ष्मी स्थाई रहती है। तुलसीदास ने भी लिखा हैः

तुलसी पंछिन के पिए, घटे न सरिता नीर।
धर्म किये धन न घटे, सहाय करे रघुबीर।।

लक्ष्मी के आगमन को अपने पूर्व में किये अच्छे कर्मों का प्रतिफल और ईश्वर की कृपा मानो। ऐसा मानने से हमें अहसास होता है कि जो भी धन हमारे पास है हम उसके मालिक नहीं बल्कि रखवाले हैं और उसका व्यय ठीक तरीके से करना चाहिए न कि उड़ाना चाहिए। उस धन को समय आने पर योग्य उद्देश्य के लिए व्यय करना ही ठीक होगा। नीतिगत रास्ते से खूब अधिक धन कमाने में भी कोई हर्ज़ नहीं है। हर्ज़ उस धन के प्रति आसक्ति रखने में है। जाल बुनने से कोई परहेज़ नहीं रखना चाहिए लेकिन जाल मकड़ी जैसा बुनो जो जब चाहे अपने बनाये जाल से निकल जाती है और रेशम का कीड़ा अपने बनाये जाल में ख़ुद फँस कर मर जाता है। मिठास का स्वाद लेना है तो गुड़ के ढेले पर बैठी मक्खी की तरह लो जिस पर से जब चाहो उड़ सको न कि शहद पर, जिसमें अपने पैर चिपक कर रह जाते हैं।

विरक्ति एकदम अलग चीज़ है। अगर आप धन को दुत्कारने लगें, अपने कर्मों के ज़रिये धन-दौलत अर्जित करना बंद कर दें, तो निश्चय ही यह कष्टकारी होगा। क्योंकि इससे न केवल आप का भरण-पोषण रुक जाएगा, बल्कि आपके घर-परिवार को भी खाने-पीने और अन्य कामों के लिए दूसरों के आगे हाथ फैलाने पर मजबूर होना पड़ेगा। इसलिए जिस चीज़ की जितनी ज़रूरत है, उतना भाव मन में होना चाहिए।

वैसे बहुत आसान है, जब कोई हमें उपदेश देता है। जब कोई कहता है कि काम, क्रोध, प्रीति, मोह सब छोड़ दो। अरे! फिर जियेंगे कैसे भाई? मनुष्य जीवन मिला है, तो क्रोध भी आएगा। किसी से झगड़ा भी होगा। दुःख भी होगा और ईर्ष्या भी यानी सब-कुछ होगा। यह कहना बहुत सरल है कि यह सब छोड़ दो तो भगवान मिल जाएंगे। मज़ा तो तब है जब यह सब हो और साईं जैसा सद्गुरु मिले, जो इनका स्वरूप बदल दे। हमारे अंदर काम, क्रोध, मोह सब रहे, लेकिन इनका स्वरूप बदल जाए, तो भी

हमें भगवान मिल जाएंगे।

जहाँ तक काम का प्रश्न है, जिस प्रकार शास्त्रों में दिया गया है, वैसा आचरण करना चाहिए। क्रोध भी आना चाहिए, लेकिन वह आना चाहिए अपनी कमियों और विसंगतियों पर। क्रोध किसी और पर नहीं बल्कि अपने पर करें। क्रोध रहना चाहिए, लेकिन उसका स्वरूप बदलना चाहिए। साईं किसी चीज़ को नष्ट नहीं करते, वह उसके स्वरूप का बदलाव करते हैं। साईं में जैसे-जैसे आपकी भक्ति बढ़ती जाएगी, आप दूसरों पर नहीं ख़ुद पर क्रोध करने लगेंगे। लेकिन यह क्रोध नकारात्मक की जगह सकारात्मक बन जाएगा। लोभ रखो, लेकिन इतना कि जिसमें आपका और आपके परिवार का ठीक से भरण-पोषण हो जाए। यदि लोभ बढ़ता भी है, तो उसे प्रभु नाम में लगा दो। प्रभु नाम का जितना लोभ रखोगे, उतना तुम आगे बढ़ते जाओगे। साईं-साईं बोलते जाओ।

मोह भी रखो, उस हर चीज़ से, जो तुम्हें पसंद है। लेकिन उस हद तक जहां तक तुम ख़ुद को संभाल सको। ऐसा नहीं होना चाहिए कि फलां चीज़ नहीं मिलने-गुमने या छीनी जाने पर तुम्हारे अंदर संसार से विरक्ति का भाव आ जाए। जैसे दुनिया में जीवन आने-जाने का क्रम चलता रहता है। हम अपनों से बेहद मोह करते हैं, लेकिन समय-असमय उनकी मृत्यु पर विलाप करते-करते संभल जाते हैं। ऐसा नहीं होना चाहिए कि फलां नहीं, तो मेरे जीने का क्या मकसद? ईश्वर ने सबको अलग-अलग मकसद से जीवन दिया है, इसलिए आप ईश्वर की अवहेलना न करें। यदि फिर भी मोह आए, तो उसे साईं के चरणों में समर्पित कर दो। ईर्ष्या भी रखो, पर कैसे रखोगे?

ईर्ष्या रखो हर उस बुरी चीज़ से जो तुम्हारे सामने आती है, लेकिन उससे आंखे मूंद मत लो। बाबा कितने सहज और सरल ढंग से हमारे मनोभावों को बदल देते हैं, यह उस व्यक्ति से पूछिए, जिसने कभी शिर्डी में काकड़ आरती यानी सबेरे की आरती देखी हो या उसमें शामिल रहा हो। जब सुबह की आरती पूर्ण होती है तो क्या-क्या भाव मन में पनपते हैं।

साईं से सीधी सीख...

साईं की काकड़ आरती में सम्मिलित होने का अवसर जब भी मिलता है, हर साईं-भक्त दोनों हाथों से उसे लपक लेता है। दिल में अनगिनत फरमाइशे लिए हम पुजारियों और सेवादारों को बाबा को निद्रा-लीला से जगाते देखते हैं लेकिन जो भाव उस समय उमड़ते हैं, जो खयाल मन में घुमड़ते हैं, वो मन धोने का काम करते हैं। काकड़ का व्यवहारिक मतलब होता है आपस में गुंथी हुई रस्सियाँ। हमारी फरमाइशे, मानो काम, क्रोध, मत्सर, मद को आपस में गूंथ कर काकड़ बनाया और वैराग्य का घी उसमे उड़ेल कर अपनी भक्ति की ज्योत जला दी हो।

उधर पुजारी-सेवादार साईं को स्नान करवाते समय बाबा की मूर्ति और उनकी समाधि पर गुलाब-जल मिश्रित पानी डालकर सांकेतिक स्नान की क्रिया में लीन होते हैं, यहाँ हमारे मन से वो दृश्य मैल हटाने का काम कर रहा होता है। साईं की मूर्ति और समाधि से जल की धारा जब नीचे रिस कर गिर रही होती है और सेवादार उसे समेटने के अथक प्रयास कर रहे होते हैं, जिससे किसी के पैर के नीचे वो जल ना आ जाए और उसका अपमान हो, हमारे मन से भी यहाँ हमारा गुज़रा हुआ कल बह कर निकल जाता है। हम उसे समेटने की कोशिश भी नहीं करते। मन से बदले की भावना क़ाफूर होने लगती है। हमारे अन्दर माफ़ी देने का भाव उत्पन्न होने लगता है। हम मन ही मन उन सबको माफ़ कर देते हैं जिनके कारण हमें कभी ना कभी दुःख पहुँचा है। दरअसल किसी को माफ़ करने से हम किसी और पर नहीं ख़ुद पर ही अहसान कर रहे होते हैं। दूसरों को माफ़ करके हम स्वयं हल्का महसूस करते हैं।

जब साईं की मूर्ति को साफ़ करके, उसे पोंछ कर बाबा का नख-शिख अष्टगंध से श्रृंगारित किया जाता है, तो उसके बाद बाबा को नए वस्त्र धारण करवाए जाते हैं तो ऐसे में मन में हूँक सी उठती है कि दुनिया के सारे वस्त्र साईं नाम को धारण करने के आगे गौण हैं और साईं नाम का आवरण ओढ़ने से हमारे आचरण में गजब का परिवर्तन

आ जाता है। साईं हमें बदलने लगते हैं।

वस्त्रार्पण के बाद जब साईं को पुजारी मुकुट पहनाते हैं तो जो उसकी आभा, छटा होती है, उसको देखकर, भले ही कुछ ही देर के लिए, हम अपने अहंकार से दूर हो जाते हैं। साईं का राजाधिराज वाला स्वरुप नज़र आने लगता हैं और हम उनके करोड़ों भक्तों में एक राज-कण के समान। मानो उस देव के आगे हमारी कोई औकात ही नहीं है और वाकई में हमारी है भी नहीं।

इन सबके बाद जब एक छोटी आरती, 'शिरडी माझे पंढरपुर।।' संपन्न होती है और दर्शन कतार प्रारम्भ होती है और जब चारों और से बाबा पर फूलों कि वर्षा होने लगती है तो लगता हैं मानो साईं ने हमें इन कुछ पलों में वो सब भी दे दिया जो हमने कभी उनसे माँगा ही नहीं था। मन में भक्ति की लहरें हिलोरे मारने लगती है। साईं के ऊपर से नज़रें हटाने को दिल नहीं करता। उनके सामने लोट-लोट कर भी दिल नहीं भरता। उसके बिना सब कुछ निरर्थक लगने लगता है। साईं से प्रेम हो जाता है। सुरक्षा गार्ड की 'पुढे चला' (आगे बढिए)' पुकार पर हम साई के चरणों में अपना मन समर्पित करके ही आगे बढ़ते हैं।

जब हम बाहर निकलते हैं तो द्वार पर खड़े सेवादार को हाथ में एक पतीली से चम्मच भर-भर कर मक्खन-मिश्री का प्रसाद देते सहज ही देखते हैं। वैष्णव परंपरा का विस्तार। हम सहज ही अपनी हथेली आगे बढ़ाते हैं और उस मक्खन-मिश्री के प्रसाद को हाथ में लेकर अधरों तक ले जाते हैं और उसके स्वाद से भर उठते हैं। मन की सारी कड़वाहट उस प्रसाद की मिठास में धुल सी जाती है। क्या है ये मक्खन-मिश्री? क्यों बांटते हैं इसे?

काकड़ आरती के दौरान हमारे मन का मैल धुल गया है और कुछ देर के लिए ही सही हम सौम्य, स्वच्छ और स्वस्थ हो जाते हैं। हमारा मन उस मक्खन के सदृश हो जाता है। नर्म, साफ़ और मन-माफिक आकार लेने वाला। यह मक्खन सदैव ऐसा ही रहना चाहिए। ताजा। बासी

मक्खन खट्टा हो जाता है, उसमें से बदबू आने लगती है। सदा अपने मन को मथते रहो, साईं के नाम से बिलोते रहो। मन सदा नया बना रहना चाहिए। आख़िर मक्खन का एक नाम नवनीत भी तो है। उसमें मिली जो मिश्री है वो है हमारी भक्ति, साईं में हमारी प्रीति। निर्लिप्त, निष्कलंक, निष्कपट, निष्काम- मीठी। साईं की मस्ती में हमने हमारा हृदय बिलो दिया होता है, मथ दिया होता है और उसमे भक्ति की मिश्री मिला कर साईं को अर्पण कर दिया होता है और उसके स्वाद से हमारा जीवन परिवर्तित होने लगता है।

यही है वो मक्खन-मिश्री का प्रसाद जो बार-बार ग्रहण करने से साईं हमारे और हम साईं के हो जाते हैं।

बाबा भली कर रहे

25

ऋण चुकाकर मुक्त हो जाओ

लेकर तुझसे साईं, दस गुणा लौटाये।
उसकी एक नज़र से, पाप तेरे कटे जायें।।

जैसा कि इस बारे में हम पहले भी चर्चा कर चुके हैं। 1908 के बाद जब बाबा की ख्याति बढने लगी, तो बाबा ने यकायक लोगों से दक्षिणा माँगना शुरू कर दिया। जो बाबा के आलोचक थे, वह कहते थे कि क्या एक संत को शोभा देता है दक्षिणा लेना? लेकिन इन आलोचनाओं को जवाब भी मिल जाता था। कहते हैं, शाम तक बाबा की झोली में इतनी दक्षिण इकट्ठा हो जाती थी, जितनी अहमदनगर ज़िले के कमिश्नर की रैवेन्यू नहीं होती थी। याने उससे भी ज़्यादा दक्षिणा बाबा की झोली में एक दिन में आती थी, लेकिन उसके बाद भी रात में बाबा की झोली खाली कि खाली! कैसे?

मज़ेदार किस्सा है। इस बात की गुत्थी सुलझाने और बाबा पर टैक्स लगाने इनकम टैक्स आफ़िसर शिर्डी पहुँचे। वह कई दिनों तक वहां डेरा डालकर देखते रहे कि आख़िर बाबा इतने पैसों का करते क्या हैं? कई बार तो एक ही दिन में बाबा के पास हज़ारों की दक्षिणा आ जाती थी, लेकिन शाम को उनके पास एक धेला भी नहीं बचता था। कभी वह तात्या को, तो कभी लक्ष्मीबाई को, कभी जमली को, कभी बड़े बाबा को तो अकसर श्रद्धालुओं को सारा धन दे देते। लक्ष्मीबाई को तो उन दिनों रोज़ चार रुपए देने का उनका नियम था। तात्या को तो कभी-कभी 100

रुपये इकट्ठे दे दिया करते थे। बाबा के कई सारे ऐसे छोटे-छोटे भक्त थे। यूँ समझे कि जिनके पास ज़्यादा है, वह बाबा को चढ़ा कर जाते थे और जिनके पास कम होता था, बाबा उनको दे दिया करते थे। ख़ुद सामने से माँगते थे बाबा और कई बार नहीं भी माँगते थे। कई बार यदि भक्त की अनिच्छा उन्हें पहले से पता चल जाए, तो फिर वह कभी नहीं माँगते थे। देने वाले को भी बाबा से आशीर्वाद मिलता और नहीं देने वाले को भी। नहीं देने वाले के प्रति साईं ने कभी बैर-भाव नहीं रखा। उनका दर सबकी झोलियाँ भरता था और आज भी भरता है।

हमारे शास्त्रों में वर्णित है कि देव और संत के दर्शन के समय मुद्रार्पण हमेशा करना चाहिए। इसके पीछे तर्क हो सकता है कि धन अर्जित करते समय हमसे किसी का नुकसान हुआ हो या किसी का दिल जाने- अनजाने दुखाया हो तो उसका प्रायश्चित हम देव अथवा संत को इस प्रकार मुद्रार्पण से कर सकते हैं। संत तो दक्षिणा पर ही आश्रित होते हैं। उनका न कोई जीविकोपार्जन का साधन होता है और न ही कोई घर परिवार और इसीलिए उनके जीवन-यापन की जवाबदारी हम गृहस्थों पर होती है।

तब की बात...

काका महाजनी के जो सेठ थे, वह गुजराती ठक्कर भाई थे। काका तो बाबा के परमभक्त थे लेकिन उनके सेठ कुछ विचित्र तरह के थे। विचित्र इस मायने में कि वे बाबा को बहुत-ज़्यादा मानते नहीं थे। सेठ के अहंकार को तोड़ने के लिए एक बार साईं ने उन्हें अपनी ओर खींच लिया। उन्हें शिर्डी आने के लिए बाध्य कर दिया। सेठजी अनमने मन से काका महाजनी के साथ शिर्डी पहुँचे। वे दोनों बाबा के पास बैठे थे, तभी किसी एक भक्त ने बाबा को मुनक्के चढ़ाए। बाबा ने वो मुनक्के काका महाजनी और ठक्कर भाई को खाने के लिए दिए। सेठजी को बीज वाले मुनक्के बिल्कुल पसंद नहीं थे। उन्होंने बाबा पर सवाल उठाते हुए काका

महाजनी से कहा- बाबा तो अन्तर्यामी है। फिर तो उन्हें पता होना चाहिए था कि मुझे बीज वाले मुनक्के बिलकुल भी पसंद नहीं है। इधर, सेठजी बाबा पर सवाल उठा रहे थे और उधर बाबा सेठजी के मन में क्या चल रहा है, उसे पढ़ रहे थे।

बाबा ने मुस्कुराते हुए तुरंत अपने एक सेवक को बुलाया और कहा कि जो मुनक्के बचे हुए हैं, उन्हें भी भक्तों में बांट दो। सेठजी के हिस्से में भी कुछ मुनक्के आए लेकिन उन्हें यह जानकर आश्चर्य हुआ कि इस बार उनमें बीज नहीं थे। सेठजी के मन में फिर से संशय पैदा हुआ कि हो सकता है कि यह संयोग हो? उन्होंने सोचा कि अबकी बार जो मुनक्के बांटे जाएं, तो शुरुआत काका महाजनी से हो। अगर ऐसा होता है, तब यह साबित होगा कि बाबा किसी के मन की बात पढ़ लेते हैं, वे अन्तर्यामी हैं।

सेठजी ने देखा, ऐसा हुआ भी। सेठजी का अहंकार क़ाफूर हो गया। वे शर्मिंदा होकर बाबा के चरणों में गिर पड़े और बाबा को यथेष्ट दक्षिणा अर्पित की।

ऐसा ही एक किस्सा और भी है। यह भी काका महाजनी के दोस्त से जुड़ा हुआ है, जो निराकार ब्रह्म को पूजते थे। वह कहते थे- मैं उस ईश्वर को मानता हूँ, जिसका कोई स्वरूप नहीं है। कोई निश्चित आकार नहीं है, इसलिए मैं साईं बाबा के पास नहीं जाऊंगा। काका महाजनी ने कहा- चलो भई, यूं ही घूमने चले चलो। इस बहाने हम दोनों दोस्त कुछ दिन साथ रह लेंगे। वह बोला- चलो, ठीक है। तुम्हारे कहने पर मैं चल सकता हूँ, लेकिन मेरी दो शर्तें हैं। एक तो मैं साईं को नमस्कार नहीं करूंगा और दूसरा कोई दक्षिणा नहीं दूंगा।

काका महाजनी के उस दोस्त ने सुन रखा था कि बाबा किसी से भी सामने से दक्षिणा माँग लेते हैं। ये सज्जन काका के कहने पर शिर्डी पहुँचे। जैसे ही दोनों ने मस्ज़िद के अंदर पाँव रखा उनके कानों में आवाज आई- आओ श्रीमान कैसे हो? काका के मित्र यह आवाज सुनकर एकदम चकित

रह गए क्योंकि वो उनके स्वर्गवासी पिता की आवाज से मिलती-जुलती थी। काका महाजनी के दोस्त तो यह आवाज सुनकर अपनी सुध-बुध खो बैठे और बाबा के चरणों में गिर पड़े। बाबा को नमस्कार करके पहली शर्त उन्होंने ख़ुद ही तोड़ दी।

जब दोनों मस्ज़िद से वापस लौटने को हुए, तो बाबा ने काका से तो दक्षिणा ले ली लेकिन उनके मित्र से नहीं ली। काका के दोस्त ने हैरानी से बाबा से सवाल किया- आपने मुझसे दक्षिणा क्यों नहीं ली? बाबा ने मुस्कुराते हुए जवाब दिया- जब तुम्हारी इच्छा ही नहीं थी, फिर तुमसे दक्षिणा कैसे ले सकता था? यह सुनकर काका का दोस्त भाव-विभोर होकर बाबा के चरणों में फिर से गिर पड़ा और दक्षिणा देकर ही रवाना हुआ।

तब की एक और बात...

गणपतराव बोडस मराठी रंगमंच के प्रख्यात अभिनेता थे। उन्होंने कई सफ़ल नाटक मराठी रंगमंच को दिए। एक बार बाबा ने उनसे दक्षिणा माँगी और फिर माँगते ही चले गए। गणपतराव भी देते रहे और अपना पूरा पर्स बाबा के सामने उड़ेलकर रख दिया। गणपतराव ने वर्षों बाद किसी से कहा कि उस दिन के बाद जीवन में उन्हें पैसे की कभी कमी नहीं हुई।

साईं से सीधी सीख...

बाबा संत भी थे और राजाधिराज भी थे। वह भक्तों से कहते थे- मैं तुम लोगों से दक्षिणा नहीं माँग रहा हूँ, बल्कि यह मस्ज़िद अपना उधार तुमसे माँग रही है। इसीलिए मैं तुम सबसे दक्षिणा लेकर तुम्हें ऋण-मुक्त कर रहा हूँ। अब मैं तुम्हारा ऋणी हो जाऊंगा और उसका दस गुना तुम्हें लौटा दूंगा। बाबा ऐसा करते भी थे। जिससे वो जितना लेते थे, उसे कई गुना ज़्यादा लौटाते भी थे। साईं के भक्तों ने हमेशा महसूस किया है कि किसी गरीब की मदद करने में, किसी भूखे को भोजन कराने में, किसी निराश्रित का इलाज कराने में, किसी ज़रूरतमंद को पुस्तकें खरीद कर

देने में और ऐसे ही सच्चे परमार्थी कार्यों में जो धन खर्च किया जाता है उसका कई गुणा वापिस मिलता है। इसे साईं की कृपा समझें कि हमें वो अपनी औकात से ज़्यादा और हमारी ज़रूरत के मुताबिक नवाज़ता रहता है। धर्म के काम करने से धन कभी नहीं घटता है बल्कि दुआओं के असर से हम पर रक्षा कवच चढ़ा देता है।

बाबा भली कर रहे